



MSW-106

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

श्रम कल्याण और
मानव संसाधन प्रबंधन

खण्ड -1 व्यापार संघ और औद्योगिक संबंध 3-70

इकाई-1 व्यापार संघ की अवधारणा एवं उद्देश्य	5-14
इकाई-2 व्यापार संघ नेतृत्व और कार्य	15-26
इकाई-3 व्यापार संघ का ऐतिहासिक विकास	27-38
इकाई-4 औद्योगिक संबंध की अवधारणा और उद्देश्य	39-44
इकाई-5 औद्योगिक संबंधों के प्रभावी कारण	45-52
इकाई-6 औद्योगिक विवाद	53-72

खण्ड -2 श्रम कल्याण और सामूहिक सौदेबाजी 71-154

इकाई-7 श्रम कल्याण का दर्शन	73-84
इकाई-8 श्रम कल्याण के सिद्धांत	85-116
इकाई-9 भारत में श्रम कल्याण के कार्यक्रम	117-130
इकाई-10 सामूहिक सौदेबाजी के उद्देश्य	131-140
इकाई-11 सामूहिक सौदेबाजी के प्रकार	141-156

खण्ड -3 औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 155-223

इकाई-12 औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947	157-164
इकाई-13 औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946	165-174
इकाई-14 श्रम संघ अधिनियम 1926	175-192
इकाई-15 व्यक्तिगत क्षति प्रतिकर बीमा अधिनियम 1963	193-208
इकाई-16 मातृत्व लाभ अधिनियम 1961	209-224



MSW-106

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

श्रम कल्याण और
मानव संसाधन प्रबंधन

खण्ड -1

व्यापार संघ और औद्योगिक संबंध

- इकाई-1 व्यापार संघ की अवधारणा एवं उद्देश्य
- इकाई-2 व्यापार संघ नेतृत्व और कार्य
- इकाई-3 व्यापार संघ का ऐतिहासिक विकास
- इकाई-4 औद्योगिक संबंध की अवधारणा और उद्देश्य
- इकाई-5 औद्योगिक संबंधों के प्रभावी कारण
- इकाई-6 औद्योगिक विवाद

MSW-106 श्रम कल्याण एवं मानव संसाधन प्रबंध

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति — प्रो० सीमा सिंह, माननीय कुलपति, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

- | | |
|------------------------|---|
| 1. प्रो. सन्तोषा कुमार | निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा,
उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज— अध्यक्ष |
| 2. प्रो. अनूप भारतीय, | समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य |
| 3. डॉ. सन्दीप गिरी, | समाज कार्य विभाग. महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी —सदस्य |
| 4. डॉ. रोहित मिश्रा, | समाज कार्य विभाग विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य |
| 5. डॉ. रुपेश सिंह, | डॉ. शकुन्तला मिश्रा विकलांग विश्वविद्यालय, लखनऊ—सदस्य |
| 6. डॉ. अलका वर्मा, | असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ.प्र.रा.ट. मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज —सचिव |

परिभाषक

प्रो० विवेक सिंह, समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज

सम्पादक

प्रो० विवेक सिंह, समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज

समन्वयक —

डॉ. अलका वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर,
समाज कार्य, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक —

- | | | |
|---------|-----------------|---|
| खण्ड..1 | श्री मनीष सिंह, | असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज |
| खण्ड..2 | श्री मनीष सिंह, | असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य,
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज |
| खण्ड..3 | डॉ० दिनेश सिंह, | असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य, अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या |

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. - 978-81-19530-65-3

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध कराई गई हैं। विश्वविद्यालय, इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं हैं।

प्रकाशन— विनय कुमार, कुलसचिव, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2023।

मुद्रक— चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा० लि०, 42/7 जवाहर लाल नेहरू रोड, प्रयागराज—211002

इकाई 1 - व्यापार संघ की अवधारणा एवं उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

- 1.0 इकाई का उद्देश्य
- 1.1 परिचय
- 1.2 व्यापार संघ की अवधारणा
- 1.3 व्यापार संघ: अर्थ एवं परिभाषा
- 1.4 व्यापार संघ के उद्देश्य
- 1.5 सारांश
- 1.6 परिभाषिक शब्दावली
- 1.7 संदर्भित पुस्तकें
- 1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.0 उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण के दर्शन पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग श्रम कल्याण के निम्नलिखित पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे -

- व्यापार संघ की अवधारणा को जान सकेंगे;
- व्यापार संघ की विभिन्न परिभाषाओं से अवगत हो सकेंगे
- व्यापार संघ के विभिन्न उद्देश्यों को समझ सकेंगे।

1.1 परिचय

मिक संघ श्रम संबंधों के दायरे में और श्रमिकों के अधिकारों की सुरक्षा में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह अध्याय ट्रेड यूनियनों की अवधारणा और उद्देश्यों की गहन खोज प्रदान करता है, उनके महत्व और काम की दुनिया में योगदान पर प्रकाश डालता है।

अध्याय ट्रेड यूनियनों की अवधारणा को स्पष्ट करने से शुरू होता है, श्रमिकों या कर्मचारियों के संगठित संघों के रूप में उनकी भूमिका को उजागर करता है जो सामूहिक रूप से उनके अधिकारों और हितों का प्रतिनिधित्व और वकालत करने के लिए गठित होता है। यह ट्रेड यूनियनों के ऐतिहासिक संदर्भ की पड़ताल करता है, श्रम शोषण की प्रतिक्रिया और सामूहिक सौदेबाजी की शक्ति की आवश्यकता के रूप में उनकी उत्पत्ति और विकास का पता लगाता है। यह अध्याय उन कानूनी ढांचों और संरचनाओं की भी पड़ताल करता है जो विभिन्न न्यायालयों में ट्रेड यूनियनों को संचालित करते हैं।

इसके अलावा, अध्याय ट्रेड यूनियनों के उद्देश्यों की जांच करता है। यह ट्रेड यूनियनों के मुख्य उद्देश्यों को रेखांकित करता है, जिसमें श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करना, काम करने की स्थिति में सुधार करना, उचित वेतन और लाभ पर बातचीत करना और कार्यस्थल स्वास्थ्य और सुरक्षा सुनिश्चित करना शामिल है। अध्याय इस बात की

पड़ताल करता है कि कैसे ट्रेड यूनियन काम की सुरक्षा हासिल करने, समानता को बढ़ावा देने और श्रमिकों के हितों की वकालत करके और सामूहिक कार्रवाई में संलग्न होकर सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने का प्रयास करते हैं।

1.2 व्यापार संघ की अवधारणा

एक ट्रेड यूनियन की अवधारणा विभिन्न उद्योगों या क्षेत्रों के श्रमिकों या कर्मचारियों से मिलकर एक संगठित संघ के गठन के इर्द-गिर्द घूमती है। ट्रेड यूनियनों की स्थापना उनके सदस्यों के अधिकारों, हितों और कल्याण के लिए सामूहिक रूप से प्रतिनिधित्व करने और उनकी वकालत करने के प्राथमिक उद्देश्य के साथ की जाती है।

ट्रेड यूनियन श्रमिकों की आवाज के रूप में कार्य करते हैं, उन्हें रोजगार से संबंधित विभिन्न मामलों पर नियोक्ताओं या प्रबंधन के साथ बातचीत करने के लिए एक मंच प्रदान करते हैं। वे एकता और सामूहिक कार्रवाई की ताकत का लाभ उठाकर नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच शक्ति की गतिशीलता को संतुलित करना चाहते हैं। सामूहिक सौदेबाजी के माध्यम से, ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों के लिए उचित वेतन, बेहतर कामकाजी परिस्थितियों, बेहतर लाभ, नौकरी की सुरक्षा और कार्यस्थल स्वास्थ्य और सुरक्षा उपायों को सुरक्षित करने का प्रयास करते हैं।

ट्रेड यूनियनों के मूलभूत उद्देश्यों में से एक श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करना और उन्हें बढ़ावा देना है। इसमें कार्यस्थल में अनुचित श्रम प्रथाओं, भेदभाव और अन्यायपूर्ण व्यवहार के खिलाफ सुरक्षा शामिल है। ट्रेड यूनियन श्रम कानूनों और विनियमों के प्रवर्तन और विकास की भी वकालत करते हैं जो श्रमिकों के अधिकारों का समर्थन करते हैं और उनकी भलाई सुनिश्चित करते हैं।

ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों और व्यापक श्रमिक वर्ग के सामाजिक-आर्थिक हितों को आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे आय समानता, सामाजिक न्याय और श्रमिकों के जीवन स्तर में समग्र सुधार की वकालत करके एक अधिक न्यायसंगत समाज बनाने की कोशिश करते हैं। ट्रेड यूनियन अक्सर सार्वजनिक नीति को प्रभावित करने, सामाजिक सुधारों को बढ़ावा देने और श्रमिकों को प्रभावित करने वाले व्यापक सामाजिक मुद्दों को संबोधित करने के लिए सामाजिक और राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न होते हैं।

इसके अतिरिक्त, ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों को कानूनी प्रतिनिधित्व, प्रशिक्षण और शिक्षा, करियर विकास सहायता और श्रम विवादों या संघर्षों के दौरान सहायता सहित कई प्रकार की सेवाएं प्रदान करते हैं। वे श्रमिकों के बीच एकजुटता और भाईचारे की भावना को बढ़ावा देते हैं, एक सामूहिक पहचान को बढ़ावा देते हैं और व्यक्तिगत सदस्यों के लिए एक सहायता प्रणाली प्रदान करते हैं।

कुल मिलाकर, एक ट्रेड यूनियन की अवधारणा सामूहिक संगठन और श्रमिकों के प्रतिनिधित्व के इर्द-गिर्द घूमती है ताकि उनके अधिकारों की रक्षा की जा सके, उनके हितों को आगे बढ़ाया जा सके और काम करने की बेहतर स्थिति और सामाजिक-आर्थिक कल्याण की वकालत की जा सके। ट्रेड यूनियन श्रम संबंधों में एक महत्वपूर्ण शक्ति के रूप में कार्य करते हैं, निष्पक्ष और समान रोजगार संबंधों की स्थापना में योगदान करते हैं और श्रम कानूनों और सामाजिक परिवर्तनों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

1.3 व्यापार संघ: अर्थ एवं परिभाषा

एक ट्रेड यूनियन एक ही ट्रेड, फर्म, कंपनी या उद्योग के कर्मचारियों द्वारा अपने नियोक्ता के शोषण से अपने अधिकारों, वेतन और काम करने की स्थिति की रक्षा के लिए गठित एक समूह है। लगभग हर पेशे, उद्योग और संगठन की अपनी यूनियनें हैं। उदाहरणों में नर्स संघ, शिक्षक संघ, चालक संघ, श्रमिक संघ और वकील संघ शामिल हैं। वे प्रबंधन के तहत काम नहीं करते हैं, लेकिन यूनियनों के पास श्रमिकों की ओर से किसी भी नियम और शर्तों को स्वीकार या अस्वीकार करने की शक्ति है।

ट्रेड यूनियन किसी भी श्रमिक विरोधी नीति को लागू करने से प्रबंधन को विफल करने का एक उपकरण है। यह कार्यकर्ता और प्रबंधन के बीच एक सेतु का काम भी करता है। यह नीतिगत निर्णयों और आपत्तियों को श्रमिकों से और उनसे अवगत कराता है। यद्यपि प्रत्येक संघ स्वायत्त है, प्रबंधन के साथ उनके सामूहिक सौदेबाजी समझौते के बिना प्रबंधन कर्मचारी-संबंधी नीति को लागू नहीं कर सकता।

संयुक्त राज्य अमेरिका और यूनाइटेड किंगडम जैसे कई देशों में श्रमिक संघों को कानूनी दर्जा दिया गया है। इसका अर्थ है कि नियोक्ताओं को एक निश्चित अवधि के लिए कानूनी रूप से बाध्यकारी संघ समझौता, अर्थात् सामूहिक सौदेबाजी समझौता करना चाहिए। ये समझौते कल्याणकारी उपायों, भत्तों और कर्मचारियों की कार्य स्थितियों से संबंधित हैं।

एक संगठन में नैतिक और अनुशासित कार्यकर्ताओं के लिए यूनियन भी जिम्मेदार हैं। इसलिए, संघ या संगठन की आचार संहिता का उल्लंघन करते पाए जाने पर संघ कोई भी अनुशासनात्मक कार्रवाई कर सकता है। ट्रेड यूनियनों को विभिन्न देशों के विभिन्न कानूनों के तहत अलग-अलग तरीके से शासित किया जाता है। सभी श्रमिक संघ उस स्थान के श्रम कानूनों के तहत उन्हें दी गई शक्ति के अनुसार कार्य करते हैं। यूनियनों को कानून द्वारा प्रदत्त शक्ति उन्हें श्रमिक-समर्थक समझौतों पर बातचीत करने और प्रबंधन के श्रमिक-विरोधी कार्यों का विरोध करने के लिए पर्याप्त सौदेबाजी की शक्ति प्रदान करती है।

ट्रेड यूनियन सदस्यता प्राप्त करने के लिए प्रत्येक नए कर्मचारी को एक निश्चित शुल्क देना पड़ता है। संघ को मजबूत करने के लिए चुनाव, सामाजिक कार्यों और गतिविधियों के संचालन के लिए संघ अपने सदस्यों से वार्षिक योगदान भी लेता है। इसके कई अन्य समान कार्य हैं।

जी.डी.एच. कोल (G.D.H. Cole) के अनुसार, श्रम संबंधों के एक प्रसिद्ध विद्वान, "एक ट्रेड यूनियन एक या एक से अधिक व्यवसायों में श्रमिकों का एक संघ है, जो मुख्य रूप से श्रमिकों और नियोक्ताओं के बीच या आपूर्ति पर प्रतिबंधात्मक शर्तों को लागू करने के उद्देश्य से श्रमिकों के बीच संबंधों को विनियमित करने के उद्देश्य से बनाया गया है। किसी भी नियोक्ता या नियोक्ताओं के समूह को श्रम का।

एक प्रमुख औद्योगिक संबंध विद्वान, **एलन फ़्लैंडर्स (Alan Flanders)** के शब्दों में, "एक ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक हितों को बढ़ावा देने, उनकी रक्षा करने और सामूहिक कार्रवाई के माध्यम से सुधार करने के लिए गठित श्रमिकों का एक संगठन है।"

एचएल कुमार (HL Kumar), "भारत में औद्योगिक संबंध" पुस्तक में: "एक ट्रेड यूनियन सामूहिक सौदेबाजी और सामूहिक कार्रवाई द्वारा अपने हितों की रक्षा और बढ़ावा देने के लिए गठित श्रमिकों का एक संगठन है।"

ए.के. खेड़ा (A.K. Khera), "भारत में औद्योगिक संबंध: पाठ और मामले" पुस्तक में: "एक ट्रेड यूनियन सामूहिक कार्रवाई के माध्यम से अपने सदस्यों के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक हितों की रक्षा और उन्नति के लिए गठित श्रमिकों का एक स्वैच्छिक संघ है।"

वी.आर. ठाकुर (V.R. Thakur), "इंडस्ट्रियल रिलेशंस, ट्रेड यूनियन्स एंड लेबर लेजिस्लेशन इन इंडिया" पुस्तक में: "एक ट्रेड यूनियन सामूहिक सौदेबाजी और पारस्परिक सहायता द्वारा अपने सामान्य हितों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के लिए गठित कर्मचारियों का एक संगठन है।"

माइकल गोल्ड (Michael Gould) ने अपनी पुस्तक "थ्योरीज़ ऑफ़ इंडस्ट्रियल रिलेशंस" में एक ट्रेड यूनियन को "अपने रोज़गार की स्थितियों को बनाए रखने या सुधारने के उद्देश्य से वेतन पाने वालों का एक सतत संघ" के रूप में परिभाषित किया है।

औद्योगिक संबंधों के क्षेत्र में एक प्रमुख शोधकर्ता **रिचर्ड हाइमन (Richard Hyman)** के अनुसार, "एक ट्रेड यूनियन एक ऐसा संगठन है जिसमें मुख्य रूप से कर्मचारी होते हैं, जो नियोक्ताओं से स्वतंत्र होता है, स्वशासी होता है, और अपने सदस्यों के हितों के प्रचार और संरक्षण के लिए समर्पित होता है।"

जॉन टी. डनलप (John T. Dunlap), एक प्रभावशाली अर्थशास्त्री और श्रमिक विद्वान, एक ट्रेड यूनियन को "एक संगठन या श्रमिकों के संयोजन के रूप में परिभाषित करते हैं, जो मजदूरी, लाभ और रोज़गार की शर्तों के संबंध में अपने सदस्यों के हितों को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से बनाया गया है।"

डेल योडर (Dale Yoder) के अनुसार, "एक ट्रेड यूनियन कर्मचारियों का एक सतत, दीर्घकालिक संघ है, जो उनके कामकाजी संबंधों में सदस्यों के हितों को आगे बढ़ाने और उनकी रक्षा करने के विशिष्ट उद्देश्य के लिए बनाया और बनाए रखा जाता है।"

ट्रेड यूनियन अधिनियम (Trade Unions Act), 1926 के अनुसार, एक ट्रेड यूनियन को "किसी भी संयोजन के रूप में परिभाषित किया गया है, चाहे वह अस्थायी या स्थायी हो, मुख्य रूप से श्रमिकों और नियोक्ताओं के बीच या प्रतिबंधात्मक शर्तों को लागू करने के लिए श्रमिकों के बीच संबंधों को विनियमित करने के उद्देश्य से बनाया गया हो। किसी भी व्यापार या व्यवसाय के संचालन पर और इसमें दो या दो से अधिक ट्रेड यूनियनों का कोई भी संघ शामिल है।"

भारतीय श्रम सम्मेलन (Indian Labor Conference) एक ट्रेड यूनियन को परिभाषित करता है, "सामूहिक कार्रवाई के माध्यम से अपने सदस्यों के सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक हितों को बढ़ावा देने, उनकी रक्षा करने और सुधार करने के लिए गठित श्रमिकों का एक संगठन।"

ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC), एक ट्रेड यूनियन को "मजदूरी कमाने वालों का एक संगठन, जो कामगार वर्ग के हितों की रक्षा, प्रचार और सुरक्षा के लिए और बेहतर मजदूरी, काम की बेहतर स्थिति और बेहतर सामाजिक सुरक्षा और सांस्कृतिक जीवन के लिए गठित किया गया है" के रूप में परिभाषित करता है। "

सेंटर ऑफ़ इंडियन ट्रेड यूनियन्स (CITU), एक ट्रेड यूनियन को "श्रमिकों का एक संगठन, जो कामगार वर्ग के हितों की रक्षा करने, बढ़ावा देने और आगे बढ़ाने और बेहतर वेतन, बेहतर कार्य स्थितियों और सामाजिक न्याय को सुरक्षित करने के लिए गठित किया गया है" के रूप में परिभाषित करता है।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO), एक ट्रेड यूनियन को "सामूहिक कार्रवाई के माध्यम से अपने सदस्यों के हितों को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा करने के लिए स्थापित श्रमिकों या नियोक्ताओं या दोनों से युक्त एक संगठन" के रूप में परिभाषित करता है।

यूरोपीय ट्रेड यूनियन परिसंघ (ETUC), एक ट्रेड यूनियन को "श्रमिकों का एक स्वतंत्र, लोकतांत्रिक संगठन है जो सामूहिक रूप से श्रमिकों के अधिकारों और हितों की रक्षा करने और बढ़ावा देने और काम करने और रहने की स्थिति में सुधार करने के लिए कार्य करता है" के रूप में परिभाषित करता है।

1.4 व्यापार संघ के उद्देश्य

ट्रेड यूनियनों के उद्देश्य विशिष्ट संदर्भ और प्रत्येक यूनियन की प्राथमिकताओं के आधार पर भिन्न हो सकते हैं। हालाँकि, कुछ सामान्य उद्देश्य हैं जिन्हें ट्रेड यूनियन आमतौर पर हासिल करना चाहते हैं। इन उद्देश्यों में शामिल हैं:

- 1. श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा:** ट्रेड यूनियनों के प्राथमिक उद्देश्यों में से एक श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करना है। इसमें उचित वेतन, सुरक्षित काम करने की स्थिति, उचित काम के घंटे, और भेदभाव और अनुचित व्यवहार से सुरक्षा की वकालत करना शामिल है।
- 2. सामूहिक सौदेबाजी:** सामूहिक सौदेबाजी के माध्यम से बेहतर वेतन, लाभ और काम करने की स्थिति सुरक्षित करने के लिए ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों की ओर से नियोक्ताओं के साथ बातचीत करने का प्रयास करते हैं। उनका उद्देश्य निष्पक्ष और न्यायसंगत रोजगार शर्तों को प्राप्त करना है और यह सुनिश्चित करना है कि कार्यस्थल नीतियों और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में श्रमिकों का कहना है।
- 3. काम करने की स्थिति में सुधार:** ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों की समग्र कामकाजी परिस्थितियों में सुधार लाने की दिशा में काम करते हैं। इसमें कार्यस्थल सुरक्षा, स्वास्थ्य विनियम, पर्याप्त विश्राम विराम और उपयुक्त अवकाश नीतियों जैसे मुद्दों को संबोधित करना शामिल है।
- 4. नौकरी की सुरक्षा:** ट्रेड यूनियनों का उद्देश्य उन नीतियों और उपायों की वकालत करके श्रमिकों की नौकरी की सुरक्षा की रक्षा करना है जो मनमानी बर्खास्तगी, छंटनी या अनुचित बर्खास्तगी को रोकते हैं। वे रोजगार की स्थिरता और छंटनी या अतिरेक के लिए उचित नोटिस अवधि के लिए बातचीत कर सकते हैं।
- 5. सामाजिक कल्याण को बढ़ाना:** ट्रेड यूनियन अक्सर व्यापक सामाजिक मुद्दों को उठाते हैं और सामाजिक कल्याण उपायों की वकालत करते हैं जो न केवल उनके सदस्यों बल्कि बड़े समुदाय को भी लाभान्वित करते हैं। इसमें बेहतर स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, आवास और सामाजिक सुरक्षा के अभियान शामिल हो सकते हैं।
- 6. समानता और विविधता को बढ़ावा देना:** ट्रेड यूनियन कार्यस्थल में समानता और विविधता को बढ़ावा देने की दिशा में काम करते हैं, लिंग, जाति, धर्म या अक्षमता जैसे कारकों के आधार पर भेदभाव के खिलाफ लड़ते हैं। उनका उद्देश्य समावेशी कार्य वातावरण बनाना है जो विविधता को महत्व देता है और सभी के लिए समान अवसर प्रदान करता है।

7. **कौशल विकास और प्रशिक्षण:** ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों के ज्ञान और क्षमताओं को बढ़ाने के लिए कौशल विकास कार्यक्रम, प्रशिक्षण सत्र और शैक्षिक अवसर प्रदान कर सकते हैं। उनका उद्देश्य श्रमिकों को करियर में उन्नति के लिए आवश्यक कौशल के साथ सशक्त बनाना और बदलते कार्य वातावरण के अनुकूल बनाना है।
8. **नीति और विधायी प्रक्रियाओं में भाग लेना:** ट्रेड यूनियन अक्सर श्रम कानूनों, विनियमों और सामाजिक नीतियों को आकार देने के लिए नीति समर्थन और विधायी प्रक्रियाओं में भाग लेते हैं। वे कर्मचारियों के अधिकारों और कल्याण को प्रभावित करने वाले सरकारी निर्णयों को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं।

कुल मिलाकर, ट्रेड यूनियनों का उद्देश्य श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करना, उनकी कार्य स्थितियों में सुधार करना और उनके सामाजिक और आर्थिक कल्याण की वकालत करना है। श्रमिकों को एकजुट करके और सामूहिक कार्रवाई में शामिल होकर, ट्रेड यूनियन एक निष्पक्ष और अधिक न्यायसंगत श्रम वातावरण बनाना चाहते हैं।

1.5 सारांश

यह अध्याय श्रम संबंधों के संदर्भ में ट्रेड यूनियनों की मूलभूत अवधारणाओं और लक्ष्यों की पड़ताल करता है। यह ट्रेड यूनियनों के अर्थ की व्यापक समझ प्रदान करता है और उनके प्राथमिक उद्देश्यों में अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। अध्याय ट्रेड यूनियनों को श्रमिकों या कर्मचारियों के संगठित संघों के रूप में परिभाषित करने से शुरू होता है, जिसका उद्देश्य सामूहिक रूप से उनके अधिकारों और हितों का प्रतिनिधित्व करना और उनकी वकालत करना है। यह इस बात पर जोर देता है कि श्रमिकों को शोषण से बचाने, उनकी कार्य स्थितियों में सुधार लाने और कार्यस्थल में उचित व्यवहार सुनिश्चित करने के लिए ट्रेड यूनियनों का गठन किया जाता है।

ट्रेड यूनियनों के मुख्य उद्देश्यों का गहराई से पता लगाया जाता है। इन उद्देश्यों में श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करना, उचित वेतन और लाभों को बढ़ावा देना, काम करने की स्थिति में सुधार करना और कार्यस्थल पर स्वास्थ्य और सुरक्षा सुनिश्चित करना शामिल है। अध्याय इस बात पर जोर देता है कि ट्रेड यूनियनों का उद्देश्य सामूहिक सौदेबाजी और बातचीत प्रक्रियाओं में संलग्न होकर नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच शक्ति का संतुलन बनाना है। इसके अतिरिक्त, अध्याय ट्रेड यूनियनों के व्यापक सामाजिक उद्देश्यों की पड़ताल करता है। यह सामाजिक और आर्थिक न्याय की वकालत करने, श्रम कानूनों और नीतियों को प्रभावित करने और श्रमिकों के कल्याण को प्रभावित करने वाले व्यापक सामाजिक मुद्दों को संबोधित करने में उनकी भूमिका पर प्रकाश डालता है। ट्रेड यूनियनों को श्रमिकों को सशक्त बनाने और अधिक न्यायसंगत समाज बनाने के वाहन के रूप में देखा जाता है।

कुल मिलाकर, अध्याय ट्रेड यूनियनों के अर्थ और उद्देश्यों का व्यापक अवलोकन प्रदान करता है। यह उनके प्राथमिक लक्ष्यों को रेखांकित करता है, और श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करने और श्रम संबंधों को आकार देने में उनके महत्व को रेखांकित करता है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न 1. व्यापार संघ क्या है, इसको परिभाषित कीजिए?

प्रश्न 2. व्यापार संघ के क्या उद्देश्यों पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए?

1.6 परिभाषिक शब्दावली

संघ (यूनियन) : संघ एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए गठित एक संगठित समूह या संघ को संदर्भित करता है। यह सामूहिक संपूर्ण बनाने के लिए व्यक्तियों, समूहों या संस्थाओं के एक साथ आने का प्रतीक है।

कल्याणकारी : शब्द "कल्याणकारी" आम तौर पर व्यक्तियों या समूहों के जीवन की भलाई, खुशी और समग्र गुणवत्ता को संदर्भित करता है। इसमें शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और आर्थिक कल्याण से संबंधित विभिन्न पहलुओं को शामिल किया गया है।

परिसंघ : शब्द "परिसंघ" आमतौर पर राजनीतिक या संगठनात्मक संरचना के एक रूप को संदर्भित करता है जिसमें अलग-अलग संस्थाएं, जैसे कि राज्य, क्षेत्र या संगठन, एक महत्वपूर्ण डिग्री की स्वायत्तता बनाए रखते हुए एक सामान्य उद्देश्य के लिए एक साथ आते हैं।

1.7 संदर्भित पुस्तकें

1. औद्योगिक संबंध, ट्रेड यूनियन और श्रम विधान, पियर्सन पब्लिकेशन- पी.आर.एन. सिन्हा, सिन्हा इंदु बाला, शेखर सीमा प्रियदर्शिनी, 2017
2. ट्रेड यूनियन और सामूहिक सौदेबाजी, नोशन प्रेस- अतुल रामास्वामी (2022)

1.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न 1. व्यापार संघ क्या है, इसको परिभाषित कीजिए?

[illegible]

प्रश्न 2. व्यापार संघ के क्या उद्देश्यों पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए?

[illegible]

[illegible]

इकाई 2 - व्यापार संघ : नेतृत्व और कार्य

इकाई की रूपरेखा

- 2.0 इकाई का उद्देश्य
- 2.1 परिचय
- 2.2 व्यापार संघ का नेतृत्व
 - 2.2.1 प्रभावी ट्रेड यूनियन नेताओं के गुण
- 2.3 व्यापार संघ के कार्य
 - 2.3.1 सुरक्षात्मक या अंतर-पारस्परिक कार्य
 - 2.3.2 ट्रेड यूनियन के बाह्य-भित्ति कार्य
 - 2.3.3 सामाजिक-राजनैतिक कार्य
- 2.4 प्रभावी व्यापार संघ की आवश्यकताएं
- 2.5 सारांश
- 2.6 परिभाषिक शब्दावली
- 2.7 संदर्भित पुस्तकें
- 2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण के दर्शन पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग श्रम कल्याण के निम्नलिखित पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे -

- व्यापार संघ में नेतृत्व की भूमिका को जान सकेंगे;
- प्रभावी ट्रेड यूनियन के नेताओं के गुण से अवगत हो सकेंगे;
- व्यापार संघ के द्वारा किए जाने वाले सुरक्षात्मक या अंतर-पारस्परिक कार्यों को जान सकेंगे;
- व्यापार संघ के बाह्य-भित्ति और सामाजिक-राजनैतिक कार्यों के बारे में जान सकेंगे;
- प्रभावी व्यापार संघ की आवश्यकताओं को समझ सकेंगे।

2.1 परिचय

यह अध्याय ट्रेड यूनियनों के भीतर नेतृत्व द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका की पड़ताल करता है और उनके द्वारा किए जाने वाले बहुमुखी कार्यों की पड़ताल करता है। ट्रेड यूनियन आवश्यक संगठन हैं जो श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करते हैं, काम करने की स्थिति में सुधार करते हैं और नियोक्ताओं के साथ सामूहिक सौदेबाजी को बढ़ावा

देते हैं। इस अध्याय में, हम प्रभावी ट्रेड यूनियन नेताओं के गुणों, उनकी जिम्मेदारियों और श्रमिकों के हितों को आगे बढ़ाने के लिए उनके द्वारा किए जाने वाले कार्यों की जांच करेंगे।

ट्रेड यूनियन और उनके नेता अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने और श्रमिकों के हितों को आगे बढ़ाने के लिए विभिन्न कार्य करते हैं। इन कार्यों में श्रमिकों को संगठित करना और लामबंद करना, श्रम अधिकारों के बारे में जागरूकता बढ़ाना, नियोक्ताओं के साथ बातचीत करना, मध्यस्थता या मध्यस्थता के माध्यम से विवादों को सुलझाना, अनुकूल श्रम नीतियों की पैरवी करना और सरकार और औद्योगिक मंचों पर श्रमिकों के हितों का प्रतिनिधित्व करना शामिल है। प्रतिनिधित्व करना शामिल है। वे शैक्षिक गतिविधियों में भी संलग्न हैं, श्रमिकों को सशक्त बनाने के लिए सूचना और प्रशिक्षण प्रदान करते हैं और श्रम अधिकारों और सामूहिक कार्रवाई की उनकी समझ को बढ़ाते हैं। अंत में, अध्याय ट्रेड यूनियनों में नेतृत्व की महत्वपूर्ण भूमिका और ट्रेड यूनियन नेताओं द्वारा किए गए बहुमुखी कार्यों पर जोर देता है। श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करने, काम करने की स्थिति में सुधार लाने और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के लिए उनका समर्पण, कौशल और रणनीतिक दृष्टिकोण महत्वपूर्ण है। ट्रेड यूनियनों के भीतर नेतृत्व की भूमिका को समझना मजबूत श्रमिक आंदोलनों को बढ़ावा देने और हमेशा बदलते श्रम परिदृश्य में श्रमिकों के लिए सार्थक परिणाम प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।

2.2 व्यापार संघ का नेतृत्व

ट्रेड यूनियनों के भीतर नेतृत्व संगठन की दिशा, रणनीतियों और प्रभावशीलता को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कुशल और समर्पित नेता श्रमिकों को प्रेरित और लामबंद कर सकते हैं, आम सहमति बना सकते हैं और कार्यबल की बेहतरी के लिए सामूहिक कार्यों का नेतृत्व कर सकते हैं। श्रमिकों की चिंताओं को स्पष्ट करने, नियोक्ताओं के साथ बातचीत करने और जटिल श्रम मुद्दों को नेविगेट करने की उनकी क्षमता अनुकूल परिणाम प्राप्त करने में महत्वपूर्ण है।

2.2.1 प्रभावी ट्रेड यूनियन नेताओं के गुण

भावी ट्रेड यूनियन नेताओं के पास कई प्रकार के गुण होते हैं जो उन्हें श्रमिकों के हितों का प्रभावी ढंग से प्रतिनिधित्व करने और उनकी यूनियनों का नेतृत्व करने में सक्षम बनाते हैं। प्रभावी ट्रेड यूनियन नेताओं के कुछ प्रमुख गुण इस प्रकार हैं:

1. **ज्ञान और विशेषज्ञता:** प्रभावी नेता श्रम कानूनों, औद्योगिक संबंधों और अपने उद्योग में श्रमिकों के सामने आने वाली विशिष्ट चुनौतियों से अच्छी तरह वाकिफ हैं। उन्हें श्रमिकों के अधिकारों और अधिकारों की गहरी समझ है और वे प्रासंगिक कानूनी और नियामक परिवर्तनों पर अपडेट रहते हैं। यह ज्ञान उन्हें संघ के सदस्यों की ओर से सटीक जानकारी, मार्गदर्शन और वकालत प्रदान करने के लिए तैयार करता है।
2. **सत्यनिष्ठा और नैतिकता:** नेता जो उच्च स्तर की अखंडता और नैतिकता का प्रदर्शन करते हैं, संघ के सदस्यों के बीच विश्वास और विश्वास को प्रेरित करते हैं। वे श्रमिकों के सर्वोत्तम हित में कार्य करते हैं, अपने कार्यों में पारदर्शिता बनाए रखते हैं और नैतिक मानकों का पालन करते हैं। ईमानदारी, निष्पक्षता और जवाबदेही का प्रदर्शन करके, वे संघ के भीतर विश्वास और एकता की भावना को बढ़ावा देते हैं।

3. **संचार कौशल:** प्रभावी नेताओं के पास मौखिक और लिखित दोनों रूपों में मजबूत संचार कौशल होते हैं। वे श्रमिकों की चिंताओं को स्पष्ट कर सकते हैं, नियोक्ताओं के साथ बातचीत कर सकते हैं, और सदस्यता के लिए संघ के लक्ष्यों और रणनीतियों को प्रभावी ढंग से संप्रेषित कर सकते हैं। वे कार्यकर्ताओं की जरूरतों को सक्रिय रूप से सुनते हैं, प्रभावी संवाद में संलग्न होते हैं, और यह सुनिश्चित करते हैं कि संघ के भीतर सूचना सुचारू रूप से प्रवाहित हो।
4. **सहानुभूति और हिमायत:** ट्रेड यूनियन नेताओं के लिए सहानुभूति एक महत्वपूर्ण गुण है। उन्हें श्रमिकों के सामने आने वाली चुनौतियों को समझने और उनके साथ सहानुभूति रखने की आवश्यकता है, चाहे वे कार्यस्थल की स्थिति, वेतन या नौकरी की सुरक्षा से संबंधित हों। प्रभावी नेता श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करते हैं, अन्याय के खिलाफ लड़ते हैं और एक निष्पक्ष और न्यायसंगत कार्य वातावरण बनाने का प्रयास करते हैं।
5. **रणनीतिक सोच:** ट्रेड यूनियनों के नेताओं के पास रणनीतिक सोच क्षमता होनी चाहिए। वे जटिल श्रम मुद्दों का विश्लेषण करते हैं, भविष्य की चुनौतियों का अनुमान लगाते हैं और उनसे निपटने के लिए दीर्घकालिक योजना और रणनीति विकसित करते हैं। प्रभावी नेता सक्रिय, अनुकूलनीय और श्रमिकों के सर्वोत्तम हित में सूचित निर्णय लेने में सक्षम होते हैं।
6. **संगठनात्मक और टीम निर्माण कौशल:** संघ के मामलों के प्रबंधन और मजबूत टीमों के निर्माण के लिए ट्रेड यूनियन नेता जिम्मेदार हैं। उनके पास प्रशासनिक कार्यों का प्रबंधन करने, गतिविधियों का समन्वय करने और संसाधनों को प्रभावी ढंग से आवंटित करने के लिए संगठनात्मक कौशल होते हैं। वे एकता की भावना को भी बढ़ावा देते हैं, संघ के सदस्यों के बीच भागीदारी और सहयोग को प्रोत्साहित करते हैं और एक मजबूत सामूहिक पहचान बनाते हैं।
7. **राजनीतिक कौशल:** श्रम संबंधों के जटिल परिदृश्य को नेविगेट करने में, प्रभावी नेता निर्णय लेने की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाली राजनीतिक गतिशीलता को समझते हैं। वे श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करने और कार्यबल के पक्ष में श्रम नीतियों को प्रभावित करने के लिए नीति निर्माताओं, सरकारी अधिकारियों और अन्य हितधारकों के साथ संबंध बनाते हैं।
8. **लचीलापन और दृढ़ता:** श्रमिकों के हितों की रक्षा के प्रयासों में ट्रेड यूनियन नेताओं को अक्सर चुनौतियों और विरोध का सामना करना पड़ता है। प्रभावी नेता विपरीत परिस्थितियों में भी अपने उद्देश्य के प्रति प्रतिबद्ध रहते हुए लचीलापन और दृढ़ता का प्रदर्शन करते हैं। वे अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए बातचीत में लगे रहते हैं, बाधाओं को दूर करते हैं और संघ के सदस्यों को एकजुट करते हैं।

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि ये गुण संदर्भ, उद्योग और ट्रेड यूनियनों द्वारा सामना की जाने वाली विशिष्ट चुनौतियों के आधार पर भिन्न हो सकते हैं। प्रभावी नेता लगातार अपने कौशल का विकास करते हैं, बदलती परिस्थितियों के अनुकूल होते हैं, और श्रमिकों के हितों को आगे बढ़ाने और श्रमिक आंदोलन के भीतर सकारात्मक बदलाव लाने के लिए सहयोगात्मक रूप से काम करते हैं।

2.3 व्यापार संघ के कार्य

ट्रेड यूनियन द्वारा किए गए कार्य को मोटे तौर पर 3 श्रेणियों में वर्गीकृत किया जा सकता है:-

2.3.1 सुरक्षात्मक या अंतर-पारस्परिक कार्य

एक ट्रेड यूनियन के इंटर-म्यूरल कार्य वे हैं जो आंतरिक मामलों और संघ के भीतर की गतिविधियों पर ध्यान केंद्रित करते हैं। इन कार्यों में संघ के आंतरिक संचालन, प्रशासन और सदस्य सेवाएं शामिल हैं। ट्रेड यूनियनों के कुछ सामान्य इंटर-म्यूरल कार्य यहां दिए गए हैं:

1. **सदस्यता भर्ती और जुड़ाव:** ट्रेड यूनियन नए सदस्यों की भर्ती करने और मौजूदा सदस्यों के बीच सक्रिय भागीदारी को बढ़ावा देने के लिए गतिविधियों में संलग्न हैं। वे सदस्यता अभियान आयोजित कर सकते हैं, आउटरीच कार्यक्रम आयोजित कर सकते हैं, और सदस्यों के साथ उन्हें सूचित करने और संघ की गतिविधियों में शामिल रखने के लिए संवाद कर सकते हैं।
2. **संघ प्रशासन और शासन:** ट्रेड यूनियनों के पास अपने संचालन को प्रभावी ढंग से प्रबंधित करने के लिए प्रशासनिक संरचनाएं और प्रक्रियाएं हैं। इसमें सदस्यता रिकॉर्ड बनाए रखना, वित्त प्रबंधन, बैठकें आयोजित करना और कानूनी और नियामक आवश्यकताओं का अनुपालन सुनिश्चित करना शामिल है।
3. **नेतृत्व और प्रतिनिधित्व:** ट्रेड यूनियन ऐसे नेताओं का चुनाव करते हैं जो सदस्यों के हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं और उनकी ओर से निर्णय लेते हैं। इन नेताओं में संघ के अधिकारी, दुकान प्रबंधक, या अन्य निर्वाचित प्रतिनिधि शामिल हो सकते हैं जो सामूहिक सौदेबाजी में शामिल होते हैं, बातचीत में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करते हैं और संघ की गतिविधियों से संबंधित निर्णय लेते हैं।
4. **संचार और सूचना साझा करना:** ट्रेड यूनियन सदस्यों को संघ की गतिविधियों, वार्ताओं और महत्वपूर्ण विकासों के बारे में सूचित करने के लिए संचार चैनल स्थापित करते हैं। वे न्यूजलेटर्स प्रकाशित कर सकते हैं, वेबसाइटों को बनाए रख सकते हैं, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म का उपयोग कर सकते हैं, और सूचना का प्रसार करने और सदस्यों से प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए नियमित बैठकें आयोजित कर सकते हैं।
5. **सदस्य सेवाएं और समर्थन:** ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों की सहायता के लिए विभिन्न सेवाएं और समर्थन तंत्र प्रदान करते हैं। इसमें कानूनी सलाह और सहायता, शिकायत से निपटना, विवादों में प्रतिनिधित्व, और प्रशिक्षण कार्यक्रम, स्वास्थ्य और कल्याण लाभ, और सेवानिवृत्ति योजना जैसे संसाधनों तक पहुंच शामिल हो सकती है।
6. **शिक्षा और प्रशिक्षण:** ट्रेड यूनियन अक्सर अपने सदस्यों के ज्ञान और कौशल को बढ़ाने के लिए शैक्षिक और प्रशिक्षण कार्यक्रम पेश करते हैं। इन कार्यक्रमों में श्रमिकों के अधिकार, सामूहिक सौदेबाजी, व्यावसायिक स्वास्थ्य और सुरक्षा, नेतृत्व विकास और अन्य प्रासंगिक क्षेत्रों जैसे विषय शामिल हो सकते हैं।
7. **आंतरिक लोकतंत्र और निर्णय लेना:** ट्रेड यूनियन निर्णय लेने की प्रक्रिया में सदस्यों को शामिल करके आंतरिक लोकतंत्र के सिद्धांतों को बनाए रखते हैं। इसमें नियमित बैठकें आयोजित करना, सदस्यों को महत्वपूर्ण मामलों पर मतदान करने की अनुमति देना और एक भागीदारी संस्कृति को बढ़ावा देना शामिल हो सकता है जहां सदस्यों की संघ के मामलों में आवाज हो।

2.3.2 ट्रेड यूनियन के बाह्य-भित्ति कार्य

ट्रेड यूनियन के बाह्य-भित्ति कार्य उन गतिविधियों और पहलों को संदर्भित करते हैं जो संघ के आंतरिक मामलों से परे हैं। इन कार्यों में बाहरी हितधारकों, व्यापक समाज और समग्र रूप से श्रमिक आंदोलन के साथ संघ का जुड़ाव शामिल है। यहां ट्रेड यूनियनों के कुछ सामान्य बाह्य कार्य हैं:

1. **सामूहिक सौदेबाजी:** यद्यपि सामूहिक सौदेबाजी को एक अंतः-भित्ति कार्य भी माना जाता है, इसका एक बाहरी आयाम भी है। ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों के लिए अनुकूल रोजगार नियम और शर्तों को सुरक्षित करने के लिए नियोक्ताओं और नियोक्ता संघों के साथ बातचीत में संलग्न हैं। इस प्रक्रिया में श्रमिकों के हितों का प्रतिनिधित्व करना और बाहरी श्रम बाजार में उनके अधिकारों की वकालत करना शामिल है।
2. **हिमायत और पैरवी:** ट्रेड यूनियन सार्वजनिक नीतियों, श्रम कानूनों और कर्मचारियों के अधिकारों और कल्याण को प्रभावित करने वाले नियमों को प्रभावित करने के लिए समर्थन और पैरवी गतिविधियों में संलग्न हैं। वे अन्य संगठनों के साथ काम कर सकते हैं, सार्वजनिक परामर्श में भाग ले सकते हैं, और कार्यकर्ता समर्थक नीतियों को बढ़ावा देने और सामाजिक और आर्थिक मुद्दों को संबोधित करने के लिए राजनीतिक अभियानों में शामिल हो सकते हैं।
3. **सामाजिक और राजनीतिक अभियान:** ट्रेड यूनियन अक्सर व्यापक सामाजिक और राजनीतिक अभियानों में भाग लेते हैं जो उनके लक्ष्यों और सिद्धांतों के अनुरूप होते हैं। वे सामाजिक न्याय, मानवाधिकार, समानता, पर्यावरणीय स्थिरता, और अन्य कारणों से आंदोलनों का समर्थन कर सकते हैं जो बड़े पैमाने पर श्रमिकों और समाज को प्रभावित करते हैं।
4. **अंतर्राष्ट्रीय एकजुटता:** ट्रेड यूनियन अन्य देशों में यूनियनों और श्रमिक संगठनों के साथ सहयोग करके अंतर्राष्ट्रीय एकजुटता के प्रयासों में संलग्न हो सकते हैं। इसमें वैश्विक श्रम मुद्दों को संबोधित करने, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर श्रमिकों के अधिकारों का समर्थन करने और निष्पक्ष और नैतिक वैश्विक आपूर्ति श्रृंखलाओं को बढ़ावा देने के लिए जानकारी, संसाधनों और रणनीतियों को साझा करना शामिल हो सकता है।
5. **सामुदायिक जुड़ाव:** ट्रेड यूनियन गठबंधन बनाने, सामाजिक मुद्दों को संबोधित करने और व्यापक समुदाय की भलाई में योगदान करने के लिए स्थानीय समुदायों और नागरिक समाज संगठनों के साथ सक्रिय रूप से जुड़ते हैं। वे शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल, गरीबी उन्मूलन, पर्यावरणीय स्थिरता और अन्य क्षेत्रों से संबंधित पहलों पर सहयोग कर सकते हैं जिनका श्रमिकों और उनके समुदायों पर प्रभाव पड़ता है।
6. **अनुसंधान और नीति विश्लेषण:** श्रम बाजार के रुझान, आर्थिक स्थिति और श्रमिकों को प्रभावित करने वाले सामाजिक मुद्दों को समझने के लिए ट्रेड यूनियन अनुसंधान और नीति विश्लेषण करते हैं। वे सार्वजनिक बहसों को सूचित करने, नीतिगत चर्चाओं को आकार देने और साक्ष्य-आधारित निर्णय लेने का समर्थन करने के लिए रिपोर्ट तैयार कर सकते हैं, अध्ययन प्रकाशित कर सकते हैं और डेटा-संचालित अंतर्दृष्टि का योगदान कर सकते हैं।

7. **अंतर्राष्ट्रीय श्रम आंदोलन जुड़ाव:** ट्रेड यूनियन राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय श्रमिक संगठनों के साथ सहयोग करके व्यापक श्रमिक आंदोलन में भाग लेते हैं। वे अनुभव साझा करने, सर्वोत्तम प्रथाओं का आदान-प्रदान करने और विश्व स्तर पर श्रमिकों के बीच एकजुटता को मजबूत करने के लिए सम्मेलनों, मंचों और बैठकों में भाग लेते हैं।

2.3.3 सामाजिक-राजनैतिक कार्य

ट्रेड यूनियनों के सामाजिक-राजनैतिक कार्यों में सामाजिक न्याय की वकालत करने, श्रमिकों के अधिकारों को बढ़ावा देने और राजनीतिक प्रक्रियाओं में भाग लेने में उनकी भूमिका शामिल है। इन कार्यों में ट्रेड यूनियन शामिल हैं जो व्यापक समाज से जुड़े हैं, नीतिगत निर्णयों को प्रभावित करते हैं, और सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन में योगदान करते हैं। ट्रेड यूनियनों के कुछ प्रमुख सामाजिक और राजनीतिक कार्य यहां दिए गए हैं:

1. **श्रमिकों के अधिकारों की हिमायत:** ट्रेड यूनियन श्रमिक मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाकर, निष्पक्ष रोजगार प्रथाओं को बढ़ावा देकर, और कार्यस्थल में शोषण और भेदभाव के खिलाफ लड़कर श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करती हैं। वे यह सुनिश्चित करने के लिए काम करते हैं कि श्रमिकों के उचित वेतन, सुरक्षित काम करने की स्थिति और नौकरी की सुरक्षा के अधिकारों की रक्षा और सम्मान किया जाए।
2. **सामाजिक न्याय अभियान:** ट्रेड यूनियन अक्सर सामाजिक न्याय अभियानों में शामिल होते हैं जो तत्काल कार्यस्थल की चिंताओं से परे होते हैं। वे मानव अधिकारों, लैंगिक समानता नस्लीय न्याय, पर्यावरणीय स्थिरता और श्रमिकों और समुदायों को प्रभावित करने वाले अन्य सामाजिक मुद्दों से संबंधित कारणों का समर्थन करते हैं। ट्रेड यूनियन अधिक न्यायसंगत और न्यायपूर्ण समाज की वकालत करने के लिए अपनी सामूहिक आवाज और संसाधन देते हैं।
3. **राजनैतिक जुड़ाव और लॉबिंग:** ट्रेड यूनियन राजनीतिक प्रक्रियाओं में भाग लेते हैं और श्रमिकों के हितों को प्रभावित करने वाले नीतिगत निर्णयों को प्रभावित करने के लिए लॉबिंग गतिविधियों में संलग्न होते हैं। वे राजनीतिक उम्मीदवारों या पार्टियों का समर्थन या समर्थन कर सकते हैं जो उनके लक्ष्यों के साथ संरेखित होते हैं, और वे वकालत और पैरवी प्रयासों के माध्यम से श्रम कानूनों, रोजगार नियमों और सामाजिक नीतियों को आकार देने के लिए काम करते हैं।
4. **सामाजिक भागीदारी और संवाद:** ट्रेड यूनियन सामाजिक साझेदारी को बढ़ावा देते हैं और श्रम से संबंधित मुद्दों को हल करने और पारस्परिक रूप से लाभकारी समाधान खोजने के लिए नियोक्ताओं, सरकारी अधिकारियों और अन्य हितधारकों के साथ बातचीत में शामिल होते हैं। यह सहयोग सामाजिक सामंजस्य, आर्थिक स्थिरता और श्रमिकों की भलाई को बढ़ावा देने में मदद करता है।
5. **जन जागरूकता और शिक्षा:** श्रमिक संघ जनता को श्रमिकों के अधिकारों, श्रम स्थितियों और सामाजिक न्याय के मुद्दों के बारे में शिक्षित करने में एक भूमिका निभाते हैं। वे निष्पक्ष और न्यायपूर्ण कार्यस्थलों के महत्व

और समाज में श्रमिकों के योगदान के बारे में लोगों को सूचित करने के लिए अभियानों, सार्वजनिक कार्यक्रमों और शैक्षिक पहलों के माध्यम से जागरूकता बढ़ाते हैं।

6. **एकजुटता और सहयोग:** ट्रेड यूनियन गठजोड़ बनाकर और अन्य यूनियनों, सामाजिक आंदोलनों और नागरिक समाज संगठनों के साथ सहयोग करके श्रमिकों के बीच एकजुटता को बढ़ावा देते हैं। वे श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करने और सामाजिक और आर्थिक अन्याय की ओर ध्यान दिलाने के लिए हड़ताल, विरोध और प्रदर्शन जैसी सामूहिक कार्रवाइयों में शामिल होते हैं।
7. **नीति विकास में योगदान:** ट्रेड यूनियन इनपुट, विशेषज्ञता और साक्ष्य-आधारित अनुसंधान प्रदान करके श्रम संबंधी नीतियों और सामाजिक कार्यक्रमों के विकास में योगदान करते हैं। वे यह सुनिश्चित करने के लिए परामर्श, सलाहकार समितियों और अन्य नीति-निर्माण प्रक्रियाओं में भाग लेते हैं कि श्रमिकों के दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व और विचार किया जाता है।

2.4 प्रभावी व्यापार संघ की आवश्यकताएं

एक प्रभावी ट्रेड यूनियन को श्रमिकों का प्रभावी ढंग से प्रतिनिधित्व करने, उनकी ओर से बातचीत करने, कार्यस्थल के मुद्दों को संबोधित करने, एकता को बढ़ावा देने और व्यापक सामाजिक परिवर्तन की वकालत करने की क्षमता की विशेषता है। यह श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करने, काम करने की स्थिति में सुधार लाने और एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण श्रम वातावरण को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक प्रभावी ट्रेड यूनियन बनने के लिए, कुछ आवश्यकताओं को पूरा किया जाना चाहिए। एक प्रभावी ट्रेड यूनियन के लिए यहां कुछ प्रमुख आवश्यकताएं हैं:

1. **मजबूत सदस्यता आधार:** एक प्रभावी ट्रेड यूनियन को एक मजबूत और सक्रिय सदस्यता आधार की आवश्यकता होती है। सदस्यों की एक महत्वपूर्ण संख्या संघ को श्रमिकों का व्यापक प्रतिनिधित्व प्रदान करती है और इसकी सौदेबाजी की शक्ति को बढ़ाती है। संघ को सक्रिय रूप से सदस्यता अभियान में शामिल होना चाहिए, नए सदस्यों की भर्ती करनी चाहिए, और प्रभावी संचार और सदस्यों की जरूरतों को पूरा करने के माध्यम से उच्च सदस्यता प्रतिधारण सुनिश्चित करना चाहिए।
2. **सक्रिय भागीदारी और जुड़ाव:** संघ की प्रभावशीलता के लिए संघ के सदस्यों की सक्रिय भागीदारी और जुड़ाव महत्वपूर्ण है। सदस्यों को बैठकों में भाग लेने, निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेने और संघ की गतिविधियों और अभियानों में योगदान करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। सदस्यों को सूचित और शामिल रखने के लिए नियमित संचार चैनल, जैसे समाचार पत्र, वेबसाइट और सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म स्थापित किए जाने चाहिए।
3. **मजबूत नेतृत्व:** प्रभावी ट्रेड यूनियनों को सक्षम और प्रतिबद्ध नेताओं की आवश्यकता होती है। नेताओं में अखंडता, पारदर्शिता, मजबूत संचार कौशल और श्रम कानूनों और श्रमिकों के मुद्दों की गहरी समझ जैसे गुण होने चाहिए। उन्हें सदस्यों की चिंताओं और आकांक्षाओं को स्पष्ट करने, उनकी ओर से बातचीत करने और अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए रणनीतिक रूप से संघ का नेतृत्व करने में सक्षम होना चाहिए।

4. **स्पष्ट उद्देश्य और रणनीतियाँ:** एक ट्रेड यूनियन के पास स्पष्ट और अच्छी तरह से परिभाषित उद्देश्य होने चाहिए जो उसके सदस्यों के हितों के साथ संरेखित हों। इन उद्देश्यों को सदस्यों को सूचित किया जाना चाहिए और संघ की गतिविधियों और अभियानों का मार्गदर्शन करना चाहिए। श्रमिकों की विशिष्ट आवश्यकताओं और चुनौतियों पर विचार करते हुए संघ को अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रभावी रणनीति और कार्य योजना भी विकसित करनी चाहिए।
5. **सामूहिक सौदेबाजी कौशल:** प्रभावी ट्रेड यूनियनों के पास मजबूत सामूहिक सौदेबाजी कौशल होना चाहिए। इसमें सक्षम वार्ताकार शामिल हैं जो अनुकूल रोजगार शर्तों, मजदूरी, काम करने की स्थिति और श्रमिकों के लिए लाभ सुनिश्चित करने के लिए नियोक्ताओं के साथ जुड़ सकते हैं। वार्ताकारों को अच्छी तरह से तैयार होना चाहिए, उद्योग के बारे में जानकारी होना चाहिए, और डेटा का विश्लेषण करने और प्रभावी ढंग से वकालत करने में सक्षम होना चाहिए।
6. **एकता और एकजुटता:** संघ की ताकत और प्रभावशीलता के लिए संघ के सदस्यों के बीच एकता और एकजुटता महत्वपूर्ण है। संघ को सदस्यों के बीच एकता की भावना को बढ़ावा देना चाहिए, सहयोग को बढ़ावा देना चाहिए और आंतरिक विभाजन या संघर्षों को हतोत्साहित करना चाहिए। एक मजबूत सामूहिक पहचान का निर्माण करना और यह सुनिश्चित करना कि सदस्य समर्थित और मूल्यवान महसूस करते हैं, एक सामंजस्यपूर्ण और प्रभावी ट्रेड यूनियन के लिए आवश्यक है।
7. **पर्याप्त संसाधन:** एक प्रभावी ट्रेड यूनियन को अपनी गतिविधियों को चलाने के लिए पर्याप्त वित्तीय और संगठनात्मक संसाधनों की आवश्यकता होती है। प्रशासनिक लागतों, कानूनी सहायता, शोध और अभियानों के आयोजन के लिए पर्याप्त धन उपलब्ध होना चाहिए। संघ को कुशल प्रशासनिक व्यवस्था स्थापित करनी चाहिए और उनके प्रभाव को अधिकतम करने के लिए रणनीतिक रूप से संसाधनों का आवंटन करना चाहिए।
8. **सतत शिक्षा और प्रशिक्षण:** ट्रेड यूनियनों को अपने सदस्यों और नेताओं की शिक्षा और प्रशिक्षण में निवेश करने की आवश्यकता है। श्रम कानूनों, बातचीत कौशल, नेतृत्व विकास और अन्य प्रासंगिक क्षेत्रों के बारे में सीखने के अवसर प्रदान करने से संघ के सदस्यों के ज्ञान और क्षमता में वृद्धि होती है। सतत शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रम सदस्यों को संघ की गतिविधियों में प्रभावी रूप से भाग लेने और इसके उद्देश्यों की प्राप्ति में योगदान करने में सक्षम बनाते हैं।
9. **सहयोग और गठबंधन:** प्रभावी ट्रेड यूनियन अन्य यूनियनों, संगठनों और नागरिक समाज समूहों के साथ सहयोग और गठजोड़ के मूल्य को समझते हैं। गठजोड़ बनाना सामूहिक आवाज को मजबूत करता है और श्रमिकों के अधिकारों और हितों की वकालत करने के लिए अधिक व्यापक दृष्टिकोण की अनुमति देता है। सहयोग अतिरिक्त संसाधनों, विशेषज्ञता और व्यापक नेटवर्क तक पहुंच भी प्रदान करता है।
10. **पारदर्शिता और जवाबदेही:** प्रभावी ट्रेड यूनियन पारदर्शिता और जवाबदेही के साथ काम करते हैं। वे अपने सदस्यों के साथ स्पष्ट और खुला संचार चैनल बनाए रखते हैं, संघ की गतिविधियों और वित्त पर नियमित

अपडेट प्रदान करते हैं और निर्णय लेने की प्रक्रिया में सदस्यों को शामिल करते हैं। वे अपने सदस्यों के प्रति जवाबदेह हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि उनके कार्य श्रमिकों के हितों के अनुरूप हों।

इन आवश्यकताओं को पूरा करके, एक ट्रेड यूनियन श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करने, उनके अधिकारों की वकालत करने और श्रम बाजार में सकारात्मक बदलाव लाने में अपनी प्रभावशीलता बढ़ा सकता है। ये आवश्यकताएं एक मजबूत और प्रभावशाली ट्रेड यूनियन की नींव बनाती हैं जो अपने सदस्यों की जरूरतों और चिंताओं को प्रभावी ढंग से संबोधित कर सकती हैं।

2.5 सारांश

श्रमिकों के हितों का प्रतिनिधित्व करने और उनके अधिकारों की वकालत करने में ट्रेड यूनियनों और ट्रेड यूनियन नेताओं का कार्य महत्वपूर्ण है। ट्रेड यूनियन नियोक्ताओं और अन्य संबंधित हितधारकों के साथ बातचीत में श्रमिकों के प्रतिनिधियों के रूप में कार्य करते हैं। वे निष्पक्ष और अनुकूल परिणामों को सुरक्षित करने के उद्देश्य से श्रमिकों की ओर से रोजगार की शर्तों, मजदूरी, लाभ और काम करने की स्थिति पर बातचीत करते हैं। श्रमिक संघ कार्यस्थल की शिकायतों और विवादों को दूर करने में श्रमिकों की सहायता करते हैं। वे अनुशासनात्मक कार्रवाइयों, अनुचित व्यवहार, या अन्य कार्यस्थल संघर्षों का सामना करने वाले व्यक्तिगत कर्मचारियों को मार्गदर्शन, समर्थन और प्रतिनिधित्व प्रदान करते हैं। ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों के ज्ञान और कौशल को बढ़ाने के लिए शैक्षिक और प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रदान करते हैं। ट्रेड यूनियन अक्सर सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों में संलग्न होते हैं जो श्रमिकों के अधिकारों और सामाजिक न्याय को प्रभावित करते हैं। ट्रेड यूनियन नेता संघ को रणनीतिक दिशा और दृष्टि प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे उद्देश्य विकसित करते हैं, रणनीति तैयार करते हैं और संघ को उसके लक्ष्यों को प्राप्त करने की दिशा में ले जाते हैं। प्रभावी नेताओं के पास मजबूत संचार कौशल, बातचीत की क्षमता और श्रमिक मुद्दों की गहरी समझ होती है। ट्रेड यूनियन और ट्रेड यूनियन नेता श्रमिकों के हितों की रक्षा और उन्हें आगे बढ़ाने के लिए बहुआयामी कार्य करते हैं। इन कार्यों के माध्यम से, ट्रेड यूनियन और उनके नेता श्रमिकों के लिए अधिक न्यायसंगत और न्यायपूर्ण कार्य वातावरण बनाने में योगदान करते हैं।

बोध प्रश्न-

प्रश्न 1. व्यापार संघ के नेतृत्व पर चर्चा कीजिए?

प्रश्न 2. प्रभावी ट्रेड यूनियन नेताओं के क्या गुण हैं, इसपर प्रकाश डालिए?

प्रश्न 3. व्यापार संघ के विभिन्न कार्यों की विवेचना कीजिए?

प्रश्न 4. एक प्रभावी व्यापार संघ की आवश्यकताओं का विस्तृत रूप में विश्लेषण कीजिए?

2.6 परिभाषिक शब्दावली

अंतर-पारस्परिक: सामान्य तौर पर, “अंतर-पारस्परिक” उन गतिविधियों या घटनाओं को संदर्भित करता है जो किसी विशिष्ट संस्था या संगठन की सीमाओं के भीतर होती हैं। इसमें आमतौर पर उस संस्था के सदस्यों या व्यक्तियों की भागीदारी या भागीदारी शामिल होती है।

बाह्य-भित्ति: “बाह्य-भित्ति” उन गतिविधियों या घटनाओं को संदर्भित करता है जो किसी विशिष्ट संस्था या संगठन की सीमाओं के बाहर होती हैं। इसमें उस संस्था से बाहर के व्यक्तियों या समूहों की भागीदारी या भागीदारी शामिल है।

लॉबिंग: लॉबिंग किसी विशेष कारण, हित या संगठन के पक्ष में सरकारी अधिकारियों, विधायकों, या अन्य प्रभावशाली व्यक्तियों या समूहों के निर्णयों, नीतियों या कार्यों को प्रभावित करने के प्रयास के कार्य को संदर्भित करता है।

2.7 संदर्भित पुस्तकें

1. भारत में ट्रेड यूनियनों का विकास, वी.वी. गिरि राष्ट्रीय श्रम संस्थान- डॉ. संजय उपाध्याय, (20
2. औद्योगिक संबंध, ट्रेड यूनियन और श्रम कानून, पियर्सन प्रकाशन- पी.आर.एन. सिन्हा, सिन्हा इंदु बाला, शेखर सीमा प्रियदर्शिनी (2017)
3. ट्रेड यूनियन मूवमेंट एंड इंडस्ट्रियल रिलेशंस, सोमैया प्रकाशन, बॉम्बे-कार्णिक, वी.बी. (1981)

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न 1. व्यापार संघ के नेतृत्व पर चर्चा कीजिए?

प्रश्न 4. एक प्रभावी व्यापार संघ की आवश्यकताओं का विस्तृत रूप में विश्लेषण कीजिए?

इकाई 3 - व्यापार संघ का ऐतिहासिक विकास

इकाई की रूपरेखा

- 3.0 इकाई का उद्देश्य
- 3.1 परिचय
- 3.2 भारत में व्यापार संघ का उदय
- 3.3 भारत में ट्रेड यूनियनों की समस्याएं और कमजोरियां
- 3.4 ट्रेड यूनियन अधिनियम, 1926
- 3.5 सारांश
- 3.6 परिभाषिक शब्दावली
- 3.7 संदर्भित पुस्तकें
- 3.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.0 इकाई का उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण के दर्शन पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग श्रम कल्याण के निम्नलिखित पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे –

- व्यापार संघ की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को जान सकेंगे;
- भारत में ट्रेड यूनियन की समस्याओं और कमजोरियों से अवगत हो सकेंगे;
- ट्रेड यूनियन अधिनियम की विभिन्न धाराओं से परिचित हो सकेंगे।

3.1 परिचय

भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन का एक समृद्ध इतिहास रहा है, जो श्रमिकों के अधिकारों और हितों की रक्षा के लिए समय के साथ विकसित हुआ है। औपनिवेशिक युग के दौरान अपनी शुरुआती शुरुआत से लेकर आज तक, ट्रेड यूनियनों ने श्रम संबंधों को आकार देने, श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करने और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह अध्याय भारत में ट्रेड यूनियनों के विकास की पड़ताल करता है, उनके सामने आने वाली चुनौतियों, उनकी कमजोरियों और 1926 के ट्रेड यूनियन अधिनियम द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालता है।

भारत में ट्रेड यूनियनों के उद्भव का पता 19वीं सदी के उत्तरार्ध में लगाया जा सकता है जब श्रमिकों ने शोषणकारी कार्य परिस्थितियों, कम वेतन और लंबे समय तक काम करने के घंटों से संबंधित शिकायतों को दूर करने के लिए खुद को संगठित करना शुरू किया। समय के साथ, ट्रेड यूनियनों ने गति प्राप्त की और विनिर्माण, कृषि, सेवाओं और लोक प्रशासन सहित कई क्षेत्रों को शामिल करने के लिए अपने दायरे का विस्तार किया।

भारत में ट्रेड यूनियनों ने कई चुनौतियों का सामना किया है और कुछ कमजोरियों का प्रदर्शन किया है। प्रमुख मुद्दों में से एक विखंडन रहा है, जिसमें एक ही उद्योग या क्षेत्र में कई यूनियन काम कर रहे हैं, जिसके परिणामस्वरूप अक्सर अंतर-संघ संघर्ष और कमजोर सौदेबाजी की शक्ति होती है। आंतरिक लोकतंत्र, पारदर्शिता और जवाबदेही भी कुछ ट्रेड यूनियनों के भीतर चिंता के क्षेत्र रहे हैं, जिससे अप्रभावी प्रतिनिधित्व और सीमित कार्यकर्ता भागीदारी हुई है।

ट्रेड यूनियनों को विनियमित करने और उन्हें कानूनी मान्यता प्रदान करने की बढ़ती आवश्यकता को पूरा करने के लिए भारत में 1926 का ट्रेड यूनियन अधिनियम बनाया गया था। इस ऐतिहासिक कानून का उद्देश्य ट्रेड यूनियनों के गठन, पंजीकरण और कामकाज के लिए एक रूपरेखा प्रदान करना है। अधिनियम ने ट्रेड यूनियनों की परिभाषा, न्यूनतम सदस्यता आवश्यकताओं, पंजीकरण प्रक्रियाओं, ट्रेड यूनियनों के अधिकारों और देनदारियों, राजनीतिक निधियों और कानूनी कार्यवाही से प्रतिरक्षा से संबंधित प्रावधान पेश किए।

3.2 भारत में व्यापार संघ का उदय

प्रारंभिक काल (1918 तक)

भारतीय ट्रेड यूनियन आंदोलन लगभग एक सदी पुराना है। ग्रेट ब्रिटेन और LISA की ट्रेड यूनियनों की तुलना में, भारतीय यूनियनों का इतिहास छोटा है। विलंबित शुरुआत और आधुनिक पूंजीवादी औद्योगिक उद्यमों की धीमी वृद्धि भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन के उद्भव में देरी के लिए जिम्मेदार थी। 1851 में पहली सूती मिल कलकत्ता में स्थापित की गई थी। इसके बाद, उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में कुछ बड़े औद्योगिक उद्यम स्थापित किए गए। इस अवधि के दौरान, श्रमिकों के काम करने और रहने की स्थिति ने एक दयनीय तस्वीर पेश की - काम के घंटे लंबे थे, मजदूरी बहुत कम थी, और औद्योगिक क्षेत्रों में सामान्य श्रम की स्थिति कठोर थी। अनिवार्य रूप से, औद्योगिक श्रमिकों, विशेष रूप से सूती वस्त्र उद्योग में, इन अमानवीय कामकाजी और रहने की स्थितियों के खिलाफ हड़ताल पर जाकर विरोध किया। 1877 में एम्प्रेस मिल, नागपुर के कपड़ा मजदूर कम काम के घंटे, पर्याप्त मजदूरी और पर्याप्त वेतन की मांग को लेकर लंबे समय तक हड़ताल पर रहे। 1882 और 1890 के बीच, बॉम्बे और मद्रास प्रेसीडेंसी में पच्चीस हड़तालें दर्ज की गईं। ये हड़तालें अनायास हुईं, हालाँकि श्रमिकों का कोई औपचारिक संगठन नहीं था। इन हड़तालों से मजदूरों ने एकजुट कार्रवाई की ताकत सीखी।

औद्योगिक विकास की प्रारंभिक अवधि के दौरान श्रमिकों को उनके कल्याण के लिए संगठित करने की दिशा में बड़े पैमाने पर मानवीय आधार पर भारतीय और विदेशी दोनों सामाजिक कार्यकर्ताओं और परोपकारी लोगों द्वारा प्रयास किए गए थे। 1875 में, शोराबजी शापुरजी बेंगाले के नेतृत्व में बंबई के कई समाज सुधारकों ने कारखानों में काम करने की भयानक परिस्थितियों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। विशेष रूप से, उन्होंने उन अमानवीय परिस्थितियों की ओर ध्यान आकर्षित किया जिनमें महिलाओं और बच्चों को कारखानों में काम करने की आवश्यकता होती थी। 25 मार्च, 1875 को बंबई सरकार ने कारखाने की स्थितियों की जांच के लिए पहला बंबई कारखाना आयोग नियुक्त किया। आयोग के सदस्य कानून की किसी भी आवश्यकता को देखने में विफल रहे। लेकिन शोराबजी बेंगाले के नेतृत्व में समाज सुधारकों द्वारा शुरू किए गए आंदोलन और अन्य कारणों से 1881 में पहला भारतीय कारखाना अधिनियम पारित किया गया था। लेकिन यह अधिनियम इतना अपर्याप्त था (इस अधिनियम

का ध्यान मुख्य रूप से बच्चों पर था, इसे बच्चों के कल्याण अधिनियम के रूप में माना जाता था) कि बंबई के श्रमिकों ने इसका विरोध किया। एनएम लोखंडे, बंबई में एक कपड़ा मिल में एक कुशल कार्यकर्ता और सत्यशोधक समाज के एक समाज सुधारक, ने सितंबर 1884 में बॉम्बे में मिल संचालकों की दो सार्वजनिक बैठकें आयोजित कीं और साप्ताहिक अवकाश, मजदूरी के नियमित भुगतान और आधे घंटे का अवकाश की मांग करते हुए 5,500 श्रमिकों द्वारा हस्ताक्षरित एक ज्ञापन दिया और अक्टूबर 1884 में इसे दूसरे कारखाना आयोग को सौंप दिया।

1890 में, लोखंडे ने बॉम्बे मिलहैंड्स एसोसिएशन की स्थापना मुख्य रूप से मिल-श्रमिकों की शिकायतों के लिए समाशोधन गृह प्रदान करने और उन पर जनता का ध्यान आकर्षित करने में मदद करने के लिए की थी। एसोसिएशन का एक संगठित निकाय के रूप में कोई अस्तित्व नहीं था, कोई सदस्यता नहीं थी, कोई धन नहीं था और कोई नियम नहीं था। नेताओं ने मिल-मजदूरों के स्वैच्छिक सलाहकार के रूप में काम किया। एसोसिएशन ने दीनबंधु (गरीबों का मित्र), एक सामाजिक सुधार पत्रिका को भी अपने कब्जे में ले लिया और भारत में पहली श्रम पत्रिका में परिवर्तित हो गया। प्रथम विश्व युद्ध से पहले स्थापित कुछ महत्वपूर्ण संगठनों में भारत और बर्मा के रेल सेवकों की समामेलित सोसाइटी (1897), प्रिंटर्स यूनियन, कलकत्ता (1905), बॉम्बे पोस्टल यूनियन (1907) और सोशल सर्विस लीग (1910) शामिल थे।

हालाँकि, ये सभी संगठन तदर्थ निकाय थे, और उन्हें सही अर्थों में ट्रेड यूनियनों के रूप में शायद ही माना जा सकता था। लोखंडे के अलावा, कुछ अन्य व्यक्तियों (बंगाल में पी.सी. मजूमदार सहित) और संगठनों (मद्रास में थियोसोफिकल सोसाइटी, बॉम्बे में सर्वेक्स ऑफ़ इंडिया सोसाइटी, और कलकत्ता में ब्रह्म समाज) ने श्रम के कारण जनता का ध्यान आकर्षित करने में रुचि ली। प्रथम विश्व युद्ध से पहले स्थापित किए गए अधिकांश श्रमिक संगठन एक छोटे और तूफानी करियर के बाद गायब हो गए।

1918-1947 (स्वतंत्रता से पूर्व)

युद्ध के तुरंत बाद की अवधि (1918-20) ने शब्द के आधुनिक अर्थ में ट्रेड यूनियन आंदोलन का जन्म देखा। जिन मुख्य कारकों ने इसके जन्म और शुरुआती उद्वव का समर्थन किया, उनमें एक नई सामाजिक व्यवस्था, तीव्र औद्योगिक और आर्थिक अशांति की जनता की उम्मीदें शामिल हैं, क्योंकि मजदूरों की मजदूरी कीमतों और मुनाफे के साथ तालमेल नहीं बिठा पाई, और रूसी क्रांति (1917) और अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (1919) का गठन हुआ। रूसी क्रांति, जिसने श्रमिकों के शासन की शुरुआत की, ने श्रमिकों के सामने एक आदर्श रखा, अर्थात्, राजनीतिक तरीकों से श्रमिकों के शोषण को रोका जा सकता है। अपने प्रारंभिक चरण में, भारतीय ट्रेड यूनियन आंदोलन साम्यवाद से प्रभावित था। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) औद्योगिक वेतन-अर्जक के भौतिक और बौद्धिक कल्याण के लिए वर्साय की शांति संधि के परिणामस्वरूप अस्तित्व में आया। ILO ने भारत के ट्रेड यूनियन आंदोलन, श्रम कानून और श्रम नीति को गहराई से प्रभावित किया है। जब 1919 में वाशिंगटन में पहला ILO सम्मेलन आयोजित किया गया था, तब भारतीय ट्रेड यूनियनों का कोई केंद्रीय संघ नहीं था।

ऐसे में, भारत सरकार ने ट्रेड यूनियनों से परामर्श किए बिना एक प्रतिनिधि नामित किया। इस कार्रवाई से श्रमिक वर्ग में असंतोष फैल गया। 30 अक्टूबर, 1920 को, 64 ट्रेड यूनियनों के प्रतिनिधियों ने, 1,40,854 की सदस्यता का

दावा करते हुए, बॉम्बे में एक सम्मेलन में मुलाकात की और लाला लाजपत राय के पहले अध्यक्ष के रूप में ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC) की स्थापना की। भारतीय ट्रेड यूनियनों के एक केंद्रीय संघ के रूप में, AITUC ने ट्रेड यूनियन आंदोलन का विकास किया। ILO ने विभिन्न देशों के ट्रेड यूनियन नेताओं के लिए एक अंतर्राष्ट्रीय मंच सहित प्रशिक्षण, साहित्य और अन्य संसाधन प्रदान करके आंदोलन को प्रोत्साहित किया।

इस अवधि के दौरान, मद्रास लेबर यूनियन, व्यवस्थित तर्ज पर गठित होने वाला भारत का पहला ट्रेड यूनियन, 27 अप्रैल, 1918 को बी.पी. वाडिया, एक मुखर राष्ट्रवादी पत्र के संपादक। अहमदाबाद में, महात्मा गांधी और अनुसूयाबेन की प्रेरणा और मार्गदर्शन में, सूत कातने वालों के संघ और बुनकर संघों का गठन किया गया, जो बाद में अहमदाबाद कपड़ा मजदूर संघ (ATLA) के रूप में जाना जाने वाला औद्योगिक संघ बन गया। यह एसोसिएशन, अपनी स्थापना के समय से ही, आपसी सहयोग और अहिंसा के गांधीवादी दर्शन पर आधारित, हमारे देश में मजबूत ट्रेड यूनियनवाद का एक मॉडल रहा है। इस एसोसिएशन का गठन भी 1917 में वेतन वृद्धि के लिए एक हड़ताल के साथ शुरू हुआ था, जब महात्मा गांधी को अनशन पर जाना पड़ा था, जिसके बाद अहमदाबाद मिल ओनर्स एसोसिएशन ने मूल्य में वृद्धि के लिए श्रमिकों के मुआवजे के अधिकार को स्वीकार कर लिया था।

1917 में श्रमिकों को युद्ध बोनस के रूप में मजदूरी में 10 प्रतिशत की वृद्धि दी गई जो अगले वर्ष बढ़कर 15 प्रतिशत हो गया।

बेहतर वेतन और अन्य रोजगार स्थितियों के लिए मद्रास में बकिंघम और कर्नाटक मिलों के श्रमिकों के आंदोलन के कारण वर्ष 1920 ट्रेड यूनियन आंदोलन के इतिहास में महत्वपूर्ण है। प्रबंधन ने तालाबंदी की घोषणा कर दी और यूनियन नेता बीपी वाडिया और मद्रास लेबर यूनियन के अन्य नेताओं के खिलाफ मामला दर्ज किया, मद्रास उच्च न्यायालय ने संघ के गठन को एक अवैध साजिश घोषित करते हुए एक निषेधाज्ञा दी और प्रबंधन को 75,000 रुपये की राशि का हर्जाना भी दिया। न्यायालय के इस फैसले ने ट्रेड यूनियनों को उनके अस्तित्व के लिए कानूनी संरक्षण की आवश्यकता को सामने लाया। 1921 में एनएम जोशी द्वारा भारतीय विधायिका में एक ट्रेड यूनियन कानून पेश करने का प्रयास किया गया था। हालाँकि, उनका प्रयास 1926 में पाँच वर्षों के बाद सफल हुआ जब ट्रेड यूनियन अधिनियम को श्रमिकों के गठबंधन और संघ बनाने के अधिकार को वैध बनाने के लिए अधिनियमित किया गया, और उन्हें वास्तविक ट्रेड यूनियन गतिविधियों और उसी से उदित वाली कार्रवाई के लिए नागरिक और आपराधिक अभियोजन से प्रतिरक्षा प्रदान की गई।

1920 से 1929 तक प्रभुत्व रखने वाले भारतीय ट्रेड यूनियन आंदोलन को 1930-34 के दौरान झटका लगा। 1930 के दशक के बाद से, विश्व आर्थिक संकट, जिसे महामंदी के रूप में जाना जाता है, ने श्रमिक वर्ग के दुख और गरीबी को तीव्र कर दिया। लेकिन चुनौती का सामना करने के बजाय, ट्रेड यूनियन आंदोलन ने खुद को राजनीतिक आधार पर विभाजित पाया। 1929 में, AITUC के नागपुर अधिवेशन में, NM जोशी के नेतृत्व में सुधारवादी समूह (नरमपंथी) इस आधार पर टूट गया कि AITUC में कम्युनिस्टों का बोलबाला था। 1930 में, सुधारवादियों ने अपना संगठन, इंडियन ट्रेड यूनियन फेडरेशन बनाया, जिसे बाद में (1933 में) नाम बदलकर नेशनल ट्रेड यूनियन फेडरेशन (NTUF) कर दिया गया। 1931 में कलकत्ता में AITUC का एक और विभाजन हुआ, जब कट्टरपंथी कम्युनिस्ट बाहर

चले गए और एक प्रतिद्वंद्वी श्रमिक संघ, रेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस (RTUC) शुरू किया। इस प्रकार, यह कहा जा सकता है कि भारतीय ट्रेड यूनियन 1931 तक चार समूहों में विभाजित थे , अर्थात्,

(ए) कट्टरपंथियों के नियंत्रण में मूल AITUC,

(बी) आईटीयूएफ (एनटीयूएफ) नरमपंथियों द्वारा नियंत्रित,

(सी) कम्युनिस्टों के नेतृत्व में आरटीयूसी, और

(डी) स्वतंत्र ट्रेड यूनियनों का समूह जो किसी केंद्रीय संगठन से संबद्ध नहीं है, उनमें से प्रमुख हैं ऑल इंडिया रेलवेमेन फेडरेशन और ATLA

द्वितीय विश्व युद्ध (1939-45) ने भारतीय ट्रेड यूनियनों के सामने एक गंभीर प्रश्न खड़ा कर दिया:

"युद्ध के प्रति भारतीय श्रमिकों का दृष्टिकोण क्या होना चाहिए?" यह उत्तर देने के लिए एक कठिन प्रश्न था, क्योंकि युद्ध एक मजदूर विरोधी, नाजी जर्मनी और हमारे पारंपरिक दुश्मन ग्रेट ब्रिटेन के बीच था। कम्युनिस्टों ने, रूसी लाइन का अनुसरण करते हुए, सबसे पहले जर्मनी का समर्थन किया जब उसने ग्रेट ब्रिटेन पर आक्रमण किया, जब उसने रूस पर आक्रमण किया तो उसका विरोध किया। कांग्रेसियों ने अपने भारत छोड़ो आंदोलन के साथ ग्रेट ब्रिटेन का विरोध किया और जेल गए। एम.एन. राय और उनके अनुयायियों ने जर्मनी का घोर विरोध किया; और जब AITUC उनकी लाइन को स्वीकार करने में विफल रही, तो उन्होंने 1941 में जर्मनी के खिलाफ युद्ध के समर्थन में अपना संगठन इंडियन फेडरेशन ऑफ लेबर (आईएफएल) शुरू किया। बदले में, सरकार ने IFL को भारतीय श्रमिकों के सबसे अधिक प्रतिनिधि संगठन के रूप में मान्यता दी।

IFL के गठन के अलावा, युद्ध के दौरान हुई कुछ अन्य घटनाओं का ट्रेड यूनियन आंदोलन पर प्रभाव पड़ा। ये थे: 1942 में भारतीय श्रम सम्मेलन की स्थापना - एक त्रिपक्षीय श्रम मशीनरी - जिसने सरकार, नियोक्ताओं और ट्रेड यूनियनों के बीच चर्चा के लिए एक मंच प्रदान किया; और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधिनियम (जिसने अधिनियम के तहत अपने विवादों के निपटारे के लिए यूनियनों को श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम बनाया) ने युद्ध के बाद देश में ट्रेड यूनियन आंदोलन के विकास में योगदान दिया।

भारतीय ट्रेड यूनियन आंदोलन पर इसके प्रभाव के दृष्टिकोण से, घटनाओं में सबसे महत्वपूर्ण 3 मई, 1947 को भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (INTUC) की स्थापना थी। विभाजित ट्रेड यूनियन आंदोलन तब और विभाजित हो गया जब INTUC गुलजारी लाल नंदा और गांधीवादी विचारधारा में विश्वास करने वाले अन्य समान व्यक्तियों की पहल पर स्थापित किया गया था। सरदार वल्लभभाई पटेल, एक शक्तिशाली कांग्रेसी नेता, इसके पहले अध्यक्ष बने।

स्वतंत्रता के बाद की अवधि

स्वतंत्रता के बाद की अवधि में एटक का और अधिक विघटन देखा गया। 1948 में, समाजवादियों ने हिंद मजदूर पंचायत (HMP) नामक एक अलग राष्ट्रीय संघ की स्थापना की। इंडियन फेडरेशन ऑफ लेबर (IFL) का HMP में विलय हो गया, और दिसंबर 1948 में हिंद मजदूर सभा (HMS) नामक एक नया संगठन अस्तित्व में आया। कुछ ट्रेड यूनियन नेता, जो दिसंबर 1948 में HMS के गठन के लिए समाजवादी नेताओं द्वारा बुलाई गई बैठक में शामिल हुए,

HMS के नए उद्देश्यों के सिद्धांतों से सहमत नहीं थे। नतीजतन, 30 अप्रैल, 1949 को कम्युनिस्ट और समाजवादी समूहों के बाहर के कट्टरपंथियों द्वारा यूनाइटेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस (UTUC) का गठन किया गया था।

1950 में संविधान को अपनाने के बाद, राजनीतिक दलों की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो गई। सभी राजनीतिक दलों ने अधिक से अधिक ट्रेड यूनियनों और श्रमिकों को अपने प्रभाव और नियंत्रण में रखने की पूरी कोशिश की। 1955 में, भारतीय जनसंघ ने भारतीय मजदूर संघ (BMS) की स्थापना की, जो बाद में भारतीय जनता पार्टी के प्रभाव में आ गया। जब भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को सत्तारूढ़ कांग्रेस और संगठन कांग्रेस में विभाजित किया गया, तो पूर्व ने इंटक को अपने कब्जे में ले लिया, जबकि बाद में अहमदाबाद में राष्ट्रीय श्रम संगठन (एनएलओ) नामक एक नया संगठन स्थापित किया। इसी तरह, जब कम्युनिस्ट सीपीआई और सीपीएम में विभाजित हो गए, तो SITU सीपीआई के नियंत्रण में आ गया, जबकि सीपीएम ने सेंटर फॉर इंडियन ट्रेड यूनियन (CITU) की स्थापना की।

व्यापार संघ आज के दौर में

संघवाद आज मंदी के दौर में है और भारत कोई अपवाद नहीं है। 1980 और 1990 के दशक पूरी दुनिया में ट्रेड यूनियनवाद के लिए बुरे साल रहे हैं। अधिकांश विकसित देशों में संघ की सदस्यता घट रही है, संयुक्त राज्य अमेरिका और ब्रिटेन अग्रणी हैं, और यहां तक कि जापान भी पीछे नहीं है। अन्य देशों में यूनियनों की मान्यता समाप्त करने के समानांतर भारत में पंजीकरण रद्द करना रहा है। कार्यकर्ताओं की उदासीनता भी कोई छोटी बात नहीं है। नई आर्थिक नीति (1991) के तहत पूंजीवाद का पुनः दावा एक प्रमुख कारण रहा है, लेकिन ऐसा लगता है कि ट्रेड यूनियनों और उनके रैंक और फ़ाइल सदस्यों के बीच एक कील भी काम कर रही है। समग्र प्रवृत्ति संघीकृत कार्यबल में गिरावट, बढ़ती बेरोजगारी, प्रतिकूल जन भावना और प्रबंधन और यूनियनों पर सरकार के दबाव के हैं।

3.3 भारत में ट्रेड यूनियनों की समस्याएं और कमजोरियां

हमारे देश में ट्रेड यूनियन आंदोलन निम्नलिखित कमजोरियों से ग्रस्त है

1. **असमान विकास** ट्रेड यूनियन बड़े पैमाने के उद्योग क्षेत्र और बड़े औद्योगिक केंद्रों में केंद्रित हैं। छोटे क्षेत्र, कृषि श्रम और घरेलू क्षेत्र में ट्रेड यूनियन गतिविधि बहुत कम है।

व्यापार संघवाद ने भारत में श्रमिक वर्ग के केवल एक हिस्से को ही छुआ है।

2. **छोटा आकार** अधिकांश संघों की सदस्यता कम है, हालांकि संघों की संख्या और संघ की सदस्यता बढ़ रही है, प्रभावी होने के लिए औसत सदस्यता अपर्याप्त है।

3. **कमजोर वित्तीय स्थिति** यूनियनों की औसत वार्षिक आय बहुत कम और अपर्याप्त है। सदस्यता दर कम है और कई सदस्य समय पर सदस्यता का भुगतान नहीं करते हैं।

अपनी आर्थिक दुर्बलता के कारण अधिकांश यूनियन श्रमिकों के लिए कल्याणकारी कार्यक्रम चलाने की स्थिति में नहीं हैं।

4. **राजनीतिक नेतृत्व** ट्रेड यूनियन राजनीतिक दलों और बाहरी लोगों के नेतृत्व और नियंत्रण में हैं। राजनेता अपने व्यक्तिगत और राजनीतिक लाभ के लिए यूनियनों और श्रमिकों का शोषण करते हैं। इस प्रकार, इस प्रकार का नेतृत्व भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन के लिए बहुत हानिकारक है।
5. **यूनियनों की बहुलता** एक ही प्रतिष्ठान या उद्योग में कई यूनियनें मौजूद हैं। भारत में ट्रेड यूनियन आंदोलन के अस्वास्थ्यकर विकास के लिए परस्पर विरोधी विचारधारा वाले प्रतिद्वंद्वी संघों का अस्तित्व बहुत हद तक जिम्मेदार है। कुछ मामलों में, नियोक्ता अपनी सौदेबाजी की शक्ति को कम करने के लिए यूनियनों में विभाजन को प्रोत्साहित करते हैं।
6. **मान्यता की समस्या** नियोक्ता किसी भी संघ को मान्यता देने के लिए बाध्य नहीं हैं। नियोक्ता बढ़ी हुई श्रम लागत, व्यवसाय के संचालन में संभावित व्यवधान, या प्रबंधकीय नियंत्रण के नुकसान के बारे में चिंताओं के कारण ट्रेड यूनियनों को मान्यता देने का विरोध करते हैं। वे संघीकरण के प्रयासों को हतोत्साहित करने के लिए विभिन्न हथकंडे अपनाते हैं, जैसे कि संघ-विरोधी अभियान, श्रमिकों को डराना-धमकाना या मान्यता प्रक्रियाओं में देरी करना।
7. **वैतनिक पदाधिकारियों की अनुपस्थिति** अधिकांश यूनियनों में वेतनभोगी पदाधिकारी नहीं हैं। मानद आधार पर काम करने वाले संघ के कार्यकर्ता संघ की गतिविधियों के लिए केवल सीमित समय और ऊर्जा समर्पित करते हैं। उचित प्रशिक्षण की कमी, कमजोर वित्तीय स्थिति और राजनीतिक नेतृत्व के कारण पर्याप्त ज्ञान और कौशल की कमी इस स्थिति के मुख्य कारण हैं।
8. **सदस्यों की उदासीनता** अधिकांश कार्यकर्ता संघ की गतिविधियों में गहरी दिलचस्पी नहीं लेते हैं। यूनियनों की आम सभाओं में उपस्थिति बहुत कम होती है।
9. **नियोक्ताओं का विरोध** भारत में ट्रेड यूनियनों को नियोक्ताओं के विरोध का सामना करना पड़ता है। कई नियोक्ता श्रमिक नेताओं को धमकाने या पीड़ित करने की कोशिश करते हैं, प्रतिद्वंद्वी यूनियनों को शुरू करते हैं और संघ के अधिकारियों को रिश्त देते हैं, इस प्रकार उनके गठन के उद्देश्यों को पराजित करते हैं।
10. **अंतर-संघ प्रतिद्वंद्विता** एकाधिक संघ प्रतिद्वंद्विता पैदा करते हैं। श्रमिकों के बीच अधिक प्रभाव हासिल करने के लिए यूनियनें एक-दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश करती हैं। आपसी कलह का फायदा नियोक्ता उठाते हैं। अंतर्संघ प्रतिद्वंद्विता सामूहिक सौदेबाजी की शक्ति को कमजोर करती है और अपने वैध अधिकारों को हासिल करने में श्रमिकों की प्रभावशीलता को कम करती है।

3.4 ट्रेड यूनियन अधिनियम, 1926

ट्रेड यूनियन अधिनियम, 1926 एक ऐतिहासिक कानून के रूप में खड़ा है जो भारत में ट्रेड यूनियनों के गठन, पंजीकरण और कामकाज के लिए एक कानूनी ढांचा प्रदान करता है। औपनिवेशिक काल के दौरान अधिनियमित, अधिनियम श्रमिकों को सशक्त बनाने, उनके अधिकारों की रक्षा करने और नियोक्ताओं के साथ सामूहिक सौदेबाजी को सक्षम करने में सहायक रहा है। आइए हम इस परिवर्तनकारी विधान के प्रमुख प्रावधानों के बारे में जानें:

1. **ट्रेड यूनियन की परिभाषा (धारा 2(एच)):** एकट किसी भी संयोजन के रूप में ट्रेड यूनियन की परिभाषा प्रदान करता है, चाहे वह अस्थायी हो या स्थायी, मुख्य रूप से श्रमिकों और नियोक्ताओं के बीच या श्रमिकों और श्रमिकों के बीच संबंधों को विनियमित करने के उद्देश्य से बनाया गया हो। , या किसी व्यापार या व्यवसाय के संचालन पर प्रतिबंधात्मक शर्तें लगाने के लिए।
2. **ट्रेड यूनियनों का पंजीकरण (धारा 3-8):** एकट ट्रेड यूनियनों को उपयुक्त सरकारी प्राधिकरण के साथ स्वेच्छा से खुद को पंजीकृत करने की अनुमति देता है। पंजीकरण ट्रेड यूनियन को कानूनी मान्यता और कुछ विशेषाधिकार प्रदान करता है, जैसे कि संपत्ति रखने की क्षमता और ट्रेड यूनियन के नाम पर मुकदमा करने और मुकदमा चलाने की क्षमता।
3. **न्यूनतम सदस्यता (धारा 9):** पंजीकरण के लिए अर्हता प्राप्त करने के लिए, एक ट्रेड यूनियन में कम से कम सात सदस्य होने चाहिए जो किसी भी उद्योग या व्यवसाय में काम कर रहे हों।
4. **ट्रेड यूनियनों के उद्देश्य और कोष (धारा 15-19):** अधिनियम ट्रेड यूनियनों के लिए अनुमेय वस्तुओं को निर्दिष्ट करता है, जिसमें आम तौर पर रोजगार की स्थिति का विनियमन, मजदूरी और लाभों की बातचीत, सदस्यों के लिए बेहतर काम करने की स्थिति हासिल करना और बढ़ावा देना शामिल है। श्रमिकों का कल्याण। यह इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए स्ट्राइक फंड और सामान्य फंड जैसे फंड स्थापित करने के प्रावधान भी प्रदान करता है।
5. **कानूनी कार्यवाही से मुक्ति (धारा 17 और 18):** अधिनियम पंजीकृत ट्रेड यूनियनों और उनके पदाधिकारियों को कुछ स्थितियों में उनके खिलाफ की गई कानूनी कार्यवाहियों से प्रतिरक्षा प्रदान करता है, बशर्ते कि कार्यवाई अच्छे विश्वास और दुर्भावनापूर्ण इरादे से की गई हो।
6. **पंजीकृत ट्रेड यूनियनों के अधिकार और दायित्व (धारा 22-25):** पंजीकृत ट्रेड यूनियनों को सामूहिक सौदेबाजी में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार, औद्योगिक विवादों में भाग लेने का अधिकार, और पंजीकृत की पुस्तकों का निरीक्षण करने का अधिकार सहित कुछ अधिकारों का आनंद मिलता है। उनके पास जिम्मेदारियां भी हैं, जैसे संघ के लिए वित्तीय दायित्वों को पूरा करने की जिम्मेदारी और सटीक खातों को बनाए रखने का कर्तव्य।
7. **विघटन और समामेलन (धारा 24-27):** एकट ट्रेड यूनियनों के विघटन और एकीकरण की प्रक्रिया को रेखांकित करता है, जिसमें उन परिस्थितियों को भी शामिल किया गया है जिनके तहत एक ट्रेड यूनियन को भंग या दूसरे के साथ विलय किया जा सकता है।
8. **राजनीतिक कोष (धारा 28):** अधिनियम ट्रेड यूनियनों को कुछ शर्तों और प्रतिबंधों के अधीन राजनीतिक दलों को योगदान देने या राजनीतिक गतिविधियों का समर्थन करने के लिए अलग राजनीतिक कोष स्थापित करने की अनुमति देता है।

ट्रेड यूनियन अधिनियम, 1926 के इन प्रावधानों ने भारत में ट्रेड यूनियनों के लिए एक कानूनी ढांचा प्रदान किया है, उन्हें मान्यता, अधिकार और विशेषाधिकार प्रदान किए हैं, और उन्हें प्रभावी रूप से श्रमिकों के हितों का

प्रतिनिधित्व करने और उनकी वकालत करने में सक्षम बनाया है। यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि श्रम की बदलती गतिशीलता को संबोधित करने और श्रमिकों के अधिकारों और सुरक्षा को बढ़ाने के लिए अधिनियम में बाद में संशोधन किए गए हैं।

3.5 सारांश

यह अध्याय भारत में ट्रेड यूनियनों के ऐतिहासिक विकास, उनकी चुनौतियों और कमियों और 1926 के ट्रेड यूनियन अधिनियम द्वारा निर्भाई गई महत्वपूर्ण भूमिका का अवलोकन प्रदान करता है। अध्याय 19वीं शताब्दी के अंत से भारत में ट्रेड यूनियनों के विकास का पता लगाने के साथ शुरू होता है, जब श्रमिकों ने शोषणकारी कामकाजी परिस्थितियों, कम वेतन और लंबे घंटों को संबोधित करने के लिए खुद को संगठित करना शुरू कर दिया था। प्रारंभ में, ट्रेड यूनियनों ने विशिष्ट उद्योगों या व्यवसायों पर ध्यान केंद्रित किया, लेकिन धीरे-धीरे विनिर्माण, कृषि, सेवाओं और लोक प्रशासन जैसे विभिन्न क्षेत्रों में अपना दायरा बढ़ाया। यह अध्याय भारत में ट्रेड यूनियनों द्वारा सामना की जाने वाली समस्याओं और कमजोरियों पर प्रकाश डालता है। विखंडन को एक महत्वपूर्ण मुद्दे के रूप में पहचाना जाता है, जिसमें एक ही उद्योग के भीतर कई यूनियनों काम करती हैं, जिससे संघर्ष होता है और सौदेबाजी की शक्ति कमजोर होती है। ट्रेड यूनियनों के बीच एकता की कमी ने भी आम चिंताओं को दूर करने और नियोक्ताओं के साथ प्रभावी ढंग से बातचीत करने की उनकी क्षमता में बाधा उत्पन्न की है। इसके अतिरिक्त, कुछ ट्रेड यूनियनों ने लोकतंत्र, पारदर्शिता और जवाबदेही से संबंधित आंतरिक चुनौतियों का सामना किया है, जिसके परिणामस्वरूप अप्रभावी प्रतिनिधित्व और सीमित कार्यकर्ता भागीदारी हुई है। अध्याय 1926 के ट्रेड यूनियन अधिनियम पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ता है, भारत में ट्रेड यूनियनों को विनियमित करने के लिए एक ऐतिहासिक कानून बनाया गया है। अधिनियम ट्रेड यूनियनों के गठन, पंजीकरण और कामकाज के लिए एक कानूनी ढांचा प्रदान करता है। अधिनियम के प्रमुख प्रावधानों को रेखांकित किया गया है। अधिनियम का महत्व ट्रेड यूनियनों को कानूनी मान्यता और विशेषाधिकार प्रदान करने, संपत्ति रखने के लिए उन्हें सशक्त बनाने, नियोक्ताओं के साथ समझौते करने और सामूहिक सौदेबाजी में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करने में निहित है।

बोध प्रश्नों-

प्रश्न 1. भारत में व्यापार संघ की विकास यात्रा को रेखांकित कीजिए?

प्रश्न 2. भारत में ट्रेड यूनियनों की क्या समस्याएं और कमजोरियां हैं?

प्रश्न 3. ट्रेड यूनियन अधिनियम, 1926 के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण अधिनियमों का विश्लेषण कीजिए?

3.6 परिभाषिक शब्दावली

AITUC: All India Trade Union Congress

INTUC: Indian National Trade Union Congress

[illegible]

प्रश्न 3. ट्रेड यूनियन अधिनियम, 1926 के अंतर्गत कुछ महत्वपूर्ण अधिनियमों का विश्लेषण कीजिए?

This image shows a blank sheet of white paper with horizontal ruling lines. The lines are evenly spaced and extend across the width of the page. There are no margins, text, or other markings on the paper.

इकाई 4 औद्योगिक संबंध की अवधारणा और उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

- 4.0 उद्देश्य
- 4.1 प्रस्तावना
- 4.2 औद्योगिक संबंध की अवधारणा
- 4.3 औद्योगिक संबंध का उद्देश्य
- 4.4 औद्योगिक संबंध की विशेषताएँ और कार्यक्षेत्र एवं महत्व
- 4.5 सारांश
- 4.6 पारिभाषिक शब्दावली
- 4.7 संदर्भित पुस्तकें
- 4.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप: औद्योगिक संबंध की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे; इसके दायरे की जांच करें; इसके महत्व पर चर्चा करें; और औद्योगिक संबंध का वर्णन कर सकेंगे। पाठक औद्योगिक संबंध को समझने में सक्षम होंगे। शिक्षार्थी औद्योगिक संबंध के उद्देश्य के बारे में जानेंगे। शिक्षार्थी को औद्योगिक संबंध की बुनियादी समझ होगी।

4.1 परिचय

सरल शब्दों में औद्योगिक संबंध किसी भी उद्योग में कर्मचारी कर्मचारी संबंध से संबंधित है। सरकार ने औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 को लागू करके औद्योगिक संबंधों को और अधिक स्वस्थ बनाने का प्रयास किया है। विवाद को हल करने और विवाद की गंभीरता को कम करने के लिए। इससे बदले में संबंधों में सुधार होता है।

उद्योग क्या है? जहां हम बेहतर संबंध चाहते हैं। "उद्योग का अर्थ है किसी नियोक्ता और उसके कर्मचारी के बीच सहयोग से की गई कोई भी व्यवस्थित गतिविधि, चाहे ऐसे कामगार ऐसे नियोक्ता द्वारा सीधे या किसी एजेंसी के माध्यम से या किसी एजेंसी के माध्यम से उत्पादन आपूर्ति या माल या स्रोतों के वितरण के लिए एक अवलोकन के साथ संतुष्ट करने के लिए नियोजित हों। मानवीय चाहत या इच्छाएँ (इच्छाएँ जो केवल आध्यात्मिक या धार्मिक प्रकृति की हों) या नहीं

- (i) इस तरह की गतिविधि को करने के उद्देश्य से कोई पूंजी निवेश की गई है या
- (ii) इस तरह की गतिविधि एक मकसद से की जाती है कोई लाभ या लाभ कमाने के लिए और किसी प्रतिष्ठान द्वारा की जाने वाली बिक्री या व्यवसाय या दोनों को बढ़ावा देने से संबंधित कोई भी गतिविधि शामिल है लेकिन इसमें शामिल नहीं है।

- i) सामान्य कृषि संचालन
- ii) अस्पताल, औषधालय
- iii) शैक्षिक, वैज्ञानिक अनुसंधान प्रशिक्षण संस्थान,
- iv) धर्मार्थ परोपकारी सेवा
- v) खादी ग्रामोद्योग
- vi) घरेलू सेवाएं आदि।

4.2 औद्योगिक संबंध की अवधारणा concept of industrial Relationship

औद्योगिक संबंध (Industrial Relation): अवधारणा

संस्थागत रूप से, औद्योगिक संबंध जॉन आर. कॉमन्स द्वारा स्थापित किए गए थे जब उन्होंने 1920 में विस्कॉन्सिन विश्वविद्यालय में पहला शैक्षणिक औद्योगिक संबंध कार्यक्रम बनाया था।

डेल योडर के अनुसार, आईआर संबंधों के एक पूरे क्षेत्र का पदनाम है जो उद्योग की रोजगार प्रक्रियाओं में पुरुषों और महिलाओं के आवश्यक सहयोग के कारण मौजूद है।

आर्मस्ट्रांग ने आईआर को परिभाषित किया है "आईआर उन प्रणालियों और प्रक्रियाओं से संबंधित है जो यूनियनों और नियोक्ताओं द्वारा उपयोग किए जाने वाले प्रयासों और रोजगार की अन्य शर्तों के लिए इनाम निर्धारित करने के लिए नियोजित और उनके नियोक्ताओं के हितों की रक्षा करने और उन तरीकों को विनियमित करने के लिए हैं जिनसे नियोक्ता व्यवहार करते हैं।

वी. बी. सिंह की राय में, "औद्योगिक संबंध आधुनिक उद्योगों में नियोक्ता-कर्मचारी की बातचीत से उत्पन्न सामाजिक संबंधों का एक अभिन्न पहलू है, जो राज्य द्वारा अलग-अलग डिग्री में विनियमित होते हैं, संगठित सामाजिक ताकतों के संयोजन के साथ और मौजूदा से प्रभावित होते हैं। संस्थानों। इसमें संस्थागत स्तर पर राज्य, कानूनी प्रणाली, और श्रमिकों और नियोक्ताओं के संगठनों का अध्ययन शामिल है; और औद्योगिक संगठन (प्रबंधन सहित), पूंजी संरचना (प्रौद्योगिकी सहित), श्रम बल का मुआवजा, और सभी आर्थिक स्तर पर बाजार की शक्तियों का अध्ययन। औद्योगिक संबंध मुख्यतः चार प्रकार के होते हैं

- I. श्रम संबंध अर्थात्, संघ-प्रबंधन के बीच संबंध (श्रम प्रबंधन संबंध के रूप में भी जाना जाता है);
- II. समूह संबंध यानी, कामगारों के विभिन्न समूहों के बीच संबंध, यानी काम करने वाले, पर्यवेक्षक, तकनीकी व्यक्ति आदि।
- III. नियोक्ता-कर्मचारी संबंध यानी, प्रबंधन और कर्मचारियों के बीच संबंध।
- IV. औद्योगिक संबंधों के तीन पहलू हैं: विज्ञान निर्माण, समस्या हल करना और आचार संबन्धी.

4.3 औद्योगिक संबंध का उद्देश्य Objective of (IR)

औद्योगिक संबंध (IR) के उद्देश्य: औद्योगिक संबंधों का प्राथमिक उद्देश्य कर्मचारियों और नियोक्ताओं या संचालकों और प्रबंधन के बीच अच्छे और स्वस्थ संबंधों को बनाए रखना और विकसित करना है। वही अन्य उद्देश्यों में उप-विभाजित है।

1. श्रमिकों और प्रबंधन के बीच उनके हितों की रक्षा करके अच्छे संबंध स्थापित करना और उन्हें बढ़ावा देना।
2. संबंधित पक्षों के हितों के बीच पारस्परिकता विकसित करके औद्योगिक संघर्षों और हड़तालों से बचें। 3. जहां तक संभव हो हड़ताल, तालाबन्दी और घेराव कर मजदूरों की आर्थिक स्थिति में सुधार करते रहें। 4. कर्मचारियों को प्रबंधन और निर्णय लेने की प्रक्रिया में भाग लेने का अवसर प्रदान करें।
5. कर्मचारी टर्नओवर और अनुपस्थिति पर अंकुश लगाने के लिए संगठन में उत्पादकता बढ़ाएँ।
6. श्रमिकों और प्रबंधन के बीच संबंधों के मामलों में, जहां तक संभव और व्यावहारिक हो, सरकार के अनावश्यक हस्तक्षेप से बचें।
7. मुनाफे के बंटवारे और प्रबंधकीय निर्णयों में श्रम साझेदारी के आधार पर औद्योगिक लोकतंत्र की स्थापना और पोषण।
8. एक नियोक्ता के रूप में सरकार की भागीदारी को शामिल करके औद्योगिक गतिविधि का सामाजिककरण करें।

4.4 औद्योगिक संबंधों की विशेषताएँ और कार्यक्षेत्र , महत्व Characteristics and scope and Importance of industrial relations

औद्योगिक संबंधों की विशेषताएँ

1. औद्योगिक संबंधों में पक्षकार गतिविधियाँ: मूल रूप से, दो पक्ष-कार्यकर्ता और प्रबंधन संबंध स्थापित करने की प्रक्रिया में शामिल होते हैं। हालांकि, सरकारी एजेंसियाँ औद्योगिक संबंधों को विनियमित/बनाए रखती हैं।
2. अंतःक्रियात्मक प्रक्रिया: औद्योगिक संबंध विभिन्न व्यक्तियों/पार्टियों के बीच अंतःक्रिया से उत्पन्न होते हैं। वे पर्यवेक्षक, श्रमिक ट्रेड यूनियन, नियोक्ता संघ हैं। अतः अंतःक्रियात्मक प्रक्रिया निम्नलिखित के बीच होती है-
 - i. पर्यवेक्षक और औद्योगिक कर्मचारी
 - ii. पर्यवेक्षक और समूह/टीम के सदस्य
 - iii. प्रबंधन और ट्रेड यूनियन नेता
 - iv. नियोक्ता संघ और श्रमिक संघ
3. टू-वे कम्युनिकेशन: (IR) एक टू-वे कम्युनिकेशन प्रोसेस है। एक पक्ष प्रोत्साहन देता है, दूसरा पक्ष उत्तेजनाओं के प्रति अनुक्रिया करता है। इसलिए, इस तरह के तंत्र के माध्यम से होने वाला लेन-देन या तो पूरक या क्रॉस होता है। जितने अधिक पूरक लेन-देन होंगे, औद्योगिक संबंधों की स्थिति उतनी ही बेहतर होगी।

4. आईआर के लिए दृष्टिकोण: औद्योगिक संगठनों में आईआर पैटर्न को आकार देने के लिए विभिन्न दृष्टिकोण योगदान करते हैं। इन दृष्टिकोणों में समाजशास्त्रीय, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक-नैतिक, मानवीय संबंध, गांधीवादी, प्रणालीगत दृष्टिकोण आदि शामिल हैं।
5. राज्य का हस्तक्षेप: राज्य औद्योगिक संबंधों की स्थितियों को प्रभावित करने के लिए अपनी गतिविधियों के माध्यम से दोनों पक्षों के लिए सूत्रधार, मार्गदर्शक, परामर्शदाता के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उद्योग।
6. संगठनात्मक वातावरण: यदि, अनुकूल और अनुकूल संगठनात्मक वातावरण प्रबल होता है, तो कर्मचारी घर जैसा महसूस करते हैं, सहज रूप से बातचीत करते हैं, अपनी समस्याओं, कठिनाइयों के बारे में सीधे बॉस से संवाद करते हैं और काम के संबंध में विचारों का आदान-प्रदान/साझा करने के लिए उनके करीब आते हैं, नौकरी में बदलाव डिजाइन, किसी भी ऑपरेटिव सिस्टम, प्रक्रिया आदि का परिचया ऐसी स्थिति में, स्वस्थ मानवीय संबंधों की स्थापना की संभावना विकसित होती है और ये संबंध संगठन के औद्योगिक संबंध पैटर्न को प्रभावित करते हैं।
7. विवाद निपटान प्रक्रिया: यदि, प्रबंधन कर्मी द्विपक्षीय बातचीत प्रक्रिया के माध्यम से श्रमिकों की शिकायतों / विवादों को निपटाने के दर्शन पर विश्वास करते हैं, तो वे आपसी बातचीत, जिम्मेदारी साझा करने, सहयोग, साझेदारी व्यवहार और आपसी विश्वास पर अधिक जोर देते हैं। इस प्रक्रिया में श्रमिकों के दृष्टिकोण, व्यवहार और विचार पैटर्न में परिवर्तन होने की संभावना है जो औद्योगिक संबंध को प्रभावित करते हैं।

औद्योगिक संबंध का कार्यक्षेत्र: Scope of (IR)

औद्योगिक संबंध (IR) की उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर, आईआर के दायरे को आसानी से निम्नानुसार चित्रित किया जा सकता है:

1. श्रम संबंध, यानी श्रमिक संघ और प्रबंधन के बीच संबंध।
2. नियोक्ता-कर्मचारी संबंध यानी प्रबंधन और कर्मचारियों के बीच संबंध।
3. औद्योगिक संबंधों को बनाए रखने में विभिन्न दलों की भूमिका, नियोक्ता, कर्मचारी और राज्या।
4. विवाद उत्पन्न होने की स्थिति में नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच संघर्षों से निपटने का तंत्र।

औद्योगिक संबंध का महत्व Importance of (IR)

औद्योगिक संबंधों का क्षेत्र प्रबंधन और श्रमिकों, संघ के प्रतिनिधित्व वाले श्रमिकों के विशेष समूहों के बीच संबंधों को देखता है। औद्योगिक संबंध मूल रूप से नियोक्ता, कर्मचारियों और सरकार, और संस्थानों और संगठनों के बीच बातचीत करते हैं जिसके माध्यम से इस तरह की बातचीत मध्यस्थ होती है।

बोध प्रश्न

1. औद्योगिक संबंध की अवधारणा पर चर्चा कीजिये ?
2. औद्योगिक संबंध के उद्देश्यों का वर्णन कीजिये है?

3. औद्योगिक संबंधों की विशेषता एवं कार्यक्षेत्र पे प्रकाश डाले ?

4.5 सारांश

(IR) प्रकृति में गतिशील है। आईआर की प्रकृति को एक दिए गए सामाजिक-आर्थिक संदर्भ में प्रमुख खिलाड़ियों जैसे नियोक्ताओं, कर्मचारियों, ट्रेड यूनियन और राज्य के बीच लेनदेन के जटिल सेट के परिणाम के रूप में देखा जा सकता है। एक मायने में, किसी देश के सामाजिक-आर्थिक संदर्भ में बदलाव के साथ आईआर की प्रकृति में परिवर्तन अपरिहार्य हो गया है।

4.6 पारिभाषिक शब्दावली

Trade union: ट्रेड यूनियन : सामूहिक कार्रवाई के माध्यम से अपने हितों की रक्षा और बढ़ावा देने के लिए गठित श्रमिकों का एक स्वैच्छिक संगठन है।

Industrial relationship(IR): औद्योगिक संबंध किसी भी उद्योग में कर्मचारी कर्मचारी संबंध से संबंधित है।

Industrial relation machinery: औद्योगिक विवाद अधिनियम के तहत विवादों के निपटारे के लिए मशीनरी उपलब्ध कराई गई है। इसमें सुलह अधिकारी, सुलह बोर्ड, श्रम न्यायालय, औद्योगिक न्यायाधिकरण और राष्ट्रीय न्यायाधिकरण शामिल हैं।

4.7 संदर्भित पुस्तकें

श्रम कल्याण और औद्योगिक सम्बन्ध- बालेश्वर पाण्डेय, रावत प्रकाशन

S.C. Srivastav- Industrial Relations Machinery , Deep & Deep Publications.

4.8 बोध प्रश्नो के उत्तर

1.

[illegible]

[illegible]

This image shows a single sheet of white paper with horizontal ruling lines. The lines are evenly spaced and extend across the width of the page. There are no margins, text, or other markings on the paper.

इकाई 5 औद्योगिक संबंधों के प्रभावी कारण

इकाई की रूपरेखा

- 5.0 उद्देश्य
- 5.1 प्रस्तावना
- 5.2 औद्योगिक संबंधों को प्रभावित करने वाले कारक
- 5.3 निम्नतर औद्योगिक संबंधों के कारण-
- 5.4 औद्योगिक संबंध सुधारने के सुझाव
- 5.5 सारांश
- 5.6 पारिभाषिक शब्दावली
- 5.7 संदर्भित पुस्तकें
- 5.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप: औद्योगिक संबंधों को प्रभावित करने वाले कारक की व्याख्या कर सकेंगे; इसके प्रभावी कारणों पर चर्चा कर सकेंगे; और औद्योगिक संबंध का वर्णन कर सकेंगे। पाठक औद्योगिक संबंधों को प्रभावित करने वाले कारक को समझने में सक्षम होंगे। शिक्षार्थी खराब औद्योगिक संबंधों के कारण के बारे में जानेंगे। शिक्षार्थी को औद्योगिक संबंध सुधार के लिए सुझाव की बुनियादी समझ होगी।

5.1 प्रस्तावना

औद्योगिक संबंध शब्द कर्मचारियों और प्रबंधन के बीच संबंध की व्याख्या करता है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से संघ-नियोक्ता संबंध से उपजा है। औद्योगिक संबंधों को उद्योग में संबंधों और बातचीत के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, विशेष रूप से श्रम और प्रबंधन के बीच उद्योग के मामलों के प्रबंधन के संबंध में उनके समग्र दृष्टिकोण और दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप, न केवल प्रबंधन और प्रबंधन की बेहतरी के लिए श्रमिकों के साथ-साथ उद्योग और अर्थव्यवस्था के लिए भी।

औद्योगिक संबंधों की प्रभावशीलता

यह सामग्री, जनशक्ति और लागत की बर्बादी को कम करने में मदद करता है। आर्थिक विकास और विकास: अच्छे और सामंजस्यपूर्ण औद्योगिक संबंधों के परिणाम स्वरूप दक्षता में वृद्धि होती है और इसलिए समृद्धि होती है, जो बदले में कारोबार को कम करती है और संगठन को अन्य ठोस लाभ देती है। यह आर्थिक विकास और विकास को बढ़ावा देता है।

एक प्रभावी औद्योगिक संबंध सुनिश्चित करने के लिए ये आवश्यक है:

औद्योगिक संबंधों का सबसे महत्वपूर्ण लाभ यह है कि यह उत्पादन की निरंतरता सुनिश्चित करता है। इसका मतलब है, प्रबंधक से लेकर श्रमिकों तक सभी के लिए निरंतर रोजगार। संसाधनों का पूरी तरह से उपयोग किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप अधिकतम संभव उत्पादन होता है।

5.2 औद्योगिक संबंधों को प्रभावित करने वाले कारक: Factors influencing Industrial Relations-

'औद्योगिक संबंध' शब्द में 'उद्योग' और 'संबंध' शामिल हैं। उद्योग का अर्थ किसी भी उत्पादक गतिविधि से है जिसमें एक व्यक्ति जुड़ा हुआ है। इसमें शामिल हैं-

(ए) प्राथमिक गतिविधियाँ जैसे कृषि, मत्स्य पालन, वृक्षारोपण, वानिकी, बागवानी, खनन आदि और (बी) माध्यमिक गतिविधियाँ जैसे निर्माण, व्यापार, परिवहन, वाणिज्य, बैंकिंग, संचार आदि। आर्थिक रूप से, उद्योग का मतलब द्वितीयक क्षेत्र है जहां उत्पादन के कारक (भूमि, श्रम, पूंजी और उद्यम या चार एम - पुरुष, सामग्री, पैसा और मशीन) उत्पादन के उद्देश्य से लाभप्रद रूप से कार्यरत हैं, और जहां एक व्यावसायिक संगठन मौजूद है। 'संबंध' का अर्थ है 'संबंध जो उद्योग में नियोक्ता और उसके कार्य-बल के बीच मौजूद हैं।' अलग-अलग लेखकों ने औद्योगिक संबंध शब्द को कुछ अलग तरीके से परिभाषित किया है।

औद्योगिक संबंध का उदाहरण :

संघ का आयोजन, सामूहिक सौदेबाजी और काम पर हड़ताल औद्योगिक संबंधों के प्रमुख उदाहरण हैं, क्योंकि ये तीन क्रियाएं हैं जिनमें संगठित श्रम और प्रबंधन दोनों की सक्रिय भागीदारी शामिल है।

औद्योगिक संबंधों को प्रभावित करने वाले कारक: औद्योगिक संबंध विभिन्न कारकों से प्रभावित होते हैं जैसे संस्थागत कारक, आर्थिक कारक और तकनीकी कारक:

- **(Institutional factors) संस्थागत कारक:** इन कारकों में सरकार शामिल है नीति, श्रम कानून, स्वेच्छिक अदालतें, सामूहिक समझौते, कर्मचारी अदालतें, नियोक्ता संघ, सामाजिक संस्थाएँ जैसे समुदाय, जाति, संयुक्त परिवार, पंथ, विश्वासों की प्रणाली, के दृष्टिकोण काम करता है, शक्ति की प्रणाली, स्थिति, आदि।
- **(Economic factors) आर्थिक कारक:** इन कारकों में आर्थिक शामिल हैं संगठनों, जैसे पूंजीवादी, साम्यवादी, मिश्रित, आदि की संरचना श्रम शक्ति, श्रम शक्ति की मांग और आपूर्ति आदि
- **(Technological factors) तकनीकी कारक:** इन कारकों में मशीनीकरण, स्वचालन, युक्तिकरण, कम्प्यूटरीकरण, आदि।

5.3 निम्नतर औद्योगिक संबंधों के कारण- Reasons of Inferior Industrial Relations-

औद्योगिक संबंधों का दृश्य संतोषजनक नहीं है और यह बार-बार देखने को मिलता है हड़ताल, घेराव, तालाबंदी और अन्य प्रकार के औद्योगिक विवादाकई आर्थिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, तकनीकी और राजनीतिक खराब औद्योगिक संबंधों के लिए जिम्मेदार कारक:

खराब मजदूरी और काम करने की खराब स्थिति इसका मुख्य कारण है प्रबंधन और श्रम के बीच अस्वास्थ्यकर संबंधों के लिए। मजदूरी से अनधिकृत कटौती, अनुषंगी लाभों का अभाव, पदोन्नति के अवसरों का अभाव, नौकरी से असंतोष मूल्यांकन और प्रदर्शन मूल्यांकन के तरीके, दोषपूर्ण प्रोत्साहन योजनाएँ अन्य आर्थिक कारण हैं। जब नियोक्ता न्यायसंगत और उचित पारिश्रमिक और अच्छे काम से इनकार करना और मजदूर वर्ग के लिए रहने की स्थिति, ट्रेड यूनियन आंदोलन और औद्योगिक शांति भंग होती है। अपर्याप्त ढांचागत सुविधाएँ, खराब संयंत्र और मशीनरी, खराब लेआउट, असंतोषजनक रखरखाव और अन्य भौतिक और तकनीकी कारण भी औद्योगिक संघर्ष में योगदान करते हैं।

दोषपूर्ण संचार प्रणाली, पर्यवेक्षण का कमजोर पड़ना और आदेश, ट्रेड यूनियनों की गैर मान्यता, अनुचित व्यवहार, सामूहिक समझौतों और स्थायी आदेशों का उल्लंघन और श्रम कानून खराब संबंधों के संगठनात्मक कारण हैं।

काम की अरुचिकर प्रकृति मुख्य सामाजिक कारण है। कारखाना प्रणाली और मशीन ने विशेषज्ञता और कार्यकर्ता को अधीनस्थ बना दिया है। कार्यकर्ता में गर्व और संतुष्टि की भावना खो गई है। समाज में तनाव और संघर्ष, जोड़ पारिवारिक का टूटना, बढ़ती असहिष्णुता, औद्योगिक संबंध। नौकरी और निजी जीवन से असंतोष औद्योगिक संघर्षों में परिणत होता है।

नौकरी की सुरक्षा का अभाव, खराब संगठनात्मक संस्कृति, गैर योग्यता और प्रदर्शन की मान्यता, आधिकारिक प्रशासन और खराब रिश्ते, अंतर-व्यक्तिगत संबंध, असंतोषजनक संबंध नियोक्ता-कर्मचारी के लिए मनोवैज्ञानिक कारण हैं।

ट्रेड यूनियनों की राजनीतिक प्रकृति, कई यूनियन और इंटरयूनियन प्रतिद्वंद्विता ट्रेड यूनियन आंदोलन को कमजोर करती है। मजबूत और जिम्मेदार ट्रेड यूनियन, सामूहिक सौदेबाजी के अभाव में निष्प्रभावी हो जाता है। संघ का दर्जा घटकर मात्र हड़ताल समिति रह गया है। बाहरी लोग जो संघ के नेता बनते हैं कार्यकर्ताओं से बेतुके वादे कर अत्यधिक मांग करना, जब नियोक्ता उनकी मांगों को नहीं मानते हैं जिससे देश में औद्योगिक संबंधों के माहौल को खराब करने वाले संघर्ष उत्पन्न होते हैं।

उद्योग, अर्थव्यवस्था और समाज अन्योन्याश्रित हैं। इसलिए, औद्योगिक संघर्ष एकाधिक, अर्थव्यवस्था और समाज पर प्रभाव है। सामाजिक तनाव और कानून व्यवस्था की समस्याएँ, शराब पीना और जुआ और खराब औद्योगिक संबंधों के वातावरण में अन्य सामाजिक बुराईयाँ बढ़ती हैं।

5.4 औद्योगिक संबंध सुधार के लिए सुझाव- Suggestions to improve Industrial Relations:

औद्योगिक संबंध सुधार के लिए सुझाव नीचे दिए गए हैं: स्वस्थ औद्योगिक संबंध के लिए मूलभूत सिद्धांत या आवश्यकताएं:

- **ठोस कार्मिक नीतियां:** कर्मचारियों के मुआवजे, स्थानांतरण, पदोन्नति आदि से संबंधित नीतियां और प्रक्रियाएं निष्पक्ष और पारदर्शी होनी चाहिए। औद्योगिक संबंधों से संबंधित सभी नीतियां और नियम उद्यम में और संघ के नेताओं के लिए स्पष्ट होने चाहिए।
- **रचनात्मक दृष्टिकोण:** प्रबंधन और ट्रेड यूनियनों दोनों को एक दूसरे के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। प्रबंधन को यूनियन को श्रमिकों की शिकायतों के प्रवक्ता के रूप में पहचानना चाहिए। नियोक्ता को एक संयुक्त प्रयास में श्रमिकों को समान भागीदार के रूप में स्वीकार करना चाहिए।
- **सहभागी प्रबंधन:** नियोक्ता को कर्मियों की नीतियों और प्रथाओं के निर्माण और कार्यान्वयन में श्रमिकों और यूनियनों को जोड़ना चाहिए। प्रबंधन को कर्मचारियों को कंपनी की सत्यनिष्ठा और ईमानदारी के प्रति विश्वास दिलाना चाहिए।
- **कर्मचारी कल्याण:** नियोक्ताओं को श्रमिकों के कल्याण की आवश्यकता को पहचानना चाहिए। उन्हें उचित वेतन, काम करने की संतोषजनक स्थिति और श्रम के लिए विकास और अन्य आवश्यक सुविधाएं सुनिश्चित करनी होती हैं।
- **शिकायत प्रक्रिया:** यह श्रमिकों के तनाव और हताशा के लिए एक आउटलेट प्रदान करता है, इसी तरह, एक सुझाव योजना श्रमिकों की रचनात्मक इच्छा को पूरा करने में मदद करेगी।

बोध प्रश्न

1. औद्योगिक संबंधों की प्रभावशीलता क्या है?
2. औद्योगिक संबंध का उदाहरण क्या है?
3. एक प्रभावी औद्योगिक संबंध सुनिश्चित करने के लिए क्या आवश्यक है ?

5.5 सारांश

औद्योगिक संबंधों की प्रभावशीलता जनशक्ति और लागत की बर्बादी को कम करने में मदद करता है। आर्थिक विकास और विकास: अच्छे और सामंजस्यपूर्ण औद्योगिक संबंधों के परिणाम स्वरूप दक्षता में वृद्धि होती है और इसलिए समृद्धि होती है, जो बदले में कारोबार को कम करती है और संगठन को अन्य ठोस लाभ देती है। यह आर्थिक विकास और विकास को बढ़ावा देता है। एक प्रभावी औद्योगिक संबंध के लिए ये आवश्यक है की यह उत्पादन की निरंतरता करे। इसका मतलब है, प्रबंधक से लेकर श्रमिकों तक सभी के लिए निरंतर रोजगार। संसाधनों का पूरी तरह से उपयोग किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप अधिकतम उत्पादन संभव होता है।

5.6 पारिभाषिक शब्दावली

Effective Causes: एक प्रभाव के उत्पादन में तत्काल कारण।

Industrial Relation(IR): "औद्योगिक संबंध" नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच सभी प्रकार के संबंधों को संदर्भित करता है, चाहे वे राष्ट्रीय, क्षेत्रीय या कंपनी स्तर पर हों।

Enhance: कुछ सुधारने या कुछ बेहतर करने के लिए।

Inferior: (निम्न) कम गुणवत्ता वाली स्थिती ।

5.7 संदर्भित पुस्तकें

मानव संसाधन प्रबन्ध एवं औद्योगिक संबंध-डॉ चतुर्भुज मेमोरिया, डॉ कामेश्वर पंडित, साहित्य भवन पब्लिकेशन

श्रम कल्याण और औद्योगिक सम्बन्ध- बालेश्वर पाण्डेय, रावत प्रकाशन

5.8 बोध प्रश्नो के उत्तर

[illegible]

2.

3.

[illegible]

4.

इकाई 6 औद्योगिक विवाद

इकाई की रूपरेखा

- 6.0 उद्देश्य
- 6.1 प्रस्तावना
- 6.2 औद्योगिक विवादों का अर्थ, प्रकार और कारण
- 6.3 औद्योगिक विवादों के निपटारे के लिए मशीनरी
- 6.4 औद्योगिक विवादों को हल करने के तरीके
- 6.5 सारांश
- 6.6 पारिभाषिक शब्दावली
- 6.7 संदर्भित पुस्तकें
- 6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप: औद्योगिक विवाद की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे; इसके प्रकार एवं कारणों की बुनियादी समझ होगी ; इसके महत्व पर चर्चा करें; और औद्योगिक विवाद का वर्णन कर सकेंगे। पाठक औद्योगिक विवाद को समझने में सक्षम होंगे। शिक्षार्थी औद्योगिक विवाद के मशीनरी के बारे में जानेंगे। शिक्षार्थी को औद्योगिक विवाद को हल करने की बुनियादी समझ होगी।

6.1 प्रस्तावना

औद्योगिक विवाद का मतलब नियोक्ताओं और नियोक्ताओं के बीच या नियोक्ताओं और कामगारों के बीच या कामगारों और कामगारों के बीच कोई विवाद या मतभेद है जो रोजगार या गैर-रोजगार या रोजगार की शर्तों या किसी व्यक्ति के श्रम की शर्तों से जुड़ा हो। प्रत्येक मनुष्य (मान लीजिए एक श्रमिक) की कुछ आवश्यकताएं/आवश्यकताएं होती हैं, जैसे आर्थिक आवश्यकताएं, सामाजिक आवश्यकताएं, सुरक्षा आवश्यकताएं। जब ये आवश्यकताएं पूरी नहीं होती हैं, तो श्रमिक और पूंजीपति/नियोक्ता के बीच संघर्ष उत्पन्न होता है। औद्योगिक विवाद दो प्रकार के होते हैं, व्यक्तिगत विवाद और सामूहिक विवाद। व्यक्तिगत विवाद विवाद हो सकते हैं जैसे कि बहाली, गलत समाप्ति के लिए मुआवजा आदि। मजदूरी, बोनस, काम के लाभ के बंटवारे के घंटे आदि से संबंधित विवाद सामूहिक विवाद हैं।

6.2 औद्योगिक विवादों का अर्थ, प्रकार और कारण -Meaning, types and causes of Industrial Disputes

औद्योगिक विवाद एक देश में औद्योगीकरण ने हमेशा एक तरफ रोजगार, राष्ट्रीय आय में योगदान, प्रति व्यक्ति आय, निर्यात और आर्थिक विकास और दूसरी तरफ औद्योगिक विवादों में योगदान दिया है। यह हमेशा मिश्रित आशीर्वाद का मामला रहा है। प्रबंधन और श्रम के बीच हितों का टकराव ही औद्योगिक विवादों की ओर ले जाता है। प्रबंधन का लक्ष्य लाभ को अधिकतम करना होता है और दूसरी ओर श्रमिकों की आय में वृद्धि, नौकरी की सुरक्षा, उनके कौशल की सुरक्षा, उनकी स्थिति में सुधार और काम करने की स्थिति में उम्मीद होती है। जो उत्पादन के कारकों को नियंत्रित करते हैं, उन्हें सख्त प्रशासन, करीबी पर्यवेक्षण और सख्त अनुशासन के रखरखाव और नियमों के कार्यान्वयन, आचार संहिता और अनुशासन संहिता की आवश्यकता होती है। जबकि श्रमिक पूंजी में हिस्सेदारी, प्रबंधन में आवाज, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, प्रबंधन में भागीदारी और कर्मचारियों की गरिमा की मांग करते हैं। इसलिए जो लोग उत्पादन के कारकों को नियंत्रित करते हैं और जो लोग उत्पादन करते हैं उनके अलग-अलग या परस्पर विरोधी हित होते हैं जो औद्योगिक विवादों को जन्म देते हैं।

औद्योगिक विवाद:अर्थ

"औद्योगिक विवाद" का अर्थ नियोक्ताओं और नियोक्ताओं के बीच, या नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच, या श्रमिकों और श्रमिकों के बीच कोई विवाद या अंतर है, जो रोजगार या गैर-रोजगार या रोजगार की शर्तों या श्रम की शर्तों के साथ जुड़ा हुआ है। व्यक्ति।

धारा के तहत परिभाषित औद्योगिक विवाद। 2(k) के बीच मौजूद है-

ए) विवाद के पक्ष जो हो सकते हैं

1 नियोक्ता और कामगार

2 नियोक्ता और नियोक्ता

3 कामगार और कामगार (बी) विवाद का एक तथ्य होना चाहिए न कि केवल राय का अंतर। (सी) विवाद के प्रारंभ में संघ द्वारा लिखित रूप में इसका समर्थन (मतलब समर्थित) होना चाहिए। अनुवर्ती समर्थन संदर्भ को अमान्य कर देगा। इसलिए जिस तारीख से विवाद हुआ वह तारीख बहुत महत्वपूर्ण है। (डी) यह न केवल एक व्यक्तिगत कामगार के हितों को प्रभावित करता है बल्कि कई श्रमिकों को एक वर्ग के रूप में प्रभावित करता है जो औद्योगिक प्रतिष्ठान में काम कर रहे हैं। (ई) विवाद किसी भी कामगार या कामगार या किसी अन्य व्यक्ति के संबंध में हो सकता है जिसमें वे एक निकाय के रूप में रुचि रखते हैं।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अनुसार। धारा 2 (के) "औद्योगिक विवादों का मतलब नियोक्ताओं और नियोक्ताओं के बीच या नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच या श्रमिकों और श्रमिकों के बीच कोई विवाद या अंतर है, जो रोजगार या गैर-रोजगार या शर्तों से जुड़ा है रोजगार या किसी भी व्यक्ति के श्रम की शर्तों के साथ"।

औद्योगिक विवादों के विभिन्न रूप: FORMS OF INDUSTRIAL DISPUTES:

विवादों के रूपों पर नीचे चर्चा की गई है:

- **हड़ताल: Strike:** कर्मचारियों की मांग नहीं माने जाने पर वे काम बंद कर हड़ताल पर चले जाते हैं। हड़ताल कर्मचारी के पास अंतिम और महत्वपूर्ण हथियार है जिसका उपयोग तब किया जाता है जब उनकी मांग की पूर्ति की सभी उम्मीदें बिखर जाती हैं और उनके पास हड़ताल का सहारा लेने के अलावा कोई रास्ता नहीं बचता है। कर्मचारी संघ द्वारा हड़ताल शुरू और समर्थित है। यह कर्मचारियों या कर्मचारियों के एक समूह द्वारा अपनी मांगों को स्वीकार करने के लिए प्रबंधन पर दबाव डालने के लिए काम रोक रहा है। यह कितने भी दिनों तक जारी रह सकता है। यह कर्मचारियों द्वारा काम की पूर्ण समाप्ति है। हड़ताल निम्न प्रकार की हो सकती है।
- **घेराव: Gherao:** घेराव का मतलब होता है घेरना। संघ के सदस्य मुख्य कार्यकारी अधिकारी को घेर लेते हैं और उसे उस स्थान से बाहर नहीं जाने देते जहाँ उसे घेरा या घेराव किया जाता है। आमतौर पर यह जगह उनका कार्यालय है। वे उसके चारों ओर एक मानव शृंखला बनाते हैं जिससे उसे आगे बढ़ने से रोका जा सके। घेराव विरोध का बहुत ही सामान्य साधन है। असंतुष्ट होने पर कोई भी समूह किसी भी समय ऐसा कर सकता है। इसे हिंसक रूप लेना चाहिए।
- **लॉक आउट: Lock out :** नियोक्ताओं द्वारा अपने कर्मचारियों पर दबाव बनाने के लिए तालाबंदी का सहारा लिया जाता है। नियोक्ताओं द्वारा कर्मचारियों को नियोक्ताओं के नियमों और शर्तों पर काम फिर से शुरू करने के लिए मजबूर करने के लिए लॉक आउट किया जाता है। तालाबंदी यूनियनों की जुझारू गतिविधियों को रोकने के लिए नियोक्ताओं द्वारा उठाया गया एक अतिवादी कदम है। कई बार यह नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच शक्ति परीक्षण बन जाता है।
- **धरना: Picketing:** पिकेटिंग कर्मचारियों द्वारा आम लोगों का ध्यान इस तथ्य की ओर आकर्षित करने के लिए सहारा लिया जाता है कि प्रबंधन और कर्मचारियों के बीच विवाद मौजूद है। धरना कार्य स्थल के गेट पर कुछ लोगों द्वारा कर्मचारियों को काम पर आने से रोका जा रहा है। धरना विरोध प्रदर्शित करने के लिए कानूनी गतिविधि है। यह हिंसक गतिविधि नहीं है।
- **बहिष्कार: Boycott:** कर्मचारी कंपनी के उत्पाद के उपयोग का बहिष्कार कर सकते हैं। वे आम जनता से भी ऐसा करने का अनुरोध कर सकते हैं। यह कंपनी के उत्पाद की बिक्री पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इसके दुष्प्रभाव से निजात पाने के लिए कर्मचारियों की मांगों को मानने के बारे में सोच सकते हैं।

सभी प्रकार के विवाद हड़ताल, बंद, तालाबंदी आदि औद्योगिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव डालते हैं और उद्यमों को बहुत नुकसान उठाना पड़ता है। कर्मचारियों और प्रबंधन को उपरोक्त किसी भी रूप का सहारा लिए बिना विवादों को सौहार्दपूर्ण ढंग से सुलझाना चाहिए। जहां तक संभव हो इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि चीजें इतनी बिगड़ न जाएं कि कर्मचारी हड़ताल आदि पर चले जाएं। अच्छे औद्योगिक संबंध सफलता और विकास की कुंजी हैं जहां दोनों पक्षों को लाभ होता है, किसी को कुछ भी खोना नहीं है।

औद्योगिक विवादों को चार प्रमुख प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है, जिन्हें ब्याज विवाद, शिकायत विवाद, अनुचित श्रम व्यवहार विवाद और मान्यता विवाद के रूप में जाना जाता है।

- **Interest dispute व्याज विवाद** व्याज विवादों को हितों के विवाद या आर्थिक विवाद भी कहा जाता है। ज्यादातर मामलों में विवाद वेतन, लाभ, नौकरी की सुरक्षा या रोजगार की शर्तों या शर्तों में सुधार की मांगों या प्रस्तावों से उत्पन्न होते हैं। हितों के विवादों को उचित ढंग से बातचीत या सौदेबाजी या समझौता किया जाना चाहिए और जहां तक संभव हो आर्थिक शक्ति के परीक्षण से बचा जाना चाहिए। जहां तक संभव हो, इन विवादों को सुलह के माध्यम से सुलझाया जाना चाहिए।
- **Grievance or Rights Disputes. शिकायत या अधिकार** विवाद को अधिकारों का संघर्ष या कानूनी विवाद भी कहा जाता है। ये विवाद उपक्रम में दिन-प्रतिदिन के कामकाजी संबंधों से होते हैं। यह कर्मचारियों के अधिकारों से वंचित करने वाले प्रबंधन के कृत्य के खिलाफ श्रमिकों का विरोध है। शिकायत विवाद मजदूरी के भुगतान, अनुषंगी लाभ, काम के घंटे, समय के साथ, पदोन्नति, पदावनति, वरिष्ठता, सुरक्षा और स्वास्थ्य संबंधी पहलुओं से उत्पन्न होते हैं। यदि शिकायत विवाद को पार्टियों द्वारा स्वीकार की जाने वाली प्रक्रिया के अनुसार नहीं सुलझाया जाता है, तो इसका परिणाम अक्सर प्रबंधन और कर्मचारियों के बीच कार्य संबंध में गड़बड़ी होती है। सरकार इस प्रकार के विवाद समाधान के लिए स्वैच्छिक मध्यस्थता को भी प्रोत्साहित करती है।
- **Labour type of dispute श्रम प्रकार का विवाद** औद्योगिक संबंधों में अनुचित व्यवहार पर विवाद है। प्रबंधन कई बार श्रमिकों के साथ इस आधार पर भेदभाव करता है कि वे ट्रेड यूनियन के सदस्य हैं और वे यूनियन की गतिविधियों में भाग लेते हैं। अनुचित श्रम अभ्यास में कर्मचारियों पर दबाव शामिल होता है जब वे संगठित होने के अपने अधिकारों का प्रयोग करते हैं, संघ की गतिविधि में भाग लेते हैं, सौदेबाजी से इनकार करते हैं, हड़ताल के दौरान नए कर्मचारियों की भर्ती करते हैं जो अवैध नहीं है, एक वातावरण बनाना या वास्तव में बल या हिंसा का कार्य करना या रोकना संचार आदि। ऐसे विवादों को सुलह के माध्यम से सुलझाया जा सकता है या ऐसे विवादों का औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 के तहत निर्धारित सामान्य प्रक्रिया के अनुसार निपटारा किया जाता है।
- **मान्यता संबंधी विवाद** तब उत्पन्न होते हैं जब किसी संगठन का प्रबंधन सामूहिक सौदेबाजी के उद्देश्य से किसी ट्रेड यूनियन को मान्यता देने या संघर्ष या विवाद के मामले में अपने सदस्य कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व करने से इनकार करता है। जब प्रबंधन किसी विशेष यूनियन को नापसंद करता है तो वह बातचीत या सौदेबाजी के उद्देश्य से उस ट्रेड यूनियन को स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाता है और फिर यह ट्रेड यूनियन उत्पीड़न का मामला बन जाता है। यह तब भी होता है जब पहले से ही एक मौजूदा ट्रेड यूनियन है या यह कई ट्रेड यूनियनों का मामला है और प्रत्येक मान्यता के लिए दावा कर रहा है। मान्यता संबंधी विवाद तब भी उत्पन्न होते हैं जब किसी विशेष ट्रेड यूनियन के पास पर्याप्त प्रतिनिधि नहीं होते हैं। मान्यता संबंधी विवादों का निपटारा ट्रेड यूनियन की मान्यता के लिए सरकार द्वारा दिए गए दिशा-निर्देशों के माध्यम से या सरकार द्वारा स्वेच्छा से निर्धारित अनुशासन संहिता की सहायता से किया जाता है।

औद्योगिक विवादों के कारण : CAUSES OF INDUSTRIAL DISPUTES

औद्योगिक विवाद सभी औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं की एक सामान्य विशेषता है, चाहे वह पूंजीवादी अर्थव्यवस्था हो या समाजवादी अर्थव्यवस्था या मिश्रित अर्थव्यवस्था। उद्योग और औद्योगिक विवाद हमेशा साथ-साथ

चलते हैं वास्तव में वे एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। जो कर्मचारी उद्योग को अपनी सेवाएं और समय देते हैं, वे उच्च वेतन, अच्छी काम करने की स्थिति में रुचि रखते हैं और प्रबंधन में आवाज उठाना चाहते हैं। दूसरी ओर नियोक्ता लाभ, उत्पादकता, गुणवत्ता और लागत नियंत्रण में अधिक रुचि रखते हैं। इन दोनों शक्तियों के विपरीत दिशा में काम करने से विवादों की अधिकतम संभावना है और इसलिए औद्योगिक विवाद औद्योगीकरण की एक प्रमुख विशेषता बन गए हैं। औद्योगिक विवाद आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक या सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से उत्पन्न हो सकते हैं। वहीं, नियोक्ताओं और कर्मचारियों का रवैया भी काफी हद तक इसके लिए जिम्मेदार है। औद्योगिक विवाद उत्पन्न करने वाले कारक उद्योग से संबंधित, प्रबंधन से संबंधित, सरकार से संबंधित या संघ से संबंधित हो सकते हैं। औद्योगिक विवादों के सबसे सामान्य कारणों को इस प्रकार सूचीबद्ध किया जा सकता है:

- मजदूरी और भत्ते
- कार्मिक नीतियां
- छंटनी
- छंटनी
- छुट्टी और काम के घंटे
- बोनस
- अनुशासनहीनता
- हिंसा
- अंतर संघ प्रतिद्वंद्विता।
- पुरस्कारों या समझौतों को लागू न करना
- मांगों को पूरा न करना
- काम का बोझ
- कार्य मानक
- अधिशेष श्रम
- काम करने की स्थिति
- निर्माण प्रक्रिया में बदलाव
- नियमों या संहिताओं का उल्लंघन
- शिफ्ट में काम करना
- राजनीतिक उद्देश्य
- बंद या तालाबंदी
- प्रभावी ढंग से संवाद करने में असमर्थता
- यूनियनों को मान्यता देने के लिए पुनर्वित्त
- प्रबंधन का सत्तावादी या निरंकुश रवैया।
- श्रम कानून को लागू न करना।

किसी भी औद्योगिक विवाद का कारण कुछ भी हो, जो बात सबसे ज्यादा परेशान करती है, वह है देश को होने वाले नुकसान की मात्रा। एक विकासशील देश जनसंख्या के दबाव, प्रति व्यक्ति आय, खराब बुनियादी ढांचे और जीवन के निम्न स्तर के साथ इस तरह के अनुपात से बाहर के विवादों और श्रम दिवसों के नुकसान को वहन नहीं कर सकता है।

6.3 औद्योगिक विवादों के निपटारे के लिए मशीनरी -MACHINERY FOR SETTLEMENT OF INDUSTRIAL DISPUTES

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 औद्योगिक विवादों के शांतिपूर्ण और सौहार्दपूर्ण समाधान के लिए एक विस्तृत और कुशल तंत्र प्रदान करता है। उनमें शामिल हैं:

1. कार्य समितियां (धारा 3) WORKS COMMITTEE
2. सुलह अधिकारी (धारा 4) CONCILIATION OFFICER
3. सुलह बोर्ड (धारा 5) BOARD OF CONCILIATION
4. जांच न्यायालय (धारा 6) COURT OF ENQUIRY
5. श्रम न्यायालय (धारा 7) LABOUR COURTS
6. न्यायाधिकरण (धारा 7ए) TRIBUNALS
7. राष्ट्रीय न्यायाधिकरण (धारा 7बी) NATIONAL TRIBUNAL

- **WORKS COMMITTEE**

कार्य समिति एक औद्योगिक प्रतिष्ठान के मामले में जिसमें सौ या अधिक कामगार कार्यरत हैं या पूर्ववर्ती बारह महीनों में किसी भी दिन नियोजित किया गया है, उपयुक्त सरकार सामान्य या विशेष आदेश की आवश्यकता हो सकती है नियोक्ता निर्धारित तरीके से, स्थापना में लगे नियोक्ताओं और श्रमिकों के प्रतिनिधियों से मिलकर एक कार्य समिति का गठन करेगा, हालांकि कामगारों या समिति के प्रतिनिधियों की संख्या नियोक्ताओं के प्रतिनिधियों की संख्या से कम नहीं होगी। भारतीय ट्रेड यूनियन अधिनियम, 1926 के तहत स्थापना और उनके ट्रेड यूनियन के परामर्श से कार्यरत श्रमिकों के प्रतिनिधि, यदि और पंजीकृत हैं। कार्य समिति के कर्तव्य: यह कार्य समिति का कर्तव्य होगा।

- नियोक्ता और कामगार के बीच सौहार्द और अच्छे संबंधों को सुरक्षित रखने और बनाए रखने के उपायों को बढ़ावा देना।
- उनके सामान्य हित या चिंता के मामलों पर टिप्पणी करने के लिए और
- ऐसे मामलों के संबंध में किसी भी भौतिक मतभेद को बनाने का प्रयास करने के लिए।

2. CONCILIATION OFFICER

सुलह अधिकारी (धारा 4) उपयुक्त सरकार आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा सुलह अधिकारियों के रूप में उतनी संख्या में व्यक्तियों की नियुक्ति कर सकती है, जितनी वह उचित समझे। एक निर्दिष्ट क्षेत्र में एक निर्दिष्ट उद्योग के लिए या एक या अधिक निर्दिष्ट उद्योगों के लिए और या तो स्थायी रूप से या एक सीमित अवधि के लिए एक सुलह अधिकारी नियुक्त किया जा सकता है। सुलह अधिकारियों के कर्तव्य:

- प्रत्येक औद्योगिक विवाद में, मौजूदा या आशंकित, सुलह अधिकारी निर्धारित तरीके से सुलह की कार्यवाही करेगा।
- विवाद को अविलंब निपटाने के लिए सुलह अधिकारी विवाद की जांच करेगा और पक्षकारों को विवाद का निष्पक्ष और सौहार्दपूर्ण समाधान कराने के लिए ऐसी सभी चीजें कर सकता है।
- सुलह अधिकारी विवाद के निपटारे पर विवाद के पक्षकारों द्वारा हस्ताक्षरित समझौते के ज्ञापन के साथ समुचित सरकार को एक रिपोर्ट भेजेगा।
- यदि ऐसा कोई समझौता नहीं होता है, तो सुलह अधिकारी जांच की समाप्ति के बाद जितनी जल्दी हो सके, उपयुक्त सरकार को विवाद से संबंधित तथ्यों और परिस्थितियों का पता लगाने के लिए उसके द्वारा उठाए गए कदमों की एक पूरी रिपोर्ट भेजेगा, और ऐसे तथ्यों और परिस्थितियों के एक पूर्ण विवरण के साथ एक साथ एक समझौता करना और कारण जिसके कारण, उनकी राय में समझौता नहीं किया जा सका।
- ऊपर संदर्भित विफलता रिपोर्ट पर विचार करने पर यदि उपयुक्त सरकार संतुष्ट है कि बोर्ड, श्रम न्यायालय, ट्रिब्यूनल या राष्ट्रीय ट्रिब्यूनल के संदर्भ के लिए कोई मामला है तो वह इस तरह का संदर्भ देती है। जहां उपयुक्त सरकार इस तरह का संदर्भ नहीं देती है, वह रिकॉर्ड करेगी और संबंधित पक्षों को इसके कारणों के बारे में बताएगी।
- धारा 12 के तहत एक रिपोर्ट को सुलह की कार्यवाही शुरू होने के 14 दिनों के भीतर या ऐसी छोटी अवधि के भीतर प्रस्तुत किया जाएगा जो उपयुक्त सरकार द्वारा तय की जा सकती है। बशर्ते कि सुलह अधिकारी के अनुमोदन के अधीन। विवाद के सभी पक्षों द्वारा लिखित रूप में रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए समय पर सहमति हो सकती है। [धारा 12(6)]

3. BOARD OF CONCILIATION (SEC.5)

उपयुक्त सरकार किसी औद्योगिक विवाद के निपटारे को बढ़ावा देने के लिए आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा अवसर उत्पन्न होने पर सुलह बोर्ड का गठन कर सकती है। एक बोर्ड में अध्यक्ष और दो या चार अन्य सदस्य होंगे, जैसा उपयुक्त सरकार उचित समझे।

अध्यक्ष एक स्वतंत्र व्यक्ति होता है और अन्य सदस्य समान संख्या में विवाद के पक्षकारों के प्रतिनिधि होते हैं।

सुलह बोर्ड के कर्तव्य (धारा 13):

1. जहां इस अधिनियम के तहत विवाद को एक बोर्ड को भेजा गया है, यह बोर्ड का कर्तव्य होगा कि वह उसका निपटान करने का प्रयास करे और इस उद्देश्य के लिए बोर्ड, इस तरह से जैसा वह ठीक समझे और बिना देरी किए, विवाद की जांच करें और योग्यता और उसके सही निपटारे को प्रभावित करने वाले सभी मामलों की जांच करें और ऐसी सभी चीजें कर सकती हैं जो पक्षों को निष्पक्ष और सौहार्दपूर्ण तरीके से आने के लिए प्रेरित करने के उद्देश्य से उचित समझें। विवाद का निपटारा [धारा 13(1)]

2. यदि सुलह की कार्यवाही के दौरान विवाद या विवाद के किसी भी मामले का निपटारा हो जाता है तो बोर्ड विवाद के पक्षकारों द्वारा हस्ताक्षरित समझौते के ज्ञापन के साथ उपयुक्त सरकार को एक रिपोर्ट भेजेगा . [धारा 13(2)]
3. यदि ऐसा कोई समझौता नहीं होता है, तो जांच की समाप्ति के बाद बोर्ड यथाशीघ्र उपयुक्त सरकार को बोर्ड द्वारा उठाए गए कदमों की एक पूरी रिपोर्ट भेजेगा, ताकि इससे संबंधित तथ्यों और परिस्थितियों का पता लगाया जा सके। विवाद और उसके निपटारे के लिए रिपोर्ट में ऐसे तथ्यों और परिस्थितियों का पूरा विवरण होगा और जिन कारणों से उसकी राय में समझौता नहीं हो सका। [धारा 13(3)]
4. बोर्ड उस तारीख से 2 महीने के भीतर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा जिस दिन विवाद उसे भेजा गया था या ऐसी छोटी अवधि के भीतर जो उपयुक्त सरकार द्वारा तय की जा सकती है। [सेका 13(5)] इस प्रकार, जहां सुलह विफल हो जाती है, सुलह बोर्ड अपना अधिकार कर लेता है। सुलह बोर्ड के कार्य सुलह अधिकारियों के समान हैं। सुलह बोर्डों के गठन का उद्देश्य व्यक्तिगत विवादों का निपटारा करना है।

4. कोर्ट ऑफ इन्क्वायरी COURT OF ENQUIRY (SEC. 6)

उपयुक्त सरकार आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा अवसर उत्पन्न होने पर किसी औद्योगिक विवाद से संबंधित या प्रासंगिक प्रतीत होने वाले किसी भी मामले की जांच के लिए कोर्ट ऑफ इन्क्वायरी का गठन कर सकती है। एक अदालत में एक स्वतंत्र व्यक्ति या इतनी संख्या में स्वतंत्र व्यक्ति शामिल हो सकते हैं, जैसा कि उपयुक्त सरकार उचित समझ सकती है और जहां एक न्यायालय में दो या दो से अधिक सदस्य होते हैं, उनमें से एक को अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया जाएगा। न्यायालय तब तक कार्य करने में सक्षम नहीं होगा जब तक कि व्यवसाय चलाने के लिए आवश्यक सदस्यों की न्यूनतम संख्या अर्थात् कोरम मौजूद न हो। अध्यक्ष या अन्य सदस्य की अनुपस्थिति या उसके सदस्य की कोई रिक्ति न्यायालय की कार्यवाही की वैधता को प्रभावित नहीं करेगी यदि वे अन्यथा वैध और नियमित हैं।

कोर्ट ऑफ इन्क्वायरी के कर्तव्य:

एक अदालत को संदर्भित मामलों की जांच करनी चाहिए और उसकी जांच शुरू होने के 6 महीने की अवधि के भीतर उपयुक्त सरकार को रिपोर्ट करनी चाहिए।

5. श्रम न्यायालय (SEC.7) LABOUR COURTS

उपयुक्त सरकार, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, दूसरी अनुसूची में निर्दिष्ट किसी भी मामले से संबंधित औद्योगिक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए और इस तरह के अन्य कार्य करने के लिए एक या अधिक श्रम न्यायालयों का गठन कर सकती है। इस अधिनियम के तहत उन्हें सौंपा गया है। एक श्रम न्यायालय में केवल एक व्यक्ति शामिल होगा जिसे उपयुक्त सरकार द्वारा नियुक्त किया जाएगा।

श्रम न्यायालयों का क्षेत्राधिकार [धारा 7(एल)] जे श्रम न्यायालय दूसरी अनुसूची में निर्दिष्ट मामलों से संबंधित निम्नलिखित विवादों का निर्णय करता है;

1. स्थायी आदेश के तहत एक नियुक्ता द्वारा पारित आदेश का औचित्य या वैधता,

2. स्थायी आदेशों का आवेदन और व्याख्या,
3. कामगारों की बर्खास्तगी या बर्खास्तगी जिसमें गलत तरीके से खारिज किए गए कामगारों को राहत देना या बहाल करना शामिल है।
4. किसी प्रथागत रियायत या विशेषाधिकार को वापस लेना।
5. अवैधता या अन्यथा हड़ताल या तालाबंदी और
6. तीसरी अनुसूची में निर्दिष्ट के अलावा अन्य सभी मामले।

श्रम न्यायालय के कर्तव्य: श्रम न्यायालय अपनी कार्यवाही शीघ्रता से आयोजित करेगा और यथाशीघ्र अपने निष्कर्ष पर उचित सरकार को अपना पुरस्कार प्रस्तुत करेगा। (धारा 15)

6. ट्रिब्यूनल (SEC. 7A) TRIBUNALS

उपयुक्त सरकार आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना हो सकती है, किसी भी मामले से संबंधित औद्योगिक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए एक या अधिक अधिकरणों का गठन करती है, चाहे वह दूसरी अनुसूची या तीसरी अनुसूची में निर्दिष्ट हो। एक न्यायाधिकरण में केवल एक व्यक्ति शामिल होगा जिसे उपयुक्त सरकार द्वारा नियुक्त किया जाएगा। यह न्यायिक कार्यों का निर्वहन करेगा, हालांकि यह अदालत नहीं है।

औद्योगिक न्यायाधिकरणों का अधिकार क्षेत्र [धारा 7 (ए) (एल)] : औद्योगिक न्यायाधिकरणों का अधिकार क्षेत्र श्रम न्यायालय की तुलना में व्यापक है। दूसरी या तीसरी अनुसूची में निर्दिष्ट किसी भी मामले पर इसका अधिकार क्षेत्र है। तीसरी अनुसूची के तहत निम्नलिखित मामलों को निर्दिष्ट किया गया है:

- मजदूरी, अवधि और भुगतान की विधि सहित।
- क्षतिपूर्क और अन्य भत्ते।
- काम के घंटे और आराम के अंतराल।
- मजदूरी और छुट्टियों के साथ छुट्टी।
- बोनस, प्रॉफिट शेयरिंग। भविष्य निधि और ग्रेच्युटी।
- स्थायी आदेशों के अनुसार कार्य करने से भिन्न शिफ्ट में कार्य करना।
- ग्रेड द्वारा वर्गीकरण। 8. अनुशासन के नियम।
- राष्ट्रीयकरण।
- कामगारों की छंटनी और स्थापना को बंद करना, और
- कोई अन्य मामला जो निर्धारित किया जा सकता है।
- ट्रिब्यूनल के कर्तव्य: ट्रिब्यूनल के कर्तव्य श्रम न्यायालय के समान हैं।

7. राष्ट्रीय न्यायाधिकरण [धारा 7 (बी)] NATIONAL TRIBUNAL

केंद्र सरकार आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, औद्योगिक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए एक या एक से अधिक राष्ट्रीय न्यायाधिकरणों का गठन कर सकती है, जो केंद्र सरकार की राय में, राष्ट्रीय महत्व के प्रश्न शामिल हैं या ऐसी प्रकृति के हैं जो औद्योगिक एक से अधिक राज्यों में स्थित प्रतिष्ठानों के ऐसे विवादों में रुचि रखने या उनसे प्रभावित होने की संभावना है। एक राष्ट्रीय न्यायाधिकरण में केवल एक व्यक्ति शामिल होगा जिसे केंद्र सरकार द्वारा

नियुक्त किया जाएगा। एक राष्ट्रीय न्यायाधिकरण के कर्तव्य श्रम न्यायालय या एक औद्योगिक न्यायाधिकरण के समान हैं। [धारा 7बी (2)]

एक व्यक्ति राष्ट्रीय न्यायाधिकरण के पीठासीन अधिकारी के रूप में नियुक्ति के लिए तब तक योग्य नहीं होगा जब तक कि वह उच्च न्यायालय का न्यायाधीश न हो या रहा हो। [धारा 7बी (3)]

केंद्र सरकार, यदि उचित समझती है, राष्ट्रीय न्यायाधिकरण को उसके समक्ष कार्यवाही में सलाह देने के लिए मूल्यांकनकर्ता के रूप में 2 व्यक्तियों को नियुक्त कर सकती है [धारा 7बी(4)]।

श्रम न्यायालयों, न्यायाधिकरणों और राष्ट्रीय न्यायाधिकरणों के कर्तव्य:

जहां एक औद्योगिक विवाद को निर्णय के लिए श्रम न्यायालय, न्यायाधिकरण या राष्ट्रीय न्यायाधिकरण को भेजा गया है, यह अपनी कार्यवाही शीघ्रता से करेगा और इस तरह के औद्योगिक विवाद या संबंधित आदेश में निर्दिष्ट अवधि के भीतर करेगा। धारा 10 की उप-धारा (2-ए) के दूसरे प्रावधान के तहत विस्तारित अवधि के अंतर्गत अपना पुरस्कार उपयुक्त सरकार (धारा 15) को प्रस्तुत करें।

6.4 औद्योगिक विवादों को हल करने के तरीके - METHODS OF RESOLVING INDUSTRIAL DISPUTES

औद्योगिक विवादों को सुलझाने के विभिन्न तरीके हैं जैसे बातचीत, सुलह, मध्यस्थता और मध्यस्थता। प्रत्येक संगठन या प्रबंधन या ट्रेड यूनियन को औद्योगिक विवादों को हल करने के लिए कोई भी तरीका चुनने का अधिकार और स्वतंत्रता है। यहाँ महत्वपूर्ण बात यह है कि औद्योगिक विवादों को यथाशीघ्र हल किया जाना चाहिए, उन्हें उसी स्तर पर सुलझाया जाना चाहिए जिस स्तर पर वे हुए हैं। प्रबंधन और यूनियन दोनों को अपना रवैया बदलना चाहिए और अपने अहंकार को एक तरफ रखकर विवादों को जल्द से जल्द सुलझाना चाहिए। जब विवाद नहीं सुलझाए जाते हैं तो रिश्ते और तनावपूर्ण और जटिल हो जाते हैं। अगर प्रबंधन और यूनियनों दोनों को खुश रहना है तो जीत-जीत की स्थिति होनी चाहिए। यदि कोई जीतता है और कोई हारता है तो संबंध न तो सुधरते हैं और न ही कभी सुधर सकते हैं। लंबित पुरस्कारों से नियोक्ता और कर्मचारियों दोनों के लिए कम उत्पादकता और नुकसान हो सकता है। जहाँ तक संभव हो दोनों पक्षों को न्यायाधिकरण या सुलह के बजाय बातचीत का सहारा लेना चाहिए।

बातचीत : NEGOTIATION

औद्योगिक विवादों को सुलझाने के लिए बातचीत के सर्वोत्तम तरीकों में से एक है। यह बातचीत में दो पक्ष हैं जो नियोक्ता या प्रबंधन और श्रमिक या उनके संघ विवादों के निपटारे के लिए खुद पर निर्भर हैं। दोनों पक्षों को एक-दूसरे पर भरोसा है और वे किसी तीसरे पक्ष की जरूरत महसूस नहीं करते। विवादों को सुलझाने का यह तरीका सरकार के हस्तक्षेप के बिना संवाद या द्विदलीय संवाद को महत्व देता है। विवादों को हल करने का यह तरीका प्रबंधन और यूनियनों के बीच संबंधों में उच्च स्तर की परिपक्वता दर्शाता है। यह तब संभव है जब दोनों पक्ष सुसंगठित हों, एक-दूसरे पर विश्वास रखते हों, एक-दूसरे को पहचानने के लिए तैयार हों, एक-दूसरे की स्थिति और गरिमा को पहचानने के लिए तैयार हों। बातचीत के लिए चीजें तब और आसान हो जाती हैं जब दोनों पक्ष एक-दूसरे के दृष्टिकोण को

समायोजित करने और समायोजित करने के लिए तैयार हों। विवादों को हल करने के लिए दोनों पक्ष नैतिक प्रतिबंधों द्वारा समर्थित संवादों के माध्यम से एक लिखित समझौते पर पहुँचते हैं। प्रबंधन और श्रमिक संघ के बीच लिखित समझौते को दोनों पक्षों से अधिक स्वीकृति मिलती है, विवाद हल हो जाते हैं और साथ ही संबंध बरकरार रहते हैं। बातचीत की प्रक्रिया में अगर बातचीत तंत्र टूट जाता है तो पार्टियों के बीच के मुद्दे अनसुलझे रहते हैं। ऐसी स्थितियों में दोनों पक्ष गतिरोध की स्थिति में आ जाते हैं और फिर दोनों पक्षों के बीच सीधा टकराव शुरू हो जाता है, जिसका परिणाम निश्चित रूप से संघर्ष और असामंजस्य होता है। इस तरह के संघर्ष और असामंजस्य के परिणामस्वरूप समय, धन, ऊर्जा, खराब औद्योगिक संबंध, संगठन को नुकसान और समाज और राज्य के लिए अधिक चिंता का विषय बन जाता है।

CONCILIATION: सुलह विवादों

सुलह विवादों को हल करने की इस पद्धति में नियोक्ता और कर्मचारी संघ दोनों सरकारी एजेंसी जैसे बाहर सहायता प्रपत्र लेते हैं। सरकारी एजेंसी चर्चा के लिए दोनों पक्षों, प्रबंधन और यूनियनों को एक साथ लाने की कोशिश करती है और उनकी बातचीत में मदद करती है। सुलह का मुख्य उद्देश्य उत्पादन, अरुचि और तनावपूर्ण औद्योगिक संबंधों की आगे की समस्याओं से बचने के लिए उद्योग में दो परस्पर विरोधी समूहों को फिर से मिलाना है। औद्योगिक विवादों को हल करने का यह तरीका तब अपनाया जाता है जब पार्टियाँ अपने मतभेदों को अपने दम पर सुलझा नहीं पाती हैं और फिर भी खुले संघर्ष की समस्याओं से बचना चाहती हैं। सुलह एक प्रथा है जिसके द्वारा विवाद में एक तटस्थ तृतीय पक्ष की सेवाओं का उपयोग किया जाता है, ताकि विवादित पक्षों को एक सौहार्दपूर्ण समाधान के लिए तैयार किया जा सके। सुलह की प्रक्रिया एक सुलहकर्ता के मार्गदर्शन में होती है। सुलह तंत्र में एक सुलह अधिकारी और सुलह बोर्ड शामिल होते हैं।

1947 के औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 12(2) के तहत सुलह अधिकारी विवाद के निपटारे के उद्देश्य से शामिल होगा। सुलह अधिकारी दोनों पक्षों के बीच एक प्रवर्तक, संरक्षक, चर्चा गाइड, नेता, सलाहकार और संचार लिंक की भूमिका निभाता है। यदि सुलह की कार्यवाही के दौरान सुलह का परिणाम नहीं मिलता है तो सुलह अधिकारी उपयुक्त सरकार को एक विफलता रिपोर्ट भेजता है जिसमें सूचित किया जाता है कि समझौता नहीं किया जा सकता है। सुलह को अधिक प्रभावी बनाने के लिए श्रम पर राष्ट्रीय आयोग ने सिफारिश की है कि "सुलह तंत्र औद्योगिक संबंध आयोग का एक हिस्सा होना चाहिए, जो इसे अन्य प्रभावों से मुक्त करेगा। तंत्र का स्वतंत्र चरित्र अकेले ही अधिक आत्मविश्वास विकसित करेगा और पार्टियों से अधिक सहयोग प्राप्त करने में सक्षम होगा।

मध्यस्थता: MEDIATION

कई बार जब विवाद के दो पक्ष बातचीत शुरू करते हैं तो आम सहमति नहीं बन पाती है या जब वे सही समाधान खोजने में असमर्थ होते हैं तो मध्यस्थता एक महत्वपूर्ण उपकरण बन जाती है। मध्यस्थता किसी बाहरी व्यक्ति की मदद से औद्योगिक विवादों को निपटाने की एक विधि है। मध्यस्थ अपने दृष्टिकोण में बहुत सकारात्मक है और प्रबंधन और संघ दोनों पक्षों से जानकारी एकत्र करके एक सकारात्मक भूमिका अदा करता है, उनके विचारों और रुचि का उचित मूल्यांकन करता है और इसके आधार पर समाधान पर पहुँचने के लिए सुझाव देता है या उचित समझौता

करने के लिए। मध्यस्थता और सुलह दोनों में एक बाहरी व्यक्ति की भूमिका होती है और दोनों ही मामलों में बहुत कुछ विवाद में शामिल पक्षों के बीच समझ पर निर्भर करता है। सुलह और मध्यस्थता दोनों ही मामलों में बहुत कुछ सामान्य लाभ के लिए समायोजन पर निर्भर करता है। मध्यस्थता और सुलह दोनों सलाहकार हैं और प्रकृति में न्यायिक नहीं हैं। मध्यस्थ एक मार्गदर्शक की भूमिका निभाता है और विवाद के पक्षकारों को समझौते के नए क्षेत्रों को दिखाता है जो अन्यथा वे स्वयं खोज नहीं पाते।

ARBITRATION : मध्यस्थता

मध्यस्थता शब्द का अर्थ है दो या दो से अधिक पक्षों के बीच एक निष्पक्ष निकाय के निर्णय के माध्यम से औद्योगिक विवादों का निपटारा जब सुलह और मध्यस्थता की प्रक्रिया में प्रयास विफल हो गए हों। मध्यस्थता प्रकृति में न्यायिक है जबकि सुलह प्रकृति में सलाहकार है। मध्यस्थता स्वैच्छिक है यदि विवाद के पक्ष बातचीत और सुलह से अपने मतभेदों को सुलझाने में विफल रहे हैं, तो उन्हें औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा आईओए के तहत निर्धारित मध्यस्थता के लिए प्रस्तुत करने के लिए सहमत हैं। अनिवार्य मध्यस्थता या अधिनिर्णय, सरकार को पार्टियों की आवश्यकता है विवाद को अपने मतभेदों को मध्यस्थता न्यायाधिकरण में प्रस्तुत करने के लिए जो तथ्यों और प्रस्तुत तर्कों पर विचार करने के बाद एक निर्णय देता है। स्वैच्छिक मध्यस्थता के मामले में यह जरूरी नहीं कि अदालतों द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया का पालन करें। स्वैच्छिक मध्यस्थता की अनिवार्यता यह है कि एक मध्यस्थ को विवाद को स्वैच्छिक रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए और एक निर्णय का प्रवर्तन आवश्यक और बाध्यकारी नहीं हो सकता है क्योंकि कोई बाध्यता नहीं है। अनिवार्य मध्यस्थता का उपयोग तब किया जाता है जब पार्टियां स्वैच्छिक तरीकों से किसी समझौते पर पहुंचने में विफल रहती हैं। अनिवार्य मध्यस्थता कभी-कभी और कुछ निश्चित परिस्थितियों में आवश्यक और वांछनीय हो सकती है। औद्योगिक संबंधों के क्षेत्र में राज्य के हस्तक्षेप का उद्देश्य सामाजिक न्याय करना और कमजोर पक्ष को समान रूप से मजबूत बनाना होना चाहिए ताकि वह बातचीत और सामूहिक सौदेबाजी के माध्यम से अपने मतभेदों को सुलझाने में सक्षम हो सके।

भारत में जहां औद्योगिक विवादों का संबंध है। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 एक बहुत ही महत्वपूर्ण अधिनियम है।

अधिनियम के प्रमुख उद्देश्य हैं:

- नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच अच्छे संबंध सुनिश्चित करने के उपायों को बढ़ावा देना।
- नियोक्ता और कर्मचारी के बीच के अंतर को कम करने के लिए और न्यायिक अधिकारियों के माध्यम से विवादों को सुलझाना।
- औद्योगिक विवादों की जांच और निपटान के लिए उपयुक्त तंत्र प्रदान करना। अवैध हड़तालों और तालाबंदी को रोकने के लिए।
- छंटनी, छंटनी, गलत तरीके से बर्खास्तगी और उत्पीड़न के मामलों में कामगारों को राहत प्रदान करना। कर्मचारियों को सामूहिक सौदेबाजी का अधिकार देना और सुलह को बढ़ावा देना।

औद्योगिक विवाद अधिनियम भारत में औद्योगिक कानून के ऐतिहासिक विकास में एक मील का पत्थर है। समय बीतने के साथ देश में औद्योगिक संबंधों से संबंधित कई नए सिद्धांत पेश किए गए हैं जैसे:

- औद्योगिक विवादों के त्वरित और सौहार्दपूर्ण समाधान के लिए एक स्थायी तंत्र।
- सुलह की कार्यवाही में तेजी लाने के लिए, अधिकतम समय सीमा निर्धारित की गई है जिसके भीतर तंत्र को गति में स्थापित किया जाना चाहिए।
- मध्यस्थता पुरस्कारों के प्रवर्तन सहित सार्वजनिक उपयोगिता सेवाओं में अनिवार्य मध्यस्थता को मान्यता दी गई है।
- सुलह और मध्यस्थता की कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान हड़ताल और तालाबंदी पर रोक।
- देरी को खत्म करने के लिए सुलह और मध्यस्थता के विभिन्न चरणों के लिए विशिष्ट समय सीमा।
- प्रतिनिधि ट्रेड यूनियन को पहचानने और उससे निपटने के लिए नियोक्ताओं पर एक दायित्व लगाया गया है।
- कार्य समिति को नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच आपसी परामर्श के लिए तंत्र स्थापित किया गया है।
- औद्योगिक विवादों को एक औद्योगिक न्यायाधिकरण को भेजा जा सकता है जहां विवाद के दोनों पक्ष ऐसे संदर्भ के लिए आवेदन करते हैं या जहां उपयुक्त सरकार ऐसा करना आवश्यक समझती है।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 अधिनिर्णयन की त्रिस्तरीय प्रणाली प्रदान करता है।

1. श्रम न्यायालय labour court

2. औद्योगिक न्यायाधिकरण industrial tribunal

3. राष्ट्रीय न्यायाधिकरण National Tribunal

अधिनियम की दूसरी अनुसूची में निर्दिष्ट औद्योगिक विवादों के न्यायनिर्णयन और उन्हें सौंपे गए किसी अन्य कार्य को करने के लिए उपयुक्त सरकार द्वारा एक या अधिक श्रम न्यायालयों का गठन किया जा सकता है। श्रम अदालत के कर्तव्यों में न्यायिक कार्यवाही आयोजित करना और कार्यवाही के समापन के बाद उचित सरकार को पुरस्कार जमा करना है। श्रम न्यायालय आमतौर पर दिन-प्रतिदिन के कामकाज में उत्पन्न होने वाले मामलों से निपटता है। श्रम न्यायालय के बाद 1947 के औद्योगिक विवाद अधिनियम द्वारा प्रदान किए गए अधिनिर्णय की त्रि-स्तरीय प्रणाली में औद्योगिक न्यायाधिकरण है। उपयुक्त सरकार किसी भी मामले से संबंधित औद्योगिक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए एक या एक से अधिक औद्योगिक न्यायाधिकरण नियुक्त कर सकती है, चाहे वह दूसरी अनुसूची या तीसरी अनुसूची में निर्दिष्ट हो। औद्योगिक न्यायाधिकरण एक सीमित अवधि या स्थायी के लिए हो सकता है।

औद्योगिक न्यायाधिकरण में न्याय की अदालत के सभी आवश्यक गुण हैं। यह औद्योगिक शांति के हित में ट्रेड यूनियन के अधिकारों की रक्षा करने, अनुचित प्रथाओं और उत्पीड़न को रोकने के लिए नए दायित्व बना सकता है या अनुबंधों को संशोधित कर सकता है। श्रम न्यायालय की तुलना में औद्योगिक न्यायाधिकरणों का अधिकार क्षेत्र व्यापक है। 1947 के औद्योगिक विवाद अधिनियम के अधिनिर्णयन की त्रिस्तरीय प्रणाली में तीसरा राष्ट्रीय न्यायाधिकरण है। औद्योगिक विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए केंद्र सरकार सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा एक या एक से अधिक राष्ट्रीय ट्रिब्यूनल गठित कर सकती है, जिसमें केंद्र सरकार की राय में राष्ट्रीय महत्व का प्रश्न शामिल है या कोई भी

मामला जो एक से अधिक राज्यों में औद्योगिक प्रतिष्ठान को प्रभावित करेगा। जब एक राष्ट्रीय न्यायाधिकरण को संदर्भित किया गया है, तो किसी भी न्यायालय या औद्योगिक न्यायाधिकरण के पास ऐसे मामले पर निर्णय लेने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं होगा।

बोध प्रश्न

1. औद्योगिक विवाद क्या है?
2. औद्योगिक विवाद की त्रिस्तरीय प्रणाली की व्याख्या करें
3. औद्योगिक विवादों को हल करने के तरीके पर प्रकाश डालें
4. औद्योगिक विवादों के कारणों का वर्णन करें

6.5 सारांश

अधिनियम का अनूठा उद्देश्य सामूहिक सौदेबाजी को बढ़ावा देना और अवैध हड़तालों और तालाबंदी से बचकर उद्योगों में शांतिपूर्ण माहौल बनाए रखना है। यह अधिनियम पार्टियों के बीच औद्योगिक विवादों में शांति और सद्भाव लाने और उनके मुद्दों को हल करने के मुख्य उद्देश्य से बनाया गया था। 1947 का औद्योगिक विवाद अधिनियम वह अधिनियम है जो भारतीय मुख्य भूमि पर काम करने वाले सभी श्रमिकों या व्यक्तियों के लिए श्रम नियमों को नियंत्रित करता है। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 पूरे भारत में विस्तारित हुआ और जहां तक ट्रेड यूनियनों के साथ-साथ व्यक्तिगत रूप से संबंधित है, भारतीय श्रम कानून को विनियमित किया।

6.6 पारिभाषिक शब्दावली

Arbitrator मध्यस्थ - सामान्य मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए तटस्थ व्यक्ति, एक अंपायर औसत वेतन - एक कार्यकर्ता को देय औसत वेतन शामिल है। तीन पूर्ण कैलेंडर महीनों में मासिक वेतन पाने वाले श्रमिकों के मामले में, साप्ताहिक भुगतान करने वालों के मामले में, चार पूर्ण सप्ताहों में, दैनिक वेतन पाने वाले श्रमिकों के मामले में पिछले 12 पूर्ण कार्य दिवसों में।

Labour Court श्रम न्यायालय - का अर्थ औद्योगिक विवाद मामलों आदि पर निर्णय लेने के लिए (1.D) अधिनियम के तहत गठित एक श्रम न्यायालय है।

Interest Disputes: इन विवादों को 'आर्थिक विवाद' भी कहा जाता है। इस प्रकार के विवाद या तो कर्मचारियों द्वारा किए गए दावों या नियोक्ताओं द्वारा दिए गए प्रस्तावों से रोजगार के नियमों और शर्तों से उत्पन्न होते हैं।

Industry : उद्योग शब्द उद्योग अधिनियम की धारा 2 (जे) के तहत किसी भी व्यवसाय, व्यापार या उपक्रम निर्माण या व्यवसाय के रूप में परिभाषित किया गया है और इसमें किसी भी व्यवसाय, सेवा, रोजगार, हस्तकला या औद्योगिक व्यवसाय या कामगारों का व्यवसाय शामिल है।

Dispute- विवाद करना, विवाद होना

Trade union – "अपने कामकाजी जीवन की स्थितियों को बनाए रखने और सुधारने के उद्देश्य से वेतन पाने वालों का एक सतत संघ है।"

Gherao - शिक्षण संस्थानों में भी एक सामान्य विशेषता है। आपने अपने स्वयं के विश्वविद्यालय में अधिकारियों को कभी-कभी कर्मचारियों/छात्रों द्वारा घेराव करते हुए देखा होगा ताकि अधिकारियों को अपनी माँगे मनवाने के लिए बाध्य किया जा सके।

6.7 संदर्भित / उपयोगी पुस्तकें

श्रम और औद्योगिक विधि - प्रो. सूर्य नारायण मिश्र

Industrial Relations (औद्योगिक सम्बन्ध): Revised Edition (2020) Hindi Edition by डॉ. चतुर्भुज मामोरिया (Author), मोहनलाल दशोरा (Author), मोहनलाल दशोरा डॉ. चतुर्भुज मामोरिया

Industrial and Labour Laws (औद्योगिक एवं श्रम अधिनियम): Revised Edition [2021] Hindi Edition by आर. सी. अग्रवाल (Author), डॉ. ओ. पी. गुप्ता (Author), डॉ. ओ. पी. गुप्ता आर. सी. अग्रवाल

6.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1

2.

[illegible]

3.

This image shows a blank sheet of white paper with horizontal ruling lines. The lines are evenly spaced and extend across the width of the page. There are no margins, text, or other markings on the paper.

4.

This image shows a full page of white paper with horizontal grey ruling lines. The lines are evenly spaced and run across the width of the page, providing a template for writing or drawing. There are no margins, text, or other markings on the page.



उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

MSW-106

श्रम कल्याण और
मानव संसाधन प्रबंधन

खण्ड -2

श्रम कल्याण और सामूहिक सौदेबाजी

इकाई-7 श्रम कल्याण का दर्शन

इकाई-8 श्रम कल्याण के सिद्धांत

इकाई -9 भारत में श्रम कल्याण के कार्यक्रम

इकाई-10 सामूहिक सौदेबाजी के उद्देश्य

इकाई-11 सामूहिक सौदेबाजी के प्रकार

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति — प्रो० सीमा सिंह, माननीय कुलपति, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

1. प्रो. सन्तोषा कुमार निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा,
उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज— अध्यक्ष
2. प्रो. अनूप भारतीय, समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य
3. डॉ. सन्दीप गिरी, समाज कार्य विभाग. महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी —सदस्य
4. डॉ. रोहित मिश्रा, समाज कार्य विभाग विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —सदस्य
5. डॉ. रुपेश सिंह, डॉ. शकुन्तला मिश्रा विकलांग विश्वविद्यालय, लखनऊ—सदस्य
6. डॉ. अलका वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ.प्र.रा.ट. मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज —सचिव

परिभाषक

प्रो० विवेक सिंह, समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज

सम्पादक

प्रो० विवेक सिंह, समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज

समन्वयक —डॉ. अलका वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर,
समाज कार्य, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद**लेखक —**

- खण्ड..1 श्री मनीष सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
- खण्ड..2 श्री मनीष सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य,
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
- खण्ड..3 डॉ० दिनेश सिंह, असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य, अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. - 978-81-19530-95-3

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध कराई गई है। विश्वविद्यालय, इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं हैं।

प्रकाशन— विनय कुमार, कुलसचिव, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2023।

मुद्रक— चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा० लि०, 42/7 जवाहर लाल नेहरू रोड, प्रयागराज—211002

इकाई 7 - श्रम कल्याण का दर्शन

इकाई की रूपरेखा

- 7.0 इकाई का उद्देश्य
- 7.1 परिचय
- 7.2 श्रम कल्याण की अवधारणा
- 7.3 श्रम कल्याण की परिभाषा
- 7.4 श्रम कल्याण के विभिन्न दृष्टिकोण
- 7.5 सारांश
- 7.6 परिभाषिक शब्दावली
- 7.7 संदर्भित पुस्तकें
- 7.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.0 इकाई का उद्देश्य (Objective of Unit)

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण के दर्शन पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग श्रम कल्याण के निम्नलिखित पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे -

- श्रम कल्याण की अवधारणा को जान सकेंगे;
- श्रम कल्याण की विभिन्न परिभाषाएं से अवगत हो सकेंगे;
- श्रम कल्याण के विभिन्न दृष्टिकोणों को समझ सकेंगे.

7.1 परिचय (Introduction)

श्रम कल्याण देश की औद्योगिक उन्नति और अर्थव्यवस्था में बहुत महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह औद्योगिक संबंधों का एक महत्वपूर्ण पहलू है, एक अतिरिक्त घटक की तरह है जो की कर्मचारी एक अच्छे वेतन द्वारा दी गई संतुष्टि से भी अधिक संतोष प्रदान करता है। जबसे औद्योगीकरण और मशीनीकरण में प्रगति हुई, इसने अतिरिक्त महत्व प्राप्त किया है।

एक उत्साही और संतुष्ट कार्यबल किसी भी देश की औद्योगिक सफलता के लिए एक फायदा है। श्रम कल्याण को उपयुक्त रूप से कर्मचारियों के रखरखाव कार्य के रूप में इस तरह परिभाषित किया जा सकता है कि इसका उद्देश्य विशेष रूप से कर्मचारी स्वास्थ्य और दृष्टिकोण की सुरक्षा करना है।

इसे एक अलग तरीके से पेश करने के लिए, यह कर्मचारी के आत्म-सम्मान को बनाए रखने में योगदान देता है। एक उद्योग में कल्याणकारी सेवाओं का उद्देश्य श्रमिकों और उनके परिवारों के रहने और काम करने के माहौल को बेहतर बनाना है, क्योंकि श्रमिकों के कल्याण को उनके रिश्तेदारों से अलग नहीं किया जा सकता है।

हालांकि महंगा है, यह उत्पादन की प्रभावशीलता में जोड़ने के लिए साबित हुआ है। अपनी अपनी प्राथमिकताओं के आधार पर, श्रम कल्याण के प्रति सभी नियोक्ताओं की दृष्टिकोण और झुकाव की सीमा अलग है। इसके फलस्वरूप सरकार इस बात को लेकर आश्वस्त नहीं है कि प्रत्येक कंपनी का प्रबंधन व्यापक सोच वाला है और मूलभूत विकासात्मक उपाय प्रदान करेगा जो की औद्योगिक श्रमिकों के लिए उपलब्ध मूलभूत सुविधाओं में निरंतरता के कुछ उपाय को जन्म देने के लिए आवधिक वैधानिक कानून पेश करता है।

7.2 श्रम कल्याण की अवधारणा (Concept)

वेतन के अतिरिक्त कर्मचारियों को नियोक्ता द्वारा प्रदान की जाने वाली विभिन्न सेवाओं को निरूपित करने के लिए 'कर्मचारी कल्याण' और 'श्रमिक कल्याण' शब्दों का परस्पर उपयोग किया जाता है। "कल्याण" शब्द का अर्थ किसी व्यक्ति या समूह के भौतिक, सामाजिक और मानसिक वातावरण के संदर्भ में रहने वाले कर्मचारियों से है। श्रम कल्याण की अवधारणा में काफी बदलाव आया है। देश का सामाजिक और आर्थिक विकास श्रम कल्याण और श्रम सुरक्षा कानूनों के अधिनियमन की ओर होना चाहिए। औद्योगिक दुनिया में अपने अस्तित्व के लिए एक व्यक्ति का अपने पर्यावरण के साथ समायोजन आवश्यक है। एक श्रमिक को उसकी सेवाओं के प्रकार के लिए भुगतान किया जाता है लेकिन भुगतान कार्य की प्रकृति, उसकी दक्षता, भुगतान करने के लिए उद्योग की क्षमता और उस विशेष उद्योग में उसके काम के महत्व पर निर्भर करता है। एक कार्यकर्ता को कार्यस्थल पर संतुलन बनाए रखना होता है। उसे शारीरिक कार्य परिस्थितियों के साथ-साथ पर्यवेक्षण के प्रकार, सहकर्मियों आदि के साथ समायोजन करना पड़ता है।

स्वीकृति, सम्मान, सद्भावना, ध्यान और मान्यता, जो एक कार्यकर्ता अपने कार्य समूह, समुदाय, परिवार और पड़ोस से प्राप्त करता है, श्रम कल्याण की आधुनिक अवधारणा का एक अभिन्न अंग है। अपने वेतन पैकेट से भोजन, वस्त्र और आश्रय जैसी शारीरिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए कार्यकर्ता की क्षमता श्रम कल्याण की भौतिक अवधारणा को संदर्भित करती है।

लेकिन आर्थिक स्थिति आधुनिक समाज में उसकी सामाजिक स्थिति को नियंत्रित करती है; किस प्रकार का भोजन वह वहन कर सकता है, किस प्रकार और गुणवत्ता के कपड़े वह और उसके परिवार के सदस्य पहनते हैं और घरेलू सुख सुविधाओं की प्रकृति से उसकी सामाजिक स्थिति निर्धारित होती है। इस प्रकार कल्याण एक भौतिक अवधारणा के साथ-साथ एक सामाजिक अवधारणा भी है।

हर समाज के अपने नैतिक कोड और आचरण होते हैं। एक कार्यकर्ता को अपने नैतिक मूल्यों का पालन करना होता है। समाज के क्या करें और क्या न करें हैं। उदाहरण के लिए, निषेध एक राज्य का कानून हो सकता है लेकिन यह कुछ सामाजिक अवसरों जैसे विवाह समारोह, मृत्यु समारोह आदि पर मेहमानों को पेय प्रदान करने के लिए एक प्रथागत प्रथा हो सकती है।

श्रम कल्याण की ये सभी अवधारणाएँ भौतिक, सामाजिक और नैतिक परस्पर संबंधित हैं। धन-मजदूरी की क्रय शक्ति एक कार्यकर्ता की सामाजिक स्थिति और समाज के नैतिकता को उसके दिन-प्रतिदिन के व्यवहार को निर्धारित करती है। इस प्रकार कल्याण एक समग्र अवधारणा है। दूसरी ओर अधिनायकवादी अवधारणा, श्रम कल्याण की अवधारणा समाज-से-समाज, देश-देश में भिन्न होती है और यह बदलते समय के साथ बदलती भी है।

अतः श्रमिक कल्याण की न्यूनतम एवं अधिकतम शर्त तय करना कठिन है। पश्चिमी श्रमिकों के लिए जो भी न्यूनतम आवश्यकताएं हैं, वे विकासशील देश के श्रमिकों के लिए अधिकतम हो सकती हैं। इसी तरह, अधिकारियों के लिए जो कुछ न्यूनतम है वह निम्न संवर्ग के कर्मचारियों के लिए अधिकतम हो सकता है? युवा श्रमिकों की आवश्यकताएं पुराने श्रमिकों से भिन्न होती हैं?

7.3 श्रम कल्याण की परिभाषा (Definition)

श्रमिक कल्याण कार्यक्रम के अन्तर्गत श्रमिकों और कर्मचारियों को उनके वेतन के अतिरिक्त अन्य अनेक प्रकार के लाभ दिये जाते हैं जिन्हें श्रमिक कल्याण, कर्मचारी-सेवा, हित-लाभ कार्यक्रम, गुप्त पेट्रोल आदि नामों से जाना जाता है। श्रमिक कल्याण को सर्वमान्य परिभाषा देना मुश्किल कार्य है फिर भी विभिन्न विद्वानों तथा संगठनों द्वारा श्रमिक कल्याण को निम्न प्रकार परिभाषित किया गया है:-

औद्योगिक श्रम संगठन (ILO) के अनुसार, "श्रम कल्याण को समझा जा सकता है और इसमें ऐसी सेवाएं साधन और सुविधाएं शामिल हैं जो स्वस्थ और अनुकूल वातावरण में अपना काम करने के लिए उपक्रम के आसपास स्थापित की जा सकें और उन सुविधाओं का लाभ कर्मिकों के स्वास्थ्य में सुधार और उनमें उच्च मनोबल के रूप में मिले .

इसके अलावा, ILO Report श्रम कल्याण के बारे में ऐसी सेवाओं, साधनों और सुविधाओं के बारे में बात करती है, जो उपक्रमों के बाहर या आसपास स्थापित की जा सकती हैं, ताकि उनमें कार्यरत व्यक्तियों को स्वस्थ और सौहार्दपूर्ण परिवेश में अपना काम करने में सक्षम बनाया जा सके और उन्हें अच्छा स्वास्थ्य और उच्च मनोबल के अनुकूल सुविधाएं प्रदान की जा सकें। (ILO, Asian Regional Conference Report-H 1947)

संयुक्त राष्ट्र की मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा (United Nations Universal Declaration of Human Rights) यह मानती है कि "हर किसी को काम की न्यायोचित और अनुकूल परिस्थितियों का अधिकार है, जिसमें सुरक्षित और स्वस्थ काम करने की स्थिति और बेरोजगारी के खिलाफ सुरक्षा शामिल है।"

विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) श्रम कल्याण को "सभी व्यवसायों में श्रमिकों के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण के प्रचार और रखरखाव" के रूप में परिभाषित करता है।

भारतीय कारखाना अधिनियम (Indian Factories Act), 1948 "कल्याणकारी उपायों" को "श्रमिकों के आराम, स्वास्थ्य और भलाई के लिए प्रदान की जाने वाली सुविधाएं, जैसे कि चिकित्सा सुविधाएं, विश्राम कक्ष, कैंटीन और मनोरंजक सुविधाएं" के रूप में परिभाषित करता है।

श्रम जाँच समिति (Labor inquiry committee), 1945 के अनुसार, "श्रमिकों के शारीरिक, मानसिक, आर्थिक और नैतिक कल्याण के उद्देश्य से किया गया कोई कार्य जो वैधानिक कानून तथा नियोक्ता और श्रमिकों मध्य हय् एग्रीमेन्ट/करार के अन्तर्गत वर्णित लाभों के अतिरिक्त हो, चाहे वह नियोक्ताओं, सरकार अथवा अन्य संस्थाओं द्वारा किया गया हो, श्रमिक कल्याण (Labour Welfare) कहलाता है।"

ब्यूरो ऑफ लेबर स्टेटिस्टिक्स (Bureau of Labour Statistics) के अनुसार, “श्रमिकों के आराम तथा बौद्धिक व शारीरिक विकास हेतु मजदूरी के अतिरिक्त किया गया ऐसा कोई कार्य, जो उद्योग के लिए करना कानूनन आवश्यक न हो, श्रम कल्याण कहलाता है।”

बाल्फर (Balfur) समिति के अनुसार, “श्रमिक कल्याण के अन्तर्गत श्रमिकों के आराम, सुरक्षा, स्वास्थ्य तथा कल्याण को प्रभावित करने वाली सभी बातों को सम्मिलित किया जाता है तथा इसमें शिक्षा, मनोरंजन, बचत योजनाओं तथा स्वास्थ्यप्रद आवासों इत्यादि का भी प्रावधान किया जाता है।”

आर्थर जेम्स टॉड (Arthur James Todd) के अनुसार, “श्रम कल्याण का अर्थ है, वेतन के अतिरिक्त कर्मचारियों के आराम और सुधार, बौद्धिक और सामाजिक उत्थान की व्यवस्था, जो कि उद्योग की आवश्यकता नहीं है।”

एन. एम. जोशी (N M Joshi) के अनुसार “श्रम कल्याण कार्य में उन सभी प्रयासों को शामिल किया गया है जो नियोजित अपने कर्मचारियों के लाभ के लिए कारखाना अधिनियम द्वारा निर्धारित न्यूनतम मानकों की कार्य स्थितियों के ऊपर और दुर्घटना, वृद्धावस्था बेरोजगारी, बीमारी के खिलाफ प्रदान करने वाले सामाजिक कानूनों के प्रावधानों के ऊपर करते हैं।

7.4 श्रम कल्याण के विभिन्न दृष्टिकोण (Theories of labour welfare)

श्रम कल्याण के प्रति दृष्टिकोण संगठनों द्वारा अपने कर्मचारियों की कल्याण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपनाई गई रणनीति या पद्धति को संदर्भित करता है। इसमें कर्मचारियों की कल्याणकारी जरूरतों की पहचान करना और उन्हें संबोधित करने के लिए कार्यक्रम और नीतियां तैयार करना शामिल है। श्रम कल्याण के प्रति दृष्टिकोण विभिन्न कारकों से प्रभावित हो सकता है, जैसे कानूनी और नियामक वातावरण, संगठनात्मक संस्कृति, कार्यबल का आकार और प्रकृति, और आर्थिक और सामाजिक संदर्भ जिसमें संगठन संचालित होता है। श्रम कल्याण के दृष्टिकोण, श्रम कल्याण की अवधारणा के विकास को दर्शाते हैं। इससे पहले, सरकार को औद्योगिक संगठनों को अपने कर्मचारियों को बुनियादी सुविधाएं प्रदान करने के लिए मजबूर करना पड़ा। ऐसी बाध्यता आवश्यक थी क्योंकि मालिक श्रमिकों का शोषण करते थे और उनके साथ अनुचित व्यवहार करते थे। समय बीतने के साथ, कल्याण की अवधारणा में परिवर्तन आया है। प्रगतिशील प्रबंधन आज स्वेच्छा से और प्रबुद्ध इच्छा और उत्साह के साथ कल्याणकारी सुविधाएं प्रदान करते हैं। वास्तव में, कल्याण सुविधाएं अब केवल श्रमिकों तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि सामाजिक कल्याण के लिए भी विस्तारित हैं।

इस संबंध में कर्मचारी कल्याण के विभिन्न दृष्टिकोण का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:

1. पुलिस दृष्टिकोण (Policing theory)

श्रम कल्याण का पुलिसिंग सिद्धांत एक दृष्टिकोण है जो श्रमिकों के अधिकारों और कल्याण की रक्षा में कानून प्रवर्तन एजेंसियों की भूमिका पर जोर देता है। यह सिद्धांत पुलिसिंग को श्रम कानूनों और विनियमों को लागू करने, श्रमिकों के अधिकारों के उल्लंघन को रोकने और सुरक्षित और स्वस्थ कामकाजी परिस्थितियों को बढ़ावा देने के साधन के रूप में देखता है।

इस सिद्धांत के अनुसार, सरकार यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार हैं कि नियोजित श्रम कानूनों और विनियमों का पालन करते हैं, जैसे कि न्यूनतम वेतन कानून, भेदभाव-विरोधी कानून और कार्यस्थल सुरक्षा नियम। इन कानूनों का उल्लंघन करने वाले नियोजितों की जांच और उन पर मुकदमा चलाने में भी उनकी भूमिका होती है, साथ ही श्रम कानूनों के उल्लंघन से पीड़ित श्रमिकों को सहायता और सहायता प्रदान करने में भी उनकी भूमिका होती है।

श्रम कल्याण का पुलिसिंग सिद्धांत कानून प्रवर्तन एजेंसियों, श्रमिक संघों और अन्य कार्यकर्ता वकालत समूहों के बीच सहयोग के महत्व पर बल देता है। साथ काम करके, ये समूह श्रम कल्याण को बढ़ावा देने और श्रमिकों के अधिकारों के उल्लंघन को रोकने के लिए अधिक प्रभावी रणनीति विकसित कर सकते हैं।

इस सिद्धांत के आलोचकों का तर्क है कि यह कानून प्रवर्तन एजेंसियों पर बहुत अधिक जिम्मेदारी डालता है और आर्थिक असमानता और कॉर्पोरेट शक्ति जैसे श्रम कानून के उल्लंघन के मूल कारणों को संबोधित नहीं करता है। उनका सुझाव है कि श्रम कल्याण नीतियों को सरकारी एजेंसियों, गैर-लाभकारी संगठनों और सामुदायिक सदस्यों सहित व्यापक हितधारकों द्वारा विकसित और कार्यान्वित किया जाना चाहिए।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण का पुलिसिंग सिद्धांत उस महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालता है जो कानून प्रवर्तन एजेंसियां श्रमिकों के अधिकारों और कल्याण की रक्षा में निभा सकती हैं। हालांकि, यह श्रम कल्याण के लिए एक अधिक व्यापक दृष्टिकोण की आवश्यकता पर भी प्रकाश डालता है जिसमें कई हितधारक शामिल होते हैं और श्रम कानून के उल्लंघन के अंतर्निहित कारणों को संबोधित करते हैं।

2. धार्मिक दृष्टिकोण (Religious doctrine)

कई धर्मों में श्रम कल्याण और श्रमिकों के न्यायपूर्ण व्यवहार पर जोर दिया गया है। धार्मिक शिक्षाएँ अक्सर श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करती हैं, जिसमें उचित मजदूरी, सुरक्षित कार्य परिस्थितियाँ और शोषण से सुरक्षा शामिल है।

ईसाई धर्म में, उदाहरण के लिए, "काम की गरिमा" की अवधारणा श्रम के मूल्य और योगदान के सम्मान के महत्व पर जोर देती है। कैथोलिक चर्च, विशेष रूप से, श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करने और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने का एक लंबा इतिहास रहा है। 1891 में, पोप लियो तेरहवें ने विश्व पत्र रेम नोवारम जारी किया, जिसमें श्रमिकों के अधिकारों, उचित वेतन और सुरक्षित कार्य स्थितियों की सुरक्षा का आह्वान किया गया था।

इस्लाम में, "मिज़ान" या संतुलन की अवधारणा श्रम सहित जीवन के सभी पहलुओं में निष्पक्षता और न्याय के महत्व पर जोर देती है। इस्लामी शिक्षाएँ श्रमिकों के साथ सम्मान और सम्मान के साथ व्यवहार करने और उन्हें उचित वेतन देने के महत्व पर जोर देती हैं। पैगंबर मुहम्मद खुद पैगंबर बनने से पहले एक मजदूर के रूप में काम करते थे, और कहा जाता है कि उन्होंने कहा था, "मजदूर को उसका पसीना सूखने से पहले उसकी मजदूरी का भुगतान करो।"

यहूदी धर्म में, "टिक्कून ओलम" या दुनिया की मरम्मत की अवधारणा, सामाजिक न्याय के महत्व और जरूरतमंद लोगों की मदद करने पर जोर देती है। यहूदी शिक्षाएँ श्रमिकों के साथ उचित और न्यायपूर्ण व्यवहार करने और उन्हें उचित वेतन देने के महत्व पर जोर देती हैं। तल्मूड, यहूदी शिक्षाओं का एक संग्रह, कहता है कि "जो मजदूर की मजदूरी रोकता है, वह प्राण लेने वाले के समान है।"

हिंदू धर्म की प्रमुख शिक्षाओं में से एक "धर्म" की अवधारणा है, जो जीवन में किसी के कर्तव्य या जिम्मेदारी को संदर्भित करता है। श्रम कल्याण के संदर्भ में, धर्म का तात्पर्य है कि नियोक्ताओं का यह कर्तव्य है कि वे सुरक्षित और स्वस्थ काम करने की स्थिति, उचित मजदूरी और विकास और उन्नति के अवसर प्रदान करें। बदले में, श्रमिकों का कर्तव्य है कि वे अपनी क्षमता के अनुसार अपना काम करें और समाज के कल्याण में योगदान दें। हिंदू धर्म सामूहिक सौदेबाजी और श्रमिकों के अधिकारों और कल्याण की रक्षा के लिए श्रमिक संघों के गठन के महत्व को भी पहचानता है। प्रमुख हिंदू धर्मग्रंथों में से एक, महाभारत में श्रमिकों की एक कहानी है जो अनुचित कामकाजी परिस्थितियों का विरोध करने के लिए हड़ताल पर चले गए। यह कहानी सामूहिक कार्रवाई के महत्व और श्रमिकों को अपने अधिकारों के लिए खड़े होने की आवश्यकता पर प्रकाश डालती है।

कुल मिलाकर, कई धर्मों में श्रम कल्याण और श्रमिकों के न्यायपूर्ण व्यवहार पर जोर दिया गया है। धार्मिक शिक्षाएँ अक्सर श्रमिकों के अधिकारों की वकालत करती हैं और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देती हैं, श्रमिकों के साथ सम्मान और सम्मान के साथ व्यवहार करने के महत्व पर बल देती हैं और यह सुनिश्चित करती हैं कि उन्हें उनके श्रम के लिए उचित मुआवजा दिया जाए।

3. परोपकारी दृष्टिकोण (Philanthropic theory)

यह सिद्धांत मानव जाति के प्रति मनुष्य के प्रेम पर आधारित है। ग्रीक में, 'फिलो' का अर्थ है प्यार और 'एंथ्रोप्स' का अर्थ है मनुष्य। तो परोपकारी का अर्थ है मानव जाति से प्रेम करना। माना जाता है कि मनुष्य में एक सहज प्रेरणा होती है जिसके द्वारा वह दूसरों के कष्टों को दूर करने और उनकी भलाई को बढ़ावा देने का प्रयास करता है। यह प्रेरणा काफी शक्तिशाली हो सकती है और उसे महान बलिदान करने के लिए प्रेरित कर सकती है। जब कुछ नियोक्ताओं को अपने साथियों पर दया आती है, तो वे अपने श्रमिकों के लाभ के लिए श्रम कल्याण के उपाय कर सकते हैं।

श्रम कल्याण के परोपकारी सिद्धांत का मानना है कि नियोक्ताओं का नैतिक दायित्व है कि वे अपने श्रमिकों की भलाई में सुधार के लिए कानून द्वारा आवश्यक से परे लाभ और सेवाएं प्रदान करें। यह सिद्धांत इस विचार पर जोर देता है कि नियोक्ताओं की अपने कर्मचारियों और उनके परिवारों के साथ-साथ उन समुदायों के कल्याण को बढ़ावा देने की सामाजिक जिम्मेदारी है जिसमें वे काम करते हैं।

परोपकारी सिद्धांत के अनुसार, नियोक्ताओं को श्रम कल्याण के लिए न्यूनतम कानूनी आवश्यकताओं से परे जाना चाहिए और अतिरिक्त लाभ प्रदान करना चाहिए जैसे स्वास्थ्य सेवा, सेवानिवृत्ति योजना, शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रम, और कार्य-जीवन संतुलन के लिए समर्थन। नियोक्ता अपने श्रमिकों और व्यापक समुदाय की

सामाजिक और आर्थिक स्थितियों में सुधार के लिए धर्मार्थ देने, सामुदायिक सेवा और परोपकार के अन्य रूपों में भी शामिल हो सकते हैं।

परोपकारी सिद्धांत के समर्थकों का तर्क है कि अतिरिक्त लाभ प्रदान करने और परोपकार में संलग्न होने से कर्मचारियों के मनोबल में सुधार हो सकता है, उत्पादकता में वृद्धि हो सकती है और कंपनी की प्रतिष्ठा में वृद्धि हो सकती है। उनका यह भी तर्क है कि ये कार्य सामाजिक असमानता को कम करने और अधिक न्यायपूर्ण और न्यायसंगत समाज को बढ़ावा देने में मदद कर सकते हैं।

परोपकारी सिद्धांत के आलोचकों का तर्क है कि श्रमिक अधिकारों और सामाजिक असमानता से संबंधित प्रणालीगत मुद्दों को संबोधित करने से बचने के लिए नियोक्ता लोकोपकार का उपयोग कर सकते हैं। उनका तर्क है कि मौजूदा प्रणाली की कमियों को दूर करने के लिए परोपकार पर भरोसा करने के बजाय नियोक्ताओं को निष्पक्ष और न्यायसंगत काम करने की स्थिति और मुआवजा प्रणाली बनाने पर ध्यान देना चाहिए।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण का परोपकारी सिद्धांत नियोक्ताओं के महत्व पर जोर देता है जो अपने कर्मचारियों और व्यापक समुदाय की भलाई को बढ़ावा देने में सक्रिय भूमिका निभाते हैं, और सामाजिक और आर्थिक न्याय को बढ़ावा देने के साधन के रूप में परोपकार में शामिल होते हैं।

4. ट्रस्टीशिप दृष्टिकोण (Trusteeship theory)

इसे श्रम कल्याण का पितृसत्तात्मक सिद्धांत भी कहा जाता है, जिसके अनुसार "उद्योगपति या नियोक्ता कुल औद्योगिक संपत्ति, संपत्तियों और मुनाफे को धारण करता है"। इन संपत्तियों और मुनाफे का इस्तेमाल वह अपने लिए करता है, अपने कार्यकर्ताओं के लाभ के लिए और समाज के लिए भी। मजदूर नाबालिग की तरह होते हैं। शिक्षा की कमी के कारण वे अज्ञानी हैं और अपने हितों की देखभाल करने में सक्षम नहीं हैं।

श्रम कल्याण का ट्रस्टीशिप सिद्धांत भारतीय स्वतंत्रता नेता और महान समाज सुधारक महात्मा गांधी द्वारा प्रस्तावित किया गया था। सिद्धांत बताता है कि नियोक्ता अपने व्यवसायों द्वारा उत्पन्न धन और संसाधनों के ट्रस्टी हैं, और उनका नैतिक दायित्व है कि वे इन संसाधनों का उपयोग अपने श्रमिकों और समाज को समग्र रूप से लाभान्वित करने के लिए करें।

इस सिद्धांत के अनुसार, नियोक्ताओं को अपने कर्मचारियों को केवल वस्तुओं या संसाधनों के रूप में नहीं देखना चाहिए, बल्कि मनुष्य के रूप में गरिमा और मूल्य के रूप में देखना चाहिए। नियोक्ता का नैतिक कर्तव्य है कि वह अपने कर्मचारियों की भलाई की रक्षा करे और उन्हें बढ़ावा दे, और यह सुनिश्चित करे कि उन्हें उचित वेतन, सुरक्षित काम करने की स्थिति और व्यक्तिगत विकास और विकास के अवसर प्राप्त हों। इसके अलावा, नियोक्ता को अपने संसाधनों का उपयोग समाज के सामान्य अच्छे के लिए करना चाहिए, जिसमें सामाजिक और सामुदायिक विकास का समर्थन करना शामिल है।

ट्रस्टीशिप सिद्धांत नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच सहकारी और पारस्परिक रूप से लाभप्रद संबंधों के महत्व पर जोर देता है। नियोक्ताओं को अपने व्यवसायों द्वारा उत्पन्न संसाधनों और धन के ट्रस्टी के रूप में कार्य करना चाहिए, और उनका उपयोग समग्र रूप से समाज की भलाई के लिए करना चाहिए। यह दृष्टिकोण

अन्योन्याश्रितता के सिद्धांत पर आधारित है, जहां नियोक्ता, कार्यकर्ता और समाज के हितों को परस्पर और अन्योन्याश्रित के रूप में देखा जाता है।

ट्रस्टीशिप सिद्धांत के आलोचकों का तर्क है कि व्यवहार में इसे लागू करना मुश्किल हो सकता है, क्योंकि नियोक्ता अपने श्रमिकों और समाज के हितों पर अपने स्वयं के हितों को प्राथमिकता दे सकते हैं। उनका यह भी तर्क है कि सिद्धांत श्रम अधिकारों और सामाजिक न्याय से संबंधित मुद्दों को संबोधित करने के लिए एक स्पष्ट ढांचा प्रदान नहीं करता है।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण का ट्रस्टीशिप सिद्धांत व्यवसाय के लिए एक सामाजिक रूप से जिम्मेदार दृष्टिकोण के महत्व पर जोर देता है, जहां नियोक्ता अपने संसाधनों के ट्रस्टी के रूप में कार्य करते हैं और उन्हें अपने श्रमिकों और समाज की बेहतरी के लिए उपयोग करते हैं।

5. सुखदायक दृष्टिकोण (Placating theory)

श्रम कल्याण का सुखदायक सिद्धांत एक समाजशास्त्रीय सिद्धांत है जिसे मार्क्सवादी राजनीतिक वैज्ञानिक और समाजशास्त्री राल्फ मिलिबैंड द्वारा विकसित किया गया था। मिलिबैंड ने तर्क दिया कि नियोक्ता सामाजिक जिम्मेदारी या नैतिक दायित्व की भावना से श्रमिकों को कल्याणकारी लाभ प्रदान करते हैं, बल्कि श्रमिकों को शांत करने और उन्हें ऐसी कार्रवाई करने से रोकते हैं जो उत्पादन प्रक्रिया को बाधित कर सकती है या मौजूदा शक्ति संरचनाओं को चुनौती दे सकती है।

प्लाकेटिंग सिद्धांत बताता है कि यथास्थिति बनाए रखने और उत्पादन प्रक्रिया में व्यवधान को रोकने के लिए कल्याणकारी लाभ प्रदान किए जाते हैं। नियोक्ता श्रमिकों को संतुष्ट रखने और श्रम अशांति की संभावना को कम करने के साधन के रूप में आवास, स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा जैसे लाभ प्रदान कर सकते हैं।

प्लाकेटिंग सिद्धांत के आलोचकों का तर्क है कि यह श्रम संबंधों के लिए एक पितृसत्तात्मक और पदानुक्रमित दृष्टिकोण को पुष्ट करता है, जहां श्रमिकों को निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में सक्रिय प्रतिभागियों के बजाय कल्याणकारी लाभों के निष्क्रिय प्राप्तकर्ता के रूप में देखा जाता है। इस दृष्टिकोण को शोषणकारी के रूप में भी देखा जा सकता है, क्योंकि नियोक्ता कल्याण लाभों का उपयोग श्रमिकों को नियंत्रित करने और उनकी अंतर्निहित चिंताओं और शिकायतों को दूर करने के बजाय हेरफेर करने के साधन के रूप में कर सकते हैं।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण का सुखदायक सिद्धांत श्रमिक अशांति को रोकने और कार्यबल पर नियंत्रण बनाए रखने के साधन के रूप में कल्याणकारी लाभ प्रदान करने वाले नियोक्ताओं के महत्व पर जोर देता है। हालांकि, श्रम संबंधों के लिए एक पदानुक्रमित और पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण को मजबूत करने के लिए इस दृष्टिकोण की आलोचना की जाती है, और श्रम अधिकारों और सामाजिक न्याय से संबंधित अंतर्निहित मुद्दों को संबोधित नहीं कर सकता है।

6. जनसंपर्क दृष्टिकोण (Public relations theory)

श्रम कल्याण के जनसंपर्क सिद्धांत से पता चलता है कि नियोक्ता कल्याणकारी लाभ प्रदान करते हैं और अपनी सार्वजनिक छवि और प्रतिष्ठा में सुधार के साधन के रूप में सामाजिक जिम्मेदारी की पहल में संलग्न हैं। इस

सिद्धांत के अनुसार, नियोक्ता सामाजिक उत्तरदायित्व या नैतिक दायित्व की भावना से नहीं, बल्कि उपभोक्ताओं, निवेशकों और अन्य हितधारकों की आंखों में उनकी सार्वजनिक छवि और प्रतिष्ठा को बढ़ाने के साधन के रूप में श्रम कल्याण पहलों में संलग्न हैं।

जनसंपर्क सिद्धांत श्रम अधिकारों और सामाजिक न्याय से संबंधित अंतर्निहित मुद्दों को संबोधित करने के बजाय कंपनी की बाहरी धारणा के प्रबंधन के महत्व पर जोर देता है। नियोक्ता अपनी सार्वजनिक छवि और प्रतिष्ठा में सुधार और ग्राहक वफादारी और ब्रांड वफादारी बढ़ाने के साधन के रूप में परोपकार, सामुदायिक सेवा और सामाजिक जिम्मेदारी पहल के अन्य रूपों में संलग्न हो सकते हैं।

जनसंपर्क सिद्धांत के आलोचकों का तर्क है कि यह श्रम कल्याण के लिए एक सतही और सांकेतिक दृष्टिकोण को पुष्ट करता है, जहां नियोक्ता श्रम अधिकारों और सामाजिक न्याय से संबंधित अंतर्निहित मुद्दों को संबोधित करने के बजाय अपनी सार्वजनिक छवि को बढ़ाने पर ध्यान केंद्रित करते हैं। वे यह भी तर्क देते हैं कि सिद्धांत का उपयोग श्रम अधिकारों और सामाजिक असमानता से संबंधित प्रणालीगत मुद्दों से ध्यान हटाने के साधन के रूप में किया जा सकता है।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण का जनसंपर्क सिद्धांत श्रम अधिकारों और सामाजिक न्याय से संबंधित अंतर्निहित मुद्दों को संबोधित करने के बजाय कंपनी की बाहरी धारणा के प्रबंधन के महत्व पर जोर देता है। हालांकि यह कंपनी की सार्वजनिक छवि और प्रतिष्ठा को बढ़ाने में प्रभावी हो सकता है, श्रम कल्याण के लिए एक सतही और सांकेतिक दृष्टिकोण को मजबूत करने के लिए इसकी आलोचना की जाती है।

7. कार्यात्मक दृष्टिकोण (Functional theory)

श्रम कल्याण के कार्यात्मक सिद्धांत से पता चलता है कि श्रमिकों को उनकी उत्पादकता और दक्षता बढ़ाने के साधन के रूप में कल्याणकारी लाभ प्रदान किए जाते हैं, और अंततः नियोक्ता और संगठन को समग्र रूप से लाभान्वित करते हैं। इस सिद्धांत के अनुसार, श्रम कल्याण पहलों को मानव पूंजी में निवेश के रूप में देखा जाता है, जहां नियोक्ता अपने कौशल, ज्ञान और समग्र कल्याण को बढ़ाने के लिए श्रमिकों को स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा और प्रशिक्षण जैसे लाभ प्रदान करते हैं।

कार्यात्मक सिद्धांत श्रम कल्याण के लिए एक रणनीतिक और सक्रिय दृष्टिकोण के महत्व पर जोर देता है, जहां नियोक्ता कल्याणकारी पहल को संगठनात्मक प्रदर्शन में सुधार और व्यावसायिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के साधन के रूप में देखते हैं। अपने कर्मचारियों की भलाई में निवेश करके, नियोक्ता कर्मचारियों के मनोबल में सुधार कर सकते हैं, अनुपस्थिति और टर्नओवर को कम कर सकते हैं और समग्र उत्पादकता और दक्षता में वृद्धि कर सकते हैं।

कार्यात्मक सिद्धांत के आलोचकों का तर्क है कि यह श्रमिकों के हितों पर नियोक्ता के हितों को प्राथमिकता दे सकता है, और श्रम अधिकारों और सामाजिक न्याय से संबंधित अंतर्निहित मुद्दों को संबोधित नहीं कर सकता है। वे यह भी तर्क देते हैं कि सिद्धांत का उपयोग कम वेतन और खराब काम करने की स्थिति को उचित ठहराने के लिए किया जा सकता है, इस आधार पर कि कल्याणकारी लाभ श्रमिकों को इन कमियों के लिए क्षतिपूर्ति करते हैं।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण का कार्यात्मक सिद्धांत श्रम कल्याण के लिए एक रणनीतिक और सक्रिय दृष्टिकोण के महत्व पर जोर देता है, जहां नियोजित कल्याण पहल को मानव पूंजी में निवेश और संगठनात्मक प्रदर्शन में सुधार के साधन के रूप में देखते हैं। हालांकि यह उत्पादकता और दक्षता बढ़ाने में प्रभावी हो सकता है, श्रमिकों के ऊपर नियोजित के हितों को प्राथमिकता देने और श्रम अधिकारों और सामाजिक न्याय से संबंधित अंतर्निहित मुद्दों की संभावित अनदेखी के लिए इसकी आलोचना की जाती है।

7.5 सारांश (Summary)

श्रम कल्याण नियोजितों द्वारा अपने कर्मचारियों के काम करने की स्थिति और जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए अपनाए गए विभिन्न उपायों को संदर्भित करता है। श्रम कल्याण का उद्देश्य एक स्वस्थ, सुरक्षित और अनुकूल कार्य वातावरण बनाना है जो श्रमिकों के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देता है।

कुछ सामान्य श्रम कल्याण उपायों में एक सुरक्षित और स्वच्छ कार्यस्थल प्रदान करना, उचित मजदूरी और लाभ सुनिश्चित करना, प्रशिक्षण और विकास कार्यक्रम प्रदान करना, चिकित्सा और स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करना और लचीले काम के घंटे और अवकाश नीतियों के माध्यम से स्वस्थ कार्य-जीवन संतुलन को बढ़ावा देना शामिल है।

श्रम कल्याण न केवल कर्मचारियों के लिए फायदेमंद है, बल्कि यह संगठनों को कुशल श्रमिकों को आकर्षित करने और बनाए रखने, उत्पादकता में सुधार करने और अनुपस्थिति और टर्नओवर को कम करने में भी मदद करता है। कई देशों में, ऐसे कानून और नियम हैं जो संगठनों को अपने कर्मचारियों को कुछ न्यूनतम श्रम कल्याण सुविधाएं प्रदान करने के लिए बाध्य करते हैं।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण कर्मचारियों की भलाई सुनिश्चित करने का एक महत्वपूर्ण पहलू है, और जो संगठन इसे प्राथमिकता देते हैं उनके पास अधिक प्रेरित और संतुष्ट कार्यबल होता है।

बोध प्रश्न:

1. श्रम कल्याण को परिभाषित कीजिए ?
2. श्रम कल्याण के विभिन्न दृष्टिकोणों के वर्णन कीजिये ?

7.6 परिभाषिक शब्दावली

- **श्रम कल्याण-** श्रम कल्याण नियोजितों द्वारा अपने कर्मचारियों के काम करने की स्थिति और जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए अपनाए गए विभिन्न उपायों को संदर्भित करता है।
- **उचित मजदूरी-** उचित मजदूरी वह मजदूरी है जो न्यायोचित और उचित है और श्रमिकों को एक सभ्य जीवन स्तर प्रदान करती है।
- **संतुष्ट कार्यबल-** एक संतुष्ट कार्यबल एक ऐसा कार्यबल है जो अपनी नौकरी और अपनी कार्य स्थितियों से संतुष्ट है, और संगठन की सफलता के लिए उत्पादक, व्यस्त और प्रतिबद्ध होने की अधिक संभावना है।

7.7 संदर्भित पुस्तकें

1. श्रम कल्याण, विश्वविद्यालय प्रकाशन- बलेश्वर् पांडे, वर्ष- 2011
2. श्रम विधान, औद्योगिक संबंध एवम् समाज कल्याण, नोशन प्रेस मीडिया- डॉ गणेश कुमार झा, वर्ष- 2022

7.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न 1: श्रम कल्याण को परिभाषित कीजिए ?

This image shows a blank sheet of white paper with horizontal ruling lines. The lines are evenly spaced and run across the width of the page. There are no margins, text, or other markings on the paper.

प्रश्न 2: श्रम कल्याण के विभिन्न दृष्टिकोणों के वर्णन कीजिये

This image shows a blank sheet of white paper with horizontal ruling lines. The lines are evenly spaced and extend across the width of the page. There are no margins, text, or other markings on the paper.

इकाई 8 : श्रम कल्याण के सिद्धांत

8.0 इकाई के उद्देश्य

8.1 परिचय

8.2 श्रम कल्याण के उद्देश्य

8.3 श्रम कल्याण के सिद्धांत

8.4 श्रम कल्याण अधिकारी

8.4.1 श्रम कल्याण अधिकारी की आवश्यकता तथा महत्व

8.4.2 श्रम कल्याण अधिकारी के कर्तव्य

8.5 सारांश

8.6 परिभाषिक शब्दावली

8.7 संदर्भित पुस्तकें

8.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 इकाई के उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण के सिद्धांत पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है . इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग श्रम कल्याण के निम्नलिखित पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे -

- श्रम कल्याण के महत्वपूर्ण पहलुओं को समझ सकेंगे;
- श्रम कल्याण के उद्देश्यों के बारे में जान सकेंगे;
- श्रम कल्याण के सिद्धांतों के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त कर सकेंगे;
- श्रम कल्याण अधिकारी को जान सकेंगे;
- श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका के बारे में लिख सकेंगे।

8.1 परिचय

श्रम कल्याण नियोक्ताओं द्वारा अपने कर्मचारियों के काम करने की स्थिति और जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए किए गए प्रयासों को संदर्भित करता है। ये प्रयास श्रमिकों के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण को बढ़ावा देने और उनकी नौकरी से संतुष्टि, उत्पादकता और प्रेरणा को बढ़ाने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं। श्रम कल्याण के सिद्धांत इस विश्वास पर आधारित हैं कि श्रमिक कुछ बुनियादी अधिकारों और सुविधाओं के हकदार हैं, जैसे कि उचित मजदूरी, सुरक्षित काम करने की स्थिति, स्वास्थ्य देखभाल तक पहुंच और सामाजिक सुरक्षा। ये सिद्धांत मानते हैं कि श्रमिक केवल उत्पादन के कारक नहीं हैं, बल्कि वैध जरूरतों और आकांक्षाओं वाले मनुष्य हैं।

श्रम कल्याण के दृष्टिकोण संगठनों द्वारा अपने कर्मचारियों की कल्याणकारी जरूरतों को पूरा करने के लिए अपनाई गई रणनीतियों या विधियों को संदर्भित करते हैं। इन दृष्टिकोणों में वैधानिक, स्वैच्छिक, मानवाधिकार, रणनीतिक और साझेदारी दृष्टिकोण शामिल हैं। प्रत्येक दृष्टिकोण की अपनी ताकत और सीमाएं होती हैं, और संगठन अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं और परिस्थितियों के आधार पर इनमें से एक या इन दृष्टिकोणों के संयोजन को अपना सकते हैं।

श्रम कल्याण अधिकारी (Labour Welfare Officer) की भूमिका संगठन के कल्याणकारी उपायों को बढ़ावा देना और लागू करना है। श्रम कल्याण अधिकारी कर्मचारियों की कल्याणकारी जरूरतों की पहचान करने और उन्हें संबोधित करने के लिए कार्यक्रमों और नीतियों को डिजाइन करने और लागू करने के लिए जिम्मेदार है। श्रम कल्याण अधिकारी प्रबंधन और श्रमिकों के बीच मध्यस्थ के रूप में भी कार्य करता है और संघर्षों और शिकायतों को हल करने में मदद करता है।

संक्षेप में, श्रम कल्याण मानव संसाधन प्रबंधन का एक अनिवार्य घटक है जो श्रमिकों की भलाई और सम्मान को बढ़ावा देने के महत्व पर जोर देता है। श्रम कल्याण के सिद्धांत और दृष्टिकोण संगठनों को प्रभावी कल्याण उपायों को डिजाइन और कार्यान्वित करने के लिए एक रूपरेखा प्रदान करते हैं जो उनके कर्मचारियों की शारीरिक, मानसिक और सामाजिक भलाई को बढ़ा सकते हैं। श्रम कल्याण अधिकारी यह सुनिश्चित करके इस प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है कि कल्याणकारी उपाय कार्यबल की जरूरतों और आकांक्षाओं के अनुरूप हैं।

8.2 श्रम कल्याण का उद्देश्य (Objective of labour welfare)

श्रमिक तथा उसके परिवार के सर्वांगीण विकास और कल्याण के लिए श्रमिक कल्याण कार्यक्रमों का विशेष महत्व है। इन कार्यक्रमों द्वारा श्रमिक की आर्थिक दशा में सुधार, शारीरिक तथा मानसिक स्तर में वृद्धि तथा भौतिक, नैतिक व आध्यात्मिक विकास किया जाता है। श्रमिक कल्याण कार्यों से श्रमिक का मन-मस्तिष्क प्रफुल्लित रहता है और वह अपनी पूरी योग्यता व सामर्थ्य के साथ उद्योग के हित में सोचता है तथा कार्य करता है।

भारत जैसे विकासशील देश में, जहाँ श्रमिकों की आर्थिक व सामाजिक स्थिति बेहद खराब है, श्रमिक कल्याण से जुड़े कार्यक्रमों का महत्व बहुत अधिक है। श्रमिक कल्याण कार्यक्रम निम्न कारणों से महत्वपूर्ण एवं आवश्यक है:-

1. कार्यक्षमता में वृद्धि (Increase in Working Capacity)

संगठनात्मक सफलता को बढ़ावा देने के लिए कार्य क्षमता में वृद्धि महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे उत्पादकता में वृद्धि, लागत में कमी और कार्य की गुणवत्ता में सुधार हो सकता है। यह श्रमिकों के कल्याण में भी योगदान दे सकता है, उनके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा दे सकता है, और उनके पेशेवर विकास और विकास का समर्थन कर सकता है। कार्य क्षमता बढ़ाने वाले उपायों में निवेश करके, नियोक्ता अपने कर्मचारियों के साथ मजबूत संबंध बना सकते हैं, उनकी प्रतिष्ठा बढ़ा सकते हैं और अपने समुदायों के सामाजिक और आर्थिक विकास में योगदान कर सकते हैं। कार्य क्षमता को बढ़ाने के कई तरीके हैं, जिनमें शामिल हैं:

- **प्रशिक्षण और विकास:** श्रमिकों को प्रशिक्षण और विकास के अवसर प्रदान करने से उनके कौशल और ज्ञान को बढ़ाने में मदद मिल सकती है, जिससे उन्हें अपना काम करने के लिए बेहतर ढंग से तैयार किया जा सकता है। इससे दक्षता और उत्पादकता में वृद्धि हो सकती है, साथ ही नौकरी की संतुष्टि में भी सुधार हो सकता है।
- **प्रौद्योगिकी और उपकरण:** नई तकनीक और उपकरणों में निवेश कार्य प्रक्रियाओं की दक्षता में सुधार करने में मदद कर सकता है, जिससे श्रमिकों को कार्यों को अधिक तेजी से और कम प्रयास से पूरा करने में मदद मिलती है। यह कार्यस्थल की चोटों और दुर्घटनाओं के जोखिम को कम करने में भी मदद कर सकता है।
- **एर्गोनोमिक डिज़ाइन:** एक ऐसा कार्य वातावरण बनाना जो शारीरिक तनाव और तनाव को कम करने के लिए डिज़ाइन किया गया हो, थकान को कम करने और कार्य क्षमता को बढ़ाने में मदद कर सकता है। इसमें समायोज्य वर्कस्टेशन, एर्गोनोमिक कुर्सियाँ, और अन्य उपकरण और उपकरण शामिल हो सकते हैं जो अच्छी मुद्रा का समर्थन करने और शारीरिक तनाव को कम करने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं।
- **स्वास्थ्य और कल्याण कार्यक्रम:** स्वास्थ्य और कल्याण कार्यक्रमों को लागू करने से श्रमिकों के बीच शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देने, बीमारी और अनुपस्थिति के जोखिम को कम करने और समग्र कार्य क्षमता में सुधार करने में मदद मिल सकती है।
- **वर्क-लाइफ बैलेंस:** वर्क-लाइफ बैलेंस को बढ़ावा देने से कर्मचारियों के बीच तनाव और थकान को कम करने में मदद मिल सकती है, जिससे वे काम पर अधिक उत्पादक और कुशल हो सकते हैं।

2. आर्थिक दशा में सुधार (Improvement in Economic Condition)

भारत जैसे गरीब तथा विकाशील देश में श्रमिकों की आर्थिक स्थिति बेहद खराब है। श्रम की आर्थिक स्थिति में सुधार सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने और असमानता को कम करने के साथ-साथ आर्थिक विकास और स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए महत्वपूर्ण है। कर्मचारियों को उचित वेतन, लाभ, और पेशेवर विकास और विकास के अवसर प्रदान करके, नियोक्ता उनकी प्रतिष्ठा बढ़ा सकते हैं, अपने कर्मचारियों के साथ मजबूत संबंध बना सकते हैं और अपने समुदायों के सामाजिक और आर्थिक विकास में योगदान कर सकते हैं। भारत में श्रम की आर्थिक स्थिति में सुधार एक जटिल मुद्दा है जिसके लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। यहाँ कुछ तरीके दिए गए हैं जिनसे भारत में श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार किया जा सकता है:

- **उचित मजदूरी:** भारत में श्रम की आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए उठाए जा सकने वाले सबसे महत्वपूर्ण कदमों में से एक यह सुनिश्चित करना है कि श्रमिकों को उचित मजदूरी का भुगतान किया जाए। यह न्यूनतम मजदूरी कानूनों को लागू करने और लागू करने और नियोक्ताओं को उनके श्रमिकों के

कौशल और अनुभव के अनुरूप मजदूरी का भुगतान करने के लिए प्रोत्साहित करके प्राप्त किया जा सकता है।

- **सामाजिक सुरक्षा:** स्वास्थ्य बीमा, सेवानिवृत्ति योजना और विकलांगता लाभ जैसे सामाजिक सुरक्षा लाभ प्रदान करने से भारत में श्रमिकों की आर्थिक स्थिति में सुधार करने में मदद मिल सकती है, श्रमिकों को वित्तीय सुरक्षा और स्थिरता प्रदान की जा सकती है।
- **कौशल विकास:** श्रमिकों को कौशल विकास और प्रशिक्षण के अवसर प्रदान करने से उनके कौशल और ज्ञान को बढ़ाने में मदद मिल सकती है, जिससे वे अपने नियोक्ताओं के लिए अधिक मूल्यवान बन जाते हैं और उनकी कमाई की क्षमता बढ़ जाती है।
- **श्रम कानूनों को मजबूत बनाना:** श्रम कानूनों को मजबूत करना और उन्हें प्रभावी ढंग से लागू करना श्रमिकों को शोषण और अनुचित व्यवहार से बचाने में मदद कर सकता है, यह सुनिश्चित करता है कि उन्हें उनके काम के लिए उचित मुआवजा मिले।
- **माइक्रोफाइनेंस:** छोटे ऋण और बचत खातों जैसी माइक्रोफाइनेंस सेवाओं तक पहुंच प्रदान करने से भारत में श्रम की आर्थिक स्थिति में सुधार करने में मदद मिल सकती है, उन्हें वे संसाधन उपलब्ध कराए जा सकते हैं जिनकी उन्हें अपना व्यवसाय शुरू करने या अपनी शिक्षा या प्रशिक्षण में निवेश करने की आवश्यकता होती है।
- **रोजगार सृजन:** उचित वेतन देने वाले और लाभ प्रदान करने वाले उद्योगों में रोजगार के नए अवसर पैदा करने से श्रमिकों को स्थिर और सुरक्षित रोजगार प्रदान करके भारत में श्रम की आर्थिक स्थिति में सुधार करने में मदद मिल सकती है।
- **उद्यमिता:** उद्यमशीलता को प्रोत्साहित करने और छोटे व्यवसाय के विकास के लिए सहायता प्रदान करने से नौकरी के नए अवसर पैदा करने और आर्थिक विकास को बढ़ावा देने में मदद मिल सकती है, जिससे भारत में श्रम की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकता है।

3. बेहतर कार्यदशायें (Better Working Conditions)

उद्योगों में जहाँ श्रमिक दिन रात कार्य करते हैं, अगर कार्यदशायें खराब हैं तो श्रमिक अपनी पूरी क्षमता से कार्य नहीं कर पाता तथा अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने में कठिनाई महसूस करता है। बेहतर काम करने की स्थिति के प्रावधान उन उपायों को संदर्भित करते हैं जिनका उद्देश्य उस भौतिक और मनोवैज्ञानिक वातावरण में सुधार करना है जिसमें श्रमिक अपना काम करते हैं। निम्नलिखित कुछ प्रावधान हैं जिन्हें बेहतर कामकाजी परिस्थितियों के निर्माण के लिए लागू किया जा सकता है:

- **सुरक्षित और स्वस्थ कार्यस्थल:** श्रमिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा की रक्षा के लिए एक सुरक्षित और स्वस्थ कार्यस्थल प्रदान करना महत्वपूर्ण है। यह सुरक्षा उपकरण प्रदान करने, मशीनरी और उपकरणों को बनाए रखने और नियमित सुरक्षा निरीक्षण करने से प्राप्त किया जा सकता है।

- **स्वच्छ और साफ-सफाई की स्थिति:** यह सुनिश्चित करना कि कार्यस्थल साफ-सुथरा है और स्वास्थ्यकर है, श्रमिकों के बीच बीमारी और संक्रमण के जोखिम को कम करने में मदद कर सकता है।
- **पर्याप्त प्रकाश और वेंटिलेशन:** पर्याप्त प्रकाश और वेंटिलेशन प्रदान करने से कार्यस्थल के भौतिक वातावरण में सुधार करने और आंखों के तनाव, सिरदर्द और श्वसन समस्याओं के जोखिम को कम करने में मदद मिल सकती है।
- **आरामदायक तापमान:** कार्यस्थल में एक आरामदायक तापमान बनाए रखने से गर्मी की थकावट, हाइपोथर्मिया और तापमान से संबंधित अन्य स्वास्थ्य समस्याओं को रोकने में मदद मिल सकती है।
- **आराम और ब्रेक:** कामगारों को कार्य दिवस के दौरान पर्याप्त आराम और ब्रेक प्रदान करने से तनाव और थकान को कम करने में मदद मिल सकती है, और उनके समग्र स्वास्थ्य और कल्याण में सुधार हो सकता है।
- **वर्कलोड प्रबंधन:** यह सुनिश्चित करना कि वर्कलोड प्रबंधनीय और उचित है, तनाव को कम करने और श्रमिकों के बीच बर्नआउट को रोकने में मदद कर सकता है।
- **गैर-भेदभाव:** यह सुनिश्चित करना कि श्रमिकों के साथ उनके लिंग, जाति, धर्म, या अन्य व्यक्तिगत विशेषताओं के आधार पर भेदभाव नहीं किया जाता है, एक अधिक न्यायसंगत और समावेशी कार्यस्थल बनाने में मदद कर सकता है।
- **उचित व्यवहार:** यह सुनिश्चित करना कि श्रमिकों के साथ उचित व्यवहार किया जाता है और सम्मान के साथ उनके मनोबल और नौकरी से संतुष्टि में सुधार करने, टर्नओवर को कम करने और उत्पादकता में सुधार करने में मदद मिल सकती है।
- **शिकायत निवारण तंत्र:** शिकायत निवारण तंत्र स्थापित करने से यह सुनिश्चित करने में मदद मिल सकती है कि श्रमिकों के पास आवाज है और उनकी कार्य स्थितियों से संबंधित चिंताओं को दूर कर सकते हैं।

इन कार्य परिस्थितियों को सुनिश्चित करके, नियोक्ता अपने श्रमिकों के लिए एक सुरक्षित, स्वस्थ और उत्पादक कार्यस्थल बना सकते हैं। इससे अधिक प्रेरित और लगे हुए कार्यबल, अनुपस्थिति और टर्नओवर में कमी और संगठनात्मक प्रदर्शन में सुधार हो सकता है।

4. श्रमिकों की अनुपस्थिति तथा फेर-बदल में कमी (Reduction in Labour Turnover and Absenteeism)

श्रमिकों की फेरबदल और अनुपस्थिति को कम करना संगठनों के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह भर्ती, प्रशिक्षण और खोई हुई उत्पादकता से जुड़ी लागत को कम करने में मदद करता है। यहां कुछ रणनीतियां हैं जो श्रम टर्नओवर और अनुपस्थिति को कम करने में मदद कर सकती हैं:

- **प्रतिस्पर्धी मुआवजा प्रदान करें:** उद्योग मानकों के अनुरूप प्रतिस्पर्धी मुआवजा पैकेज प्रदान करने से कुशल श्रमिकों को आकर्षित करने और बनाए रखने में मदद मिल सकती है।
- **वृद्धि और विकास के अवसर प्रदान करें:** प्रशिक्षण और विकास के अवसर प्रदान करने से श्रमिकों को अपने कौशल और ज्ञान को बढ़ाने में मदद मिल सकती है, जिससे वे संगठन के लिए अधिक मूल्यवान बन जाते हैं और उनकी नौकरी की संतुष्टि बढ़ जाती है।
- **एक सकारात्मक कार्य वातावरण को बढ़ावा देना:** एक सकारात्मक कार्य वातावरण बनाना जो खुले संचार, टीम वर्क और आपसी सम्मान को महत्व देता है, कर्मचारियों के मनोबल और नौकरी से संतुष्टि को बेहतर बनाने में मदद कर सकता है।
- **प्रोत्साहन प्रदान करें:** बोनस, मान्यता कार्यक्रम और लचीली कार्य व्यवस्था जैसे प्रोत्साहन प्रदान करने से कर्मचारियों को प्रेरित करने और अनुपस्थिति को कम करने में मदद मिल सकती है।
- **स्वास्थ्य और कल्याण कार्यक्रमों को लागू करें:** स्वास्थ्य और कल्याण कार्यक्रमों तक पहुंच प्रदान करना, जैसे कि जिम सदस्यता या मानसिक स्वास्थ्य सहायता, कर्मचारियों के स्वास्थ्य में सुधार और अनुपस्थिति को कम करने में मदद कर सकता है।
- **वर्क-लाइफ बैलेंस को संबोधित करें:** टेलीकम्यूटिंग या फ्लेक्सिबल शेड्यूल जैसी लचीली कार्य व्यवस्था की पेशकश करने से वर्क-लाइफ बैलेंस का समर्थन करने, कर्मचारी तनाव और अनुपस्थिति को कम करने में मदद मिल सकती है।
- **चिंताओं और शिकायतों को दूर करें:** खुले संचार चैनल होने और चिंताओं और शिकायतों को तुरंत दूर करने से कर्मचारी असंतोष और टर्नओवर को रोकने में मदद मिल सकती है।

इन रणनीतियों को लागू करके, संगठन एक सकारात्मक कार्य वातावरण बना सकते हैं जो कर्मचारियों की व्यस्तता, नौकरी से संतुष्टि और उत्पादकता को बढ़ावा देता है, श्रम कारोबार और अनुपस्थिति को कम करता है।

5. नियोक्ता एवं श्रमिकों के मध्य अच्छे सम्बन्ध (Better Relation between Employer and Labour)

नियोक्ता अपने श्रमिकों के विकास के लिए श्रमिक कल्याण कार्यक्रमों को महत्व देगा तो नियोक्ता के प्रति श्रमिक का विश्वास बढ़ेगा। इससे नियोक्ता तथा श्रमिकों के मध्य अच्छे सम्बन्ध बनाने में मदद मिलती है। इसके अतिरिक्त श्रमिक की सामाजिक प्रतिष्ठा भी बढ़ती है, जो अच्छे सामाजिक रिश्ते कायम करने के लिए आवश्यक है। नियोक्ता और श्रम के बीच एक बेहतर संबंध नियोक्ता और कर्मचारियों के बीच एक सकारात्मक और रचनात्मक कार्य संबंध को संदर्भित करता है, जहां दोनों पक्षों का आपसी विश्वास, सम्मान और समझ होती है। इसमें एक कार्यस्थल संस्कृति शामिल है जो खुले संचार, सहयोग और सहयोग को बढ़ावा देती है, जहां कर्मचारियों को उनके योगदान के लिए महत्व दिया जाता है और मान्यता दी जाती है और नियोक्ता एक सुरक्षित, स्वस्थ और निष्पक्ष कार्यस्थल प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध होते हैं।

किसी भी संगठन की सफलता के लिए नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच बेहतर संबंध आवश्यक है। यह कर्मचारियों की व्यस्तता, नौकरी से संतुष्टि और उत्पादकता में सुधार करने में मदद करता है, जिससे अंततः व्यावसायिक प्रदर्शन में सुधार होता है। जब नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच अच्छे संबंध होते हैं, तो यह कर्मचारी टर्नओवर और अनुपस्थिति को कम करने में भी मदद करता है, जिससे भर्ती और प्रशिक्षण से जुड़ी लागतों को बचाया जा सकता है।

नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच बेहतर संबंध बनाने के लिए दोनों पक्षों से निरंतर प्रयास और प्रतिबद्धता की आवश्यकता होती है। नियोक्ताओं को स्पष्ट नीतियां और प्रक्रियाएं स्थापित करनी चाहिए, उचित मुआवजा और लाभ प्रदान करना चाहिए, और एक सुरक्षित और स्वस्थ कार्य वातावरण सुनिश्चित करना चाहिए। कर्मचारियों को भी अपने काम के प्रति प्रतिबद्ध होना चाहिए, अपने सहयोगियों और वरिष्ठों के प्रति सम्मान दिखाना चाहिए और अपने नियोक्ताओं के साथ खुलकर और रचनात्मक रूप से संवाद करना चाहिए। जब दोनों पक्ष एक समान लक्ष्य के लिए एक साथ काम करते हैं, तो वे एक सकारात्मक कार्यस्थल संस्कृति बना सकते हैं जिससे सभी को लाभ होता है।

6. श्रमिकों को शिक्षित करने के लिए (To make Educated Labour)

श्रमिक कल्याण कार्यक्रमों द्वारा श्रमिकों की शिक्षित बनाना तथा उनमें अपने कार्य के प्रति समझ तथा जागरूकता पैदा करना भी एक महत्वपूर्ण कार्य है। प्रायः भारतीय श्रमिक अशिक्षित होते हैं। ज्ञान में इस कमी का लाभ उठाकर भ्रष्ट नेता उन्हें आसानी से भ्रमित कर लेता है तथा अपने गलत जैसे हड़ताल आदि कार्यों के लिए प्रयोग करता है। इसके अतिरिक्त इसी अज्ञानता के चलते नियोक्ता भी अपने जाल में श्रमिक को उलटा लेते हैं तथा उनका शोषण करते हैं। अतः किसी भी श्रमिक कल्याण कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए श्रमिक का शिक्षित होना आवश्यक है। शिक्षा से ही श्रमिक को अपने कर्तव्यों तथा अधिकारों का बोध होता है तथा सही तथा गलत कार्यों में अन्तर कर सकता है। श्रम को शिक्षित करने के लिए कल्याणकारी सेवाएं प्रदान करके, नियोक्ता अपने कर्मचारियों के कौशल और ज्ञान में सुधार कर सकते हैं, जिससे उत्पादकता, नौकरी से संतुष्टि और वफादारी में वृद्धि हो सकती है। शिक्षित और कुशल श्रम संगठनों को हमेशा बदलते नौकरी बाजार में प्रतिस्पर्धी बने रहने में मदद कर सकते हैं।

कल्याण सेवाएं श्रमिकों को शिक्षित करने और उनके कौशल और ज्ञान में सुधार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। यहां कुछ कल्याणकारी सेवाएं दी गई हैं जिनका उपयोग श्रमिकों को शिक्षित करने के लिए किया जा सकता है:

- **प्रशिक्षण कार्यक्रम:** नियोक्ता अपने कर्मचारियों के कौशल और ज्ञान को बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की पेशकश कर सकते हैं। ये कार्यक्रम कई विषयों को कवर कर सकते हैं, जैसे नौकरी-विशिष्ट कौशल, सॉफ्ट कौशल और सुरक्षा प्रशिक्षण।
- **शिक्षा भत्ता:** नियोक्ता अपने कर्मचारियों को शिक्षा भत्ता प्रदान कर सकते हैं, जिसका उपयोग ट्यूशन फीस या प्रशिक्षण पाठ्यक्रमों की लागत को कवर करने के लिए किया जा सकता है। यह कर्मचारियों

को आगे की शिक्षा या प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है, जो उनके करियर की संभावनाओं में सुधार कर सकता है और संगठन के लिए उनका मूल्य बढ़ा सकता है।

- **वर्कशॉप और सेमिनार:** नियोक्ता सुरक्षा, स्वास्थ्य और करियर विकास जैसे प्रासंगिक विषयों पर वर्कशॉप और सेमिनार आयोजित कर सकते हैं। ये आयोजन कर्मचारियों को उद्योग के विशेषज्ञों से सीखने और अपने सहयोगियों के साथ अपने अनुभव साझा करने का अवसर प्रदान कर सकते हैं।
- **ऑन-द-जॉब प्रशिक्षण:** नियोक्ता अपने कर्मचारियों को ऑन-द-जॉब प्रशिक्षण प्रदान कर सकते हैं, जहां वे अनुभवी सहयोगियों के साथ मिलकर काम करके नए कौशल सीख सकते हैं। यह व्यावहारिक कौशल और ज्ञान विकसित करने का एक प्रभावी तरीका हो सकता है।
- **कर्मचारी विकास योजनाएँ:** नियोक्ता अपने कर्मचारियों के लिए कर्मचारी विकास योजनाएँ बना सकते हैं, जो उनके करियर के लक्ष्यों और उन्हें प्राप्त करने के लिए आवश्यक कदमों की रूपरेखा तैयार करती हैं। यह कर्मचारियों को उनके पेशेवर विकास पर ध्यान केंद्रित करने में मदद कर सकता है और उन्हें अपने करियर की प्रगति का स्वामित्व लेने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है।

7. श्रमिक संघों की उन्नति के लिए (For the Progress of Trade Unions)

नियोक्ता द्वारा श्रमिकों को शोषण से बचाने के लिए श्रमिक संघ कई प्रकार के श्रमिक कल्याण कार्यक्रम अपने स्तर से संचालित करते हैं इनमें श्रमिकों को उनके कर्तव्यों तथा कानूनी अधिकारों के बारे में समझाया जाता है, श्रमिक तथा उनके परिवारों के मनोरंजन के लिए मनोरंजन के कार्यक्रम रखे जाते हैं, चिकित्सा एवं शिक्षा सुविधायें प्रदान की जाती हैं। अतः श्रमिक कल्याण कार्यक्रमों द्वारा श्रमिक संघों की उन्नति एवं विकास होता है। श्रमिक संघ कई तरीकों से श्रमिकों के हितों का प्रतिनिधित्व करने में अधिक प्रभावी हो सकते हैं। यहाँ कुछ संभावित तरीके दिए गए हैं:

- **आयोजन:** ट्रेड यूनियन उन श्रमिकों को संगठित करने पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं जो वर्तमान में संघबद्ध नहीं हैं, खासकर उन क्षेत्रों में जहां श्रम सुरक्षा और मजदूरी कम है। यह संघ की सदस्यता और सौदेबाजी की शक्ति को बढ़ाने में मदद कर सकता है।
- **सहयोग:** श्रमिकों के अधिकारों और सामाजिक न्याय के लिए एक व्यापक आंदोलन बनाने के लिए ट्रेड यूनियन अन्य यूनियनों, नागरिक समाज संगठनों और सामुदायिक समूहों के साथ मिलकर काम कर सकते हैं। यह उनके संदेश को बढ़ाने और उनके प्रभाव को बढ़ाने में मदद कर सकता है।
- **शिक्षा और प्रशिक्षण:** ट्रेड यूनियन अपने सदस्यों को श्रम कानूनों, कार्यस्थल सुरक्षा और अन्य प्रासंगिक मुद्दों पर शिक्षित और प्रशिक्षित करने में निवेश कर सकते हैं। यह कर्मचारियों को अपने नियोक्ताओं के साथ बेहतर वेतन, लाभ और काम करने की स्थिति के बारे में बातचीत करने के लिए सशक्त बनाने में मदद कर सकता है।

- **नवोन्मेष:** ट्रेड यूनियन सामूहिक सौदेबाजी के लिए नए दृष्टिकोण तलाश सकते हैं, जैसे सदस्यों को जुटाने और बातचीत में भागीदारी बढ़ाने के लिए डिजिटल उपकरणों का उपयोग करना। वे संधीकरण के नए मॉडल के साथ भी प्रयोग कर सकते हैं, जैसे क्षेत्रीय सौदेबाजी या सामुदायिक संघवाद।
- **राजनीतिक जुड़ाव:** ट्रेड यूनियन राजनीतिक वकालत और पैरवी में संलग्न हो सकते हैं ताकि नीतियों और नियमों को आगे बढ़ाया जा सके जो श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करते हैं और काम करने की स्थिति में सुधार करते हैं। इसमें उन राजनीतिक उम्मीदवारों का समर्थन करना शामिल हो सकता है जो श्रमिकों के अधिकारों के लिए प्रतिबद्ध हैं और अन्य प्रगतिशील संगठनों के साथ गठजोड़ कर रहे हैं।

कुल मिलाकर, श्रमिकों के हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए एक सक्रिय और राजनीतिक दृष्टिकोण अपनाकर ट्रेड यूनियन प्रगति कर सकते हैं। इसमें सदस्यता का एक मजबूत आधार बनाना, अन्य संगठनों के साथ सहयोग करना, शिक्षा और प्रशिक्षण में निवेश करना, सामूहिक सौदेबाजी के लिए नए दृष्टिकोणों का नवाचार करना और प्रणालीगत परिवर्तन को आगे बढ़ाने के लिए राजनीतिक वकालत में शामिल होना शामिल है।

8. श्रमिकों के मानसिक एवं नैतिक उत्थान के लिए (For Moral and Mental Progress of Labour)

श्रमिक कल्याण कार्यक्रमों द्वारा श्रमिकों का मानसिक एवं नैतिक उत्थान किया जाता है। मानसिक उत्थान के जरिये श्रमिकों को यह अहसास कराया जाता है कि वे किसी उद्योग का सबसे महत्वपूर्ण अंग हैं तथा उनके विकास से ही उद्योग व राष्ट्र का विकास संभव है। इसके अतिरिक्त श्रमिकों को बुरी आदतों एवं दुर्गुणों से बचाने के लिए तथा उनका नैतिक उत्थान करने के लिए श्रमिकों को खेलकूद, मनोरंजन, योगा आदि की उचित व्यवस्था की जानी चाहिए। श्रमिक कल्याण कार्यक्रम इस दिशा में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। यहां प्रावधानों के कुछ उदाहरण दिए गए हैं जिन्हें प्रदान किया जा सकता है:

- **खुला संचार:** नियोक्ता अपने कर्मचारियों के साथ खुले और पारदर्शी संचार चैनल स्थापित कर सकते हैं, जो विश्वास बनाने, मनोबल में सुधार करने और कर्मचारियों के बीच अपनेपन की भावना को बढ़ावा देने में मदद कर सकते हैं। यह नियमित स्टाफ मीटिंग, कर्मचारी प्रतिक्रिया सत्र और सुझाव बॉक्स के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है।
- **सकारात्मक सुदृढीकरण:** नियोक्ता कर्मचारियों को उनके अच्छे काम, उपलब्धियों और संगठन में योगदान के लिए पहचान और पुरस्कृत कर सकते हैं। सकारात्मक सुदृढीकरण प्रशंसा, बोनस, पदोन्नति और अन्य प्रोत्साहनों के रूप में हो सकता है।
- **कैरियर विकास के अवसर:** नियोक्ता कर्मचारियों को कैरियर के विकास और विकास के अवसर प्रदान कर सकते हैं, जो उनकी नौकरी की संतुष्टि और मनोबल को बेहतर बनाने में मदद कर सकता है। इसमें प्रशिक्षण और विकास कार्यक्रमों तक पहुंच, सलाह के अवसर और कैरियर में उन्नति कार्यक्रम शामिल हो सकते हैं।

- **कर्मचारी जुड़ाव कार्यक्रम:** कर्मचारी मनोबल और भलाई को बढ़ावा देने के लिए नियोक्ता कर्मचारी सगाई कार्यक्रम, जैसे टीम निर्माण गतिविधियों, सामाजिक कार्यक्रमों और सामुदायिक सेवा कार्यक्रमों का आयोजन कर सकते हैं।
- **परामर्श सेवाएँ:** नियोक्ता उन कर्मचारियों के लिए परामर्श सेवाएँ प्रदान कर सकते हैं जो मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं या तनाव का सामना कर रहे हैं। इसमें मानसिक स्वास्थ्य पेशेवर या कर्मचारी सहायता कार्यक्रम तक पहुंच शामिल हो सकती है।
- **स्वस्थ कार्यस्थल का वातावरण:** नियोक्ता नियमित व्यायाम और स्वस्थ भोजन जैसी स्वस्थ आदतों को बढ़ावा देकर एक स्वस्थ कार्यस्थल वातावरण बना सकते हैं। वे शारीरिक और मानसिक तनाव को कम करने के लिए एर्गोनोमिक वर्कस्टेशन और पर्याप्त रोशनी भी प्रदान कर सकते हैं।
- **ब्रेक और टाइम ऑफ:** नियोक्ता कर्मचारियों को रिचार्ज करने और बर्नआउट को रोकने में मदद करने के लिए नियमित ब्रेक और टाइम ऑफ प्रदान कर सकते हैं। इसमें छुट्टी का समय, बीमारी की छुट्टी और व्यक्तिगत दिन शामिल हो सकते हैं।

9. समाज को लाभ (Advantage to society)

श्रमिकों को आर्थिक लाभ प्रदान करने के अलावा, श्रम कल्याण के उपाय श्रमिकों को विभिन्न सुविधाओं का विस्तार चिकित्सा लाभों के कारण, श्रमिक बेहतर स्वास्थ्य का आनंद लेते हैं और श्रमिकों के बीच शिशु मृत्यु दर में गिरावट आती है। कार्यकर्ता खुशी महसूस करते हैं और समग्र रूप से समाज उन लोगों से लाभान्वित होता है जिनके जीवन स्तर बेहतर होते हैं और सामान्य रूप से देश और विशेष रूप से समाज के सामान्य कल्याण में योगदान करने के लिए अधिक क्रय शक्ति से लैस होते हैं। श्रम कल्याण का सामाजिक उद्देश्य यह सुनिश्चित करके कि श्रमिकों के साथ उचित व्यवहार किया जाता है और बुनियादी सामाजिक और आर्थिक अधिकारों तक उनकी पहुंच है, सामाजिक न्याय, समानता और आर्थिक विकास को बढ़ावा देना है। श्रम कल्याण के कुछ विशिष्ट सामाजिक उद्देश्यों में शामिल हैं:

- **जीवन स्तर में सुधार:** श्रम कल्याण का उद्देश्य भोजन, आश्रय, स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा जैसी बुनियादी सुविधाओं तक पहुंच सुनिश्चित करके श्रमिकों और उनके परिवारों के जीवन स्तर में सुधार करना है। यह गरीबी को कम करने और समग्र कल्याण में सुधार करने में मदद कर सकता है।
- **सामाजिक न्याय को बढ़ावा देना:** श्रम कल्याण सामाजिक असमानताओं को दूर करना चाहता है और यह सुनिश्चित करके सामाजिक न्याय को बढ़ावा देता है कि श्रमिकों के साथ उचित व्यवहार किया जाता है और बुनियादी सामाजिक और आर्थिक अधिकारों तक उनकी पहुंच है। यह भेदभाव को कम करने और समानता को बढ़ावा देने में मदद कर सकता है।
- **आर्थिक विकास को बढ़ाना:** श्रम कल्याण उत्पादकता में सुधार, अनुपस्थिति और टर्नओवर को कम करके और अधिक स्थिर और प्रेरित कार्यबल बनाकर आर्थिक विकास में योगदान कर सकता है। इससे आर्थिक विकास और समृद्धि में वृद्धि हो सकती है।

- **श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा:** श्रम कल्याण का उद्देश्य श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा करना है, जैसे कि उचित मजदूरी का अधिकार, सुरक्षित काम करने की स्थिति और यूनियन बनाने और इसमें शामिल होने का अधिकार। यह शोषण को रोकने में मदद कर सकता है और यह सुनिश्चित कर सकता है कि श्रमिक बेहतर मजदूरी और काम करने की स्थिति के लिए बातचीत करने में सक्षम हैं।
- **सामाजिक एकता को बढ़ावा देना:** श्रम कल्याण समुदाय की भावना को बढ़ावा देकर और श्रमिकों के बीच साझा जिम्मेदारी को बढ़ावा देकर सामाजिक एकता को बढ़ावा दे सकता है। यह मजबूत समुदायों के निर्माण और सामाजिक स्थिरता को बढ़ावा देने में मदद कर सकता है।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण का सामाजिक उद्देश्य यह सुनिश्चित करके एक अधिक न्यायपूर्ण और न्यायसंगत समाज बनाना है कि श्रमिकों के साथ उचित व्यवहार किया जाए और बुनियादी सामाजिक और आर्थिक अधिकारों तक उनकी पहुंच हो। सामाजिक न्याय, समानता और आर्थिक विकास को बढ़ावा देकर श्रम कल्याण अधिक समृद्ध और सामंजस्यपूर्ण समाज में योगदान कर सकता है।

10. औद्योगिक क्रांति के लिए (For Industrial Revolution)

उद्योग को विकसित करने के लिए तथा निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए श्रमिकों एवं नियोक्ता/पूँजीपति के मध्य अच्छा सामन्जस्य होना आवश्यक है। श्रमिक कल्याण कार्यक्रम द्वारा नियोक्ता/पूँजीपति तथा श्रमिक के मध्य निकटता/सामन्जस्य की भावना उत्पन्न की जा सकती है जो एक सफल औद्योगिक क्रांति के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। श्रम कल्याण औद्योगिक क्रांति में कई तरह से योगदान दे सकता है:

- **कर्मचारियों को प्रेरित करना:** श्रमिकों को कल्याणकारी लाभ प्रदान करने से उन्हें प्रेरित करने और उनकी नौकरी की संतुष्टि में सुधार करने में मदद मिल सकती है। इससे उत्पादकता में वृद्धि, कार्य की गुणवत्ता में सुधार और अनुपस्थिति और टर्नओवर में कमी आ सकती है।
- **श्रम विवादों को कम करना:** कल्याण लाभों के माध्यम से श्रमिकों की जरूरतों और चिंताओं को दूर करके, नियोक्ता श्रम विवादों, हड़तालों और औद्योगिक अशांति के अन्य रूपों की संभावना को कम कर सकते हैं। यह अधिक स्थिर और उत्पादक कार्य वातावरण बनाने में मदद कर सकता है।
- **काम करने की स्थिति में सुधार:** श्रम कल्याण उपायों से काम करने की स्थिति में सुधार हो सकता है, जैसे कि स्वच्छ और सुरक्षित कामकाजी वातावरण प्रदान करना, आरामदायक और अच्छी तरह से सुसज्जित विश्राम क्षेत्र, और उचित प्रकाश व्यवस्था और वेंटिलेशन। इससे एक स्वस्थ और अधिक उत्पादक कार्यबल बन सकता है।
- **कौशल विकास को बढ़ाना:** श्रम कल्याण उपायों से श्रमिकों के लिए कौशल विकास और प्रशिक्षण के अवसरों को भी बढ़ावा मिल सकता है, जो उनके कार्य कौशल में सुधार कर सकता है और उन्हें श्रम

बाजार में अधिक मूल्यवान बना सकता है। यह औद्योगिक क्षेत्र की समग्र प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाने में मदद कर सकता है।

- **नवोन्मेष को प्रोत्साहन:** नवोन्मेष और प्रक्रिया सुधार में योगदान के लिए श्रमिकों को प्रोत्साहन प्रदान करके श्रम कल्याण औद्योगिक क्षेत्र में नवोन्मेष और रचनात्मकता को प्रोत्साहित करने में मदद कर सकता है। इससे नई तकनीकों, उत्पादों और सेवाओं का विकास हो सकता है जो आर्थिक विकास और समृद्धि को बढ़ा सकते हैं।

कुल मिलाकर, श्रम कल्याण अधिक उत्पादक, स्थिर और नवीन कार्यबल बनाकर औद्योगिक क्रांति में योगदान दे सकता है। श्रमिकों की जरूरतों और चिंताओं को दूर करके, सुरक्षित और स्वस्थ काम करने की स्थिति प्रदान करके, और कौशल विकास और नवाचार को बढ़ावा देकर, श्रम कल्याण आर्थिक विकास और समृद्धि को चलाने में मदद कर सकता है।

8.3 श्रम कल्याण के सिद्धांत

सिद्धांत मौलिक विश्वास या मूल्य हैं जो व्यवहार, निर्णयों और कार्यों को निर्देशित और आकार देते हैं। श्रम कल्याण के संदर्भ में, सिद्धांत अंतर्निहित मूल्यों और विश्वासों को संदर्भित करते हैं जो श्रमिकों की भलाई को बढ़ावा देने में नियोक्ताओं, सरकारों और अन्य हितधारकों का मार्गदर्शन करते हैं।

श्रम कल्याण के कुछ प्रमुख सिद्धांतों में शामिल हैं:

1. मजदूरी की पर्याप्तता का सिद्धांत (Principle of adequacy of wages)

मजदूरी की पर्याप्तता का सिद्धांत श्रम कल्याण का एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है जो श्रमिकों को उनके काम के लिए उचित और उचित वेतन प्राप्त करने की आवश्यकता पर बल देता है। श्रमिकों के लिए एक सभ्य जीवन जीने, उनकी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने और उनके परिवारों को प्रदान करने के लिए पर्याप्त मजदूरी आवश्यक है। मजदूरी की पर्याप्तता का सिद्धांत निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित है:

- **निष्पक्षता:** श्रमिकों को उनके काम, कौशल और अनुभव के मूल्य के अनुरूप वेतन मिलना चाहिए। मजदूरी वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर आधारित होनी चाहिए, जैसे उत्पादकता, प्रदर्शन और बाजार की स्थिति, और लिंग, जाति या जाति जैसे कारकों से प्रभावित नहीं होनी चाहिए।
- **निर्वाह मजदूरी:** श्रमिकों को एक ऐसी मजदूरी मिलनी चाहिए जो उनके बच्चों के लिए भोजन, आश्रय, कपड़े, स्वास्थ्य देखभाल और शिक्षा सहित उनकी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त हो। एक जीवित मजदूरी को रहने की स्थानीय लागत को ध्यान में रखना चाहिए और मुद्रास्फीति और अन्य आर्थिक परिवर्तनों के साथ तालमेल रखने के लिए समय-समय पर समायोजित किया जाना चाहिए।
- **न्यूनतम मजदूरी:** सरकारों को एक न्यूनतम मजदूरी स्थापित करनी चाहिए जो सभी श्रमिकों के लिए बुनियादी स्तर की सुरक्षा प्रदान करे। श्रमिकों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए न्यूनतम

मजदूरी पर्याप्त होनी चाहिए और समय-समय पर समीक्षा की जानी चाहिए और रहने की लागत में बदलाव के आधार पर समायोजित की जानी चाहिए।

- **गैर-भेदभाव:** वेतन का निर्धारण करते समय नियोक्ताओं को लिंग, जाति, जाति, धर्म या अन्य कारकों के आधार पर श्रमिकों के साथ भेदभाव नहीं करना चाहिए। समान मूल्य के कार्य के लिए सभी श्रमिकों को समान रूप से भुगतान किया जाना चाहिए।

मजदूरी की पर्याप्तता का सिद्धांत यह सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि श्रमिक एक गरिमापूर्ण जीवन जी सकें और अपने परिवारों का भरण-पोषण कर सकें। श्रमिकों को उचित और पर्याप्त वेतन देकर, नियोक्ता कर्मचारियों के मनोबल में सुधार कर सकते हैं, टर्नओवर कम कर सकते हैं और उत्पादकता बढ़ा सकते हैं। सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने और आय असमानता को कम करने के लिए मजदूरी की पर्याप्तता का सिद्धांत भी महत्वपूर्ण है।

2. उद्योग के सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत (Principle of social responsibility of Industry)

सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत श्रम कल्याण का एक प्रमुख सिद्धांत है जो नियोक्ताओं की जिम्मेदारी पर जोर देता है कि वे अपने संकीर्ण आर्थिक हितों से परे, समग्र रूप से समाज के कल्याण में योगदान दें। यह सिद्धांत मानता है कि समाज में व्यवसायों की व्यापक भूमिका होती है, केवल मुनाफे को अधिकतम करने से परे, और यह कि उनके समुदायों के सामाजिक और आर्थिक विकास में योगदान करने की जिम्मेदारी है। सामाजिक जिम्मेदारी का सिद्धांत निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित है:

- **सामुदायिक जुड़ाव:** नियोक्ताओं को उन समुदायों के साथ जुड़ना चाहिए जिनमें वे काम करते हैं और उनके सामाजिक और आर्थिक विकास में योगदान करते हैं। इसमें स्थानीय स्कूलों, अस्पतालों और सामुदायिक संगठनों का समर्थन करना, रोजगार के अवसर प्रदान करना और स्थानीय बुनियादी ढांचा परियोजनाओं में योगदान करना शामिल हो सकता है।
- **पर्यावरणीय स्थिरता:** नियोक्ताओं को अपने पर्यावरणीय प्रभाव को कम करना चाहिए और टिकाऊ प्रथाओं को बढ़ावा देना चाहिए, जैसे कचरे को कम करना, संसाधनों का संरक्षण करना और नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करना।
- **नैतिक व्यवसाय प्रथाएं:** नियोक्ताओं को पारदर्शिता, जवाबदेही और सुशासन के सिद्धांतों का पालन करते हुए अपने व्यवसायों को नैतिक और जिम्मेदार तरीके से संचालित करना चाहिए। इसमें उचित श्रम प्रथाओं को लागू करना शामिल हो सकता है, जैसे कि उचित मजदूरी का भुगतान करना, सुरक्षित काम करने की स्थिति प्रदान करना और सामूहिक रूप से संगठित होने और सौदेबाजी करने के श्रमिकों के अधिकारों का सम्मान करना।
- **हितधारक जुड़ाव:** नियोक्ताओं को उनकी चिंताओं और प्राथमिकताओं को समझने के लिए और यह सुनिश्चित करने के लिए कि उनकी व्यावसायिक प्रथाएं उनके हितों के अनुरूप हैं, श्रमिकों, आपूर्तिकर्ताओं, ग्राहकों और निवेशकों सहित अपने हितधारकों के साथ जुड़ना चाहिए।

- **कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व:** नियोक्ताओं को ऐसी नीतियों और प्रथाओं को विकसित और कार्यान्वित करना चाहिए जो सामाजिक उत्तरदायित्व को बढ़ावा दें, जैसे कि स्थानीय दान का समर्थन करना, विविधता और समावेश को बढ़ावा देना, और सामाजिक और पर्यावरणीय कारणों में योगदान देना।

सतत और समावेशी आर्थिक विकास को बढ़ावा देने, गरीबी और असमानता को कम करने और सामाजिक एकता और स्थिरता को बढ़ावा देने के लिए सामाजिक उत्तरदायित्व का सिद्धांत महत्वपूर्ण है। समाज में अपनी भूमिका के बारे में व्यापक दृष्टिकोण अपनाकर और सामाजिक उत्तरदायित्वों को अपनाकर, नियोक्ता अपने हितधारकों के साथ मजबूत संबंध बना सकते हैं, अपनी प्रतिष्ठा और ब्रांड छवि में सुधार कर सकते हैं, और अपने समुदायों की भलाई में योगदान कर सकते हैं।

3. दक्षता के सिद्धांत (Principle of efficiency)

श्रम कल्याण में दक्षता का सिद्धांत इस विचार को संदर्भित करता है कि कल्याणकारी पहलों को इस तरह से डिजाइन और कार्यान्वित किया जाना चाहिए कि उनके इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त करने में उनकी प्रभावशीलता और दक्षता को अधिकतम किया जा सके। यह सिद्धांत यह सुनिश्चित करने के महत्व पर जोर देता है कि श्रम कल्याण पहल अच्छी तरह से लक्षित, अच्छी तरह से प्रबंधित और अच्छी तरह से वित्त पोषित हैं।

श्रम कल्याण में दक्षता विभिन्न तरीकों से प्राप्त की जा सकती है, जिनमें निम्न शामिल हैं:

- **लक्षित हस्तक्षेप:** श्रमिकों और उनके परिवारों द्वारा सामना की जाने वाली विशिष्ट आवश्यकताओं और चुनौतियों का समाधान करने के लिए कल्याणकारी पहलों को डिजाइन किया जाना चाहिए। इसका मतलब यह है कि पहल को सबसे कमजोर और सीमांत श्रमिकों को लक्षित किया जाना चाहिए, और उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुरूप होना चाहिए।
- **निगरानी और मूल्यांकन:** यह सुनिश्चित करने के लिए कि कल्याणकारी पहल अपने इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त कर रही हैं, उनकी नियमित निगरानी और मूल्यांकन किया जाना चाहिए। यह सफलता के क्षेत्रों और सुधार की आवश्यकता वाले क्षेत्रों की पहचान करने में मदद करता है, और आवश्यकतानुसार समायोजन करने की अनुमति देता है।
- **सहयोग और समन्वय:** कुशल श्रम कल्याण के लिए नियोक्ताओं, श्रमिकों और सरकारी एजेंसियों सहित विभिन्न हितधारकों के बीच सहयोग और समन्वय की आवश्यकता होती है। यह सुनिश्चित करने में मदद करता है कि संसाधनों का प्रभावी ढंग से उपयोग किया जाता है और अतिरिक्त से बचा जाता है।
- **नवाचार और प्रयोग:** श्रम कल्याण पहलों में लगातार सुधार करने के लिए नवाचार और प्रयोग की आवश्यकता है। इसका मतलब है कि नए दृष्टिकोण और विचारों को आजमाया जाना चाहिए, और सफल प्रथाओं को दोहराया जाना चाहिए और उन्हें बढ़ाया जाना चाहिए।

- **लागत-प्रभावशीलता:** अंत में, श्रम कल्याण में दक्षता का सिद्धांत लागत-प्रभावशीलता के महत्व पर बल देता है। इसका मतलब यह है कि पहल को इस तरह से डिजाइन और कार्यान्वित किया जाना चाहिए जो उनकी लागत को कम करते हुए उनके प्रभाव को अधिकतम करे।

अंत में, श्रम कल्याण में दक्षता का सिद्धांत कल्याणकारी पहलों को इस तरह से डिजाइन और कार्यान्वित करने की आवश्यकता पर बल देता है जो उनकी प्रभावशीलता और दक्षता को अधिकतम करता है। इस सिद्धांत को अपनाने से, श्रम कल्याण पहलों को लक्षित, निगरानी और मूल्यांकन किया जा सकता है जिससे यह सुनिश्चित हो सके कि वे लागत प्रभावी तरीके से श्रमिकों और उनके परिवारों की जरूरतों को पूरा कर रहे हैं।

4. पुनः वैयक्तिकरण का सिद्धांत (Principle of re-personalization)

श्रम कल्याण में पुनः वैयक्तिकरण का सिद्धांत श्रमिकों को एक सामूहिक समूह के बजाय अद्वितीय जरूरतों और परिस्थितियों वाले व्यक्तियों के रूप में मानने के महत्व पर जोर देता है। यह सिद्धांत मानता है कि प्रत्येक कार्यकर्ता के पास कौशल, अनुभव और चुनौतियों का अपना सेट होता है, और कल्याणकारी पहल को इस तरह से डिजाइन और कार्यान्वित किया जाना चाहिए जो इन व्यक्तिगत अंतरों को ध्यान में रखे।

पुनः वैयक्तिकरण के सिद्धांत को विभिन्न माध्यमों से प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें शामिल हैं:

- **व्यक्तिगत सहायता:** कल्याण पहलों को श्रमिकों को उनकी विशिष्ट आवश्यकताओं और परिस्थितियों के आधार पर व्यक्तिगत समर्थन प्रदान करने के लिए डिजाइन किया जाना चाहिए। इसका मतलब यह है कि विभिन्न आवश्यकताओं को समायोजित करने के लिए पहल पर्याप्त रूप से लचीली होनी चाहिए, और प्रत्येक कार्यकर्ता के सामने आने वाली अनूठी चुनौतियों के अनुरूप होनी चाहिए।
- **सशक्तिकरण:** पुनः वैयक्तिकरण के लिए श्रमिकों को अपने स्वयं के कल्याण का नियंत्रण लेने के लिए सशक्त बनाने की भी आवश्यकता होती है। इसका मतलब है कि उन्हें अपने स्वयं के स्वास्थ्य और भलाई के बारे में सूचित निर्णय लेने के लिए आवश्यक उपकरण और संसाधन प्रदान करना और कल्याणकारी पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन में उन्हें आवाज देना।
- **समग्र दृष्टिकोण:** पुनः वैयक्तिकरण का सिद्धांत श्रम कल्याण के लिए समग्र दृष्टिकोण अपनाने के महत्व पर जोर देता है। इसका मतलब न केवल श्रमिकों के शारीरिक स्वास्थ्य और सुरक्षा को संबोधित करना है, बल्कि उनकी मानसिक और भावनात्मक भलाई के साथ-साथ उनकी सामाजिक और आर्थिक जरूरतों को भी पूरा करना है।
- **संचार:** श्रम कल्याण में पुनः वैयक्तिकरण प्राप्त करने के लिए प्रभावी संचार भी महत्वपूर्ण है। इसका मतलब है कि कर्मचारियों की जरूरतों और चिंताओं को समझने के लिए नियमित आधार पर उनके साथ जुड़ना, और उन्हें अपने कल्याण के बारे में सूचित निर्णय लेने के लिए जानकारी और संसाधन प्रदान करना।

अंत में, श्रम कल्याण में पुनः वैयक्तिकरण का सिद्धांत श्रमिकों को अद्वितीय जरूरतों और परिस्थितियों वाले व्यक्तियों के रूप में मानने के महत्व को पहचानता है। इस सिद्धांत को अपनाने से, श्रम कल्याण पहलों को इस तरह से डिजाइन और कार्यान्वित किया जा सकता है जो व्यक्तिगत सहायता प्रदान करता है, श्रमिकों को सशक्त बनाता है, कल्याण के लिए एक समग्र दृष्टिकोण लेता है, और श्रमिकों और नियोक्ताओं के बीच प्रभावी संचार को बढ़ावा देता है।

5. कल्याण की समग्रता का सिद्धांत (Principle of totality of welfare)

श्रम कल्याण में कल्याण की समग्रता का सिद्धांत इस विचार को संदर्भित करता है कि कल्याणकारी पहलों को डिजाइन और कार्यान्वित करते समय श्रमिकों की समग्र भलाई को ध्यान में रखा जाना चाहिए। यह सिद्धांत मानता है कि श्रमिक जटिल व्यक्ति होते हैं जिनकी शारीरिक, भावनात्मक और सामाजिक जरूरतें विस्तृत होती हैं, और कल्याणकारी पहल इस तरह से डिजाइन की जानी चाहिए जो इन सभी जरूरतों को समग्र रूप से संबोधित करे।

कल्याण की समग्रता का सिद्धांत विभिन्न तरीकों से प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें शामिल हैं:

- **व्यापक दृष्टिकोण:** श्रमिकों की भलाई के सभी पहलुओं को संबोधित करने के लिए कल्याणकारी पहलों को डिजाइन किया जाना चाहिए, जिसमें उनकी शारीरिक, भावनात्मक और सामाजिक आवश्यकताएं शामिल हैं। इसका अर्थ है स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा, आवास और अन्य मूलभूत आवश्यकताओं तक पहुंच प्रदान करना, साथ ही साथ सामाजिक समावेश और भावनात्मक कल्याण को बढ़ावा देना।
- **निवारक उपाय:** कल्याण की समग्रता प्राप्त करने के लिए, कल्याणकारी पहलों को पहले स्थान पर उत्पन्न होने वाली समस्याओं को रोकने के लिए डिजाइन किया जाना चाहिए। इसका मतलब कार्यस्थल सुरक्षा, नौकरी की सुरक्षा और कार्य-जीवन संतुलन जैसे मुद्दों को संबोधित करना है, साथ ही उन श्रमिकों के लिए सहायता प्रदान करना है जो तनाव, बर्नआउट या कार्यस्थल भेदभाव जैसी समस्याओं का सामना करने के जोखिम में हैं।
- **दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य:** कल्याण की समग्रता का सिद्धांत कल्याणकारी पहलों को डिजाइन करते समय दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य लेने के महत्व पर बल देता है। इसका मतलब है कि श्रमिकों की जरूरतों के बारे में सोचना न केवल अल्पावधि में, बल्कि मध्यम और दीर्घावधि में भी। उदाहरण के लिए, इसमें शिक्षा और प्रशिक्षण कार्यक्रमों में निवेश करना शामिल हो सकता है जो श्रमिकों को नए कौशल विकसित करने और उनके करियर को आगे बढ़ाने में मदद करते हैं।
- **सहयोगात्मक दृष्टिकोण:** कल्याण की समग्रता प्राप्त करने के लिए, श्रम कल्याण के लिए एक सहयोगी दृष्टिकोण अपनाना महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ है श्रमिकों और उनके प्रतिनिधियों को कल्याणकारी पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन में शामिल करना, साथ ही साथ सरकारी एजेंसियों और सामुदायिक संगठनों जैसे अन्य हितधारकों के साथ सहयोग करना।

अंत में, कल्याण की समग्रता का सिद्धांत श्रम कल्याण के लिए समग्र दृष्टिकोण अपनाने के महत्व पर जोर देता है। इस सिद्धांत को अपनाने से, कल्याण पहलों को इस तरह से डिजाइन और कार्यान्वित किया जा सकता है जो श्रमिकों की शारीरिक, भावनात्मक और सामाजिक आवश्यकताओं को संबोधित करता है, समस्याओं के उत्पन्न होने से पहले निवारक उपायों को बढ़ावा देता है, कार्यकर्ता कल्याण पर दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य लेता है, और इसमें शामिल होता है कल्याण के लिए एक सहयोगी दृष्टिकोण।

6. समन्वय और एकीकरण का सिद्धांत (Principle of co-ordination and integration)

श्रम कल्याण में समन्वय और एकीकरण का सिद्धांत इस विचार को संदर्भित करता है कि विभिन्न कल्याण पहलों को इस तरह से डिजाइन और कार्यान्वित किया जाना चाहिए जो पारस्परिक रूप से सुदृढ़ और पूरक हों। यह सिद्धांत मानता है कि श्रमिकों के कल्याण की जरूरतें जटिल और बहुआयामी हैं, और प्रभावी कल्याणकारी पहलों के लिए एक समन्वित और एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है।

समन्वय और एकीकरण के सिद्धांत को विभिन्न माध्यमों से प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें शामिल हैं:

- **अंतःविषय दृष्टिकोण:** कल्याणकारी पहलों को इस तरह से डिजाइन और कार्यान्वित किया जाना चाहिए जिसमें स्वास्थ्य देखभाल, सामाजिक कार्य और शिक्षा जैसे विभिन्न विषयों से इनपुट और विशेषज्ञता शामिल हो। इसका अर्थ है श्रमिकों के कल्याण के लिए एक व्यापक और एकीकृत दृष्टिकोण सुनिश्चित करने के लिए सिलोस को तोड़ना और विशेषज्ञता के विभिन्न क्षेत्रों के बीच सहयोग को बढ़ावा देना।
- **बहु-स्तरीय दृष्टिकोण:** प्रभावी कल्याण पहलों के लिए बहु-स्तरीय दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जो व्यक्तिगत, संगठनात्मक और सामाजिक स्तरों पर मुद्दों को संबोधित करता है। इसका मतलब उन पहलों को बढ़ावा देना है जो श्रमिकों की जरूरतों को पूरा करती हैं, साथ ही साथ जो संगठनों और समाज की जरूरतों को पूरा करती हैं।
- **रणनीतिक योजना:** समन्वय और एकीकरण प्राप्त करने के लिए, कल्याणकारी पहलों को रणनीतिक योजना के माध्यम से विकसित किया जाना चाहिए जो कार्यकर्ता कल्याण आवश्यकताओं के समग्र दृष्टिकोण को अपनाती है। इसका अर्थ है श्रमिक कल्याण के लिए एक स्पष्ट दृष्टि विकसित करना, विशिष्ट लक्ष्यों और उद्देश्यों को निर्धारित करना और इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एक व्यापक योजना विकसित करना।
- **निगरानी और मूल्यांकन:** यह सुनिश्चित करने के लिए कि कल्याणकारी पहल समन्वित और एकीकृत हैं, नियमित रूप से उनकी प्रभावशीलता की निगरानी और मूल्यांकन करना महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ है कल्याणकारी पहलों के प्रभाव पर डेटा एकत्र करना, अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में उनकी प्रभावशीलता का आकलन करना और भविष्य की पहलों में परिवर्तन और सुधार करने के लिए इस जानकारी का उपयोग करना।

अंत में, समन्वय और एकीकरण का सिद्धांत कल्याणकारी पहलों को डिजाइन और कार्यान्वित करने के महत्व पर जोर देता है जो पारस्परिक रूप से मजबूत और पूरक है। इस सिद्धांत को अपनाने से, कल्याणकारी पहलों को अंतःविषय दृष्टिकोण के माध्यम से डिजाइन और कार्यान्वित किया जा सकता है, कई स्तरों पर मुद्दों को संबोधित करते हुए, एक व्यापक और सामरिक योजना विकसित कर सकते हैं, और नियमित रूप से निगरानी और प्रभावशीलता का मूल्यांकन कर सकते हैं।

7. जवाबदेही का सिद्धांत (Principle of accountability)

श्रम कल्याण में जवाबदेही का सिद्धांत इस विचार को संदर्भित करता है कि श्रम कल्याण पहलों में शामिल संगठनों और हितधारकों को यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार होना चाहिए कि ये पहल अपने इच्छित लक्ष्यों को प्राप्त करने में प्रभावी और कुशल हैं। यह सिद्धांत श्रम कल्याण पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन में पारदर्शिता और जिम्मेदारी के महत्व को पहचानता है।

उत्तरदायित्व के सिद्धांत को विभिन्न माध्यमों से प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें शामिल हैं:

- **स्पष्ट लक्ष्य और उद्देश्य:** कल्याणकारी पहलों को स्पष्ट लक्ष्यों और उद्देश्यों के साथ डिजाइन किया जाना चाहिए जो मापने योग्य और प्राप्त करने योग्य हों। इसका अर्थ है सुधार के लिए विशिष्ट लक्ष्यों की स्थापना करना और इन लक्ष्यों की दिशा में नियमित रूप से प्रगति का मूल्यांकन करना।
- **प्रदर्शन मापन:** जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए, श्रम कल्याण पहलों के प्रदर्शन को मापना महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ है पहलों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करने के लिए वस्तुनिष्ठ मानदंडों का उपयोग करना और हितधारकों को प्रदर्शन पर नियमित रूप से रिपोर्ट करना।
- **हितधारक जुड़ाव:** जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए, हितधारकों को श्रम कल्याण पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन में सक्रिय रूप से शामिल होना चाहिए। इसका अर्थ है निर्णय लेने की प्रक्रिया में श्रमिकों और उनके प्रतिनिधियों को शामिल करना, साथ ही साथ सरकारी एजेंसियों और सामुदायिक संगठनों जैसे अन्य हितधारकों के साथ जुड़ना।
- **निरंतर सुधार:** जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए, श्रम कल्याण पहलों में निरंतर सुधार होना चाहिए। इसका मतलब नियमित रूप से पहल की प्रभावशीलता का आकलन करना और जहां आवश्यक हो वहां परिवर्तन और सुधार करना है।
- **पारदर्शिता:** जवाबदेही सुनिश्चित करने के लिए श्रम कल्याण पहल पारदर्शी होनी चाहिए। इसका मतलब है हितधारकों के लिए उपलब्ध पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन के बारे में जानकारी देना, साथ ही साथ किसी भी चुनौती या असफलताओं के बारे में खुला और ईमानदार होना।

अंत में, उत्तरदायित्व का सिद्धांत श्रम कल्याण पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन में जिम्मेदारी और पारदर्शिता के महत्व पर बल देता है। इस सिद्धांत को अपनाने से, कल्याणकारी पहलों को स्पष्ट लक्ष्यों और उद्देश्यों के साथ डिजाइन किया जा सकता है, प्रदर्शन के लिए मापा जाता है, सक्रिय रूप से

हितधारकों को शामिल किया जाता है, निरंतर सुधार के अधीन और सभी हितधारकों के लिए पारदर्शी होता है।

8. समयबद्धता का सिद्धांत (Principle of timeliness)

श्रम कल्याण में समयबद्धता का सिद्धांत इस विचार को संदर्भित करता है कि श्रमिकों की जरूरतों को पूरा करने के लिए कल्याणकारी पहलों को समयबद्ध तरीके से डिजाइन और कार्यान्वित किया जाना चाहिए। यह सिद्धांत श्रम कल्याण पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन में जवाबदेही और चपलता के महत्व को पहचानता है।

समयबद्धता के सिद्धांत को विभिन्न माध्यमों से प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें शामिल हैं:

- **तीव्र प्रतिक्रिया:** समयबद्धता सुनिश्चित करने के लिए, कल्याणकारी पहलों को श्रमिकों की जरूरतों को शीघ्रता से पूरा करने के लिए डिजाइन किया जाना चाहिए। इसका मतलब है कि जैसे ही वे उत्पन्न होते हैं, मुद्दों को हल करने के लिए प्रोटोकॉल और प्रक्रियाएं स्थापित करना।
- **लचीलापन:** समयबद्धता सुनिश्चित करने के लिए, कल्याणकारी पहल लचीली और बदलती परिस्थितियों के अनुकूल होनी चाहिए। इसका अर्थ है बदलती जरूरतों या नई चुनौतियों के जवाब में पहल को समायोजित करने में सक्षम होना।
- **सक्रिय दृष्टिकोण:** समयबद्धता सुनिश्चित करने के लिए, कल्याणकारी पहलों को उभरती जरूरतों की पहचान करने और उन्हें संबोधित करने के लिए एक सक्रिय दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। इसका मतलब यह है कि प्रवृत्तियों और संभावित मुद्दों के बारे में जागरूक होना इससे पहले कि वे बड़ी समस्या बन जाएं।
- **सहयोग:** समयबद्धता सुनिश्चित करने के लिए, कल्याणकारी पहलों में विभिन्न हितधारकों, जैसे कि सरकारी एजेंसियों, नियोक्ताओं और श्रमिक प्रतिनिधियों के बीच सहयोग शामिल होना चाहिए। इसका मतलब यह है कि मुद्दों की जल्द से जल्द और कुशलता से पहचान करने और उनका समाधान करने के लिए मिलकर काम करना।
- **सतत निगरानी:** समयबद्धता सुनिश्चित करने के लिए, कल्याणकारी पहल निरंतर निगरानी और मूल्यांकन के अधीन होनी चाहिए। इसका मतलब नियमित रूप से पहल की प्रभावशीलता का आकलन करना और जहां आवश्यक हो वहां परिवर्तन और सुधार करना है।

अंत में, समयबद्धता का सिद्धांत श्रम कल्याण पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन में जवाबदेही और चपलता के महत्व पर जोर देता है। इस सिद्धांत को अपनाने से, श्रमिकों की जरूरतों को जल्दी से पूरा करने के लिए कल्याणकारी पहल तैयार की जा सकती हैं, लचीली और बदलती परिस्थितियों के अनुकूल हो सकती हैं, उभरती जरूरतों की पहचान करने के लिए एक सक्रिय दृष्टिकोण अपना सकती हैं, हितधारकों के बीच सहयोग शामिल कर सकती हैं, और निरंतर निगरानी और मूल्यांकन के अधीन हो सकती हैं।

9. स्व-सहायता का सिद्धांत (Principle of self help)

श्रम कल्याण में स्व-सहायता का सिद्धांत इस विचार को संदर्भित करता है कि श्रमिकों को स्वयं अपने कल्याण में सुधार करने में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए। यह सिद्धांत श्रमिकों को सशक्त बनाने और उनके अपने कल्याण लक्ष्यों को प्राप्त करने में उनकी स्वायत्तता को बढ़ावा देने के महत्व को पहचानता है।

स्व-सहायता के सिद्धांत को विभिन्न माध्यमों से प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें शामिल हैं:

- **शिक्षा और प्रशिक्षण:** स्वयं-सहायता को बढ़ावा देने के लिए, श्रमिकों को अपने स्वयं के कल्याण में सुधार करने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान विकसित करने के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए।
- **भागीदारी और सहभागिता:** स्वयं सहायता को बढ़ावा देने के लिए, श्रमिकों को श्रम कल्याण पहलों के डिजाइन और कार्यान्वयन में भाग लेने और शामिल होने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इसका अर्थ है निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में आवाज देना जो उनके स्वयं के कल्याण को प्रभावित करते हैं।
- **सामूहिक कार्रवाई:** स्व-सहायता को बढ़ावा देने के लिए, श्रमिकों को एक साथ काम करने और उनकी कल्याणकारी जरूरतों को पूरा करने के लिए सामूहिक कार्रवाई करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। इसका मतलब है खुद को संगठित करना और अपने हितों की वकालत करना।
- **जानकारी तक पहुंच:** स्वयं सहायता को बढ़ावा देने के लिए, श्रमिकों को उनके अधिकारों, कल्याणकारी अधिकारों और उनके लिए उपलब्ध संसाधनों के बारे में जानकारी तक पहुंच होनी चाहिए। इसका अर्थ है अपने स्वयं के कल्याण में सुधार के लिए उनके विकल्पों के बारे में सूचित और जागरूक होना।
- **सहायक वातावरण:** स्व-सहायता को बढ़ावा देने के लिए, श्रमिकों को एक सहायक वातावरण प्रदान किया जाना चाहिए जो उन्हें अपने स्वयं के कल्याण में सुधार करने में सक्रिय भूमिका निभाने में सक्षम बनाता है। इसका मतलब विश्वास, सम्मान और आपसी सहयोग का माहौल बनाना है।

अंत में, स्व-सहायता का सिद्धांत श्रमिकों को सशक्त बनाने और अपने स्वयं के कल्याणकारी लक्ष्यों को प्राप्त करने में उनकी स्वायत्तता को बढ़ावा देने के महत्व पर जोर देता है। इस सिद्धांत को अपनाने से, श्रमिकों को शिक्षा, प्रशिक्षण, भागीदारी, सामूहिक कार्रवाई, सूचना तक पहुंच, और उनके स्वयं के कल्याण में सुधार करने के लिए आवश्यक सहायक वातावरण प्रदान करने के लिए कल्याणकारी पहल की रूपरेखा तैयार की जा सकती है।

10. सामूहिक सौदेबाजी के सिद्धांत (principle of collective bargaining)

श्रमिकों को उचित वेतन और काम करने की स्थिति पर बातचीत करने के लिए नियोक्ताओं के साथ सामूहिक रूप से सौदेबाजी करने का अधिकार होना चाहिए। सामूहिक सौदेबाजी यह सुनिश्चित करने में मदद कर सकती है कि श्रमिकों को उचित भुगतान किया जाता है और मजदूरी वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर आधारित होती है। श्रम कल्याण में सामूहिक सौदेबाजी का सिद्धांत नियोक्ताओं और श्रमिकों, या उनके प्रतिनिधियों के बीच समझौतों

तक पहुंचने के उद्देश्य से बातचीत की प्रक्रिया को संदर्भित करता है, जो मजदूरी, लाभ और काम करने की स्थिति सहित रोजगार के नियमों और शर्तों को नियंत्रित करता है। यह सिद्धांत श्रम कल्याण में सुधार के लिए नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच सहयोग और सहयोग के महत्व को पहचानता है।

सामूहिक सौदेबाजी के सिद्धांत को विभिन्न माध्यमों से प्राप्त किया जा सकता है, जिनमें शामिल हैं:

- **श्रमिकों के संगठित होने के अधिकार की मान्यता:** सामूहिक सौदेबाजी को सुविधाजनक बनाने के लिए, श्रमिकों को सामूहिक रूप से अपने हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए ट्रेड यूनियनों या अन्य श्रमिक संगठनों को बनाने और उनमें शामिल होने का अधिकार होना चाहिए।
- **सौदेबाजी की शक्ति:** सामूहिक सौदेबाजी की सुविधा के लिए, श्रमिकों को उनके सामूहिक संगठन और प्रतिनिधित्व के माध्यम से पर्याप्त सौदेबाजी की शक्ति दी जानी चाहिए। इसका मतलब यह सुनिश्चित करना है कि श्रमिकों के पास नियोक्ताओं के साथ समान स्तर पर बातचीत करने की क्षमता हो।
- **सद्भावपूर्ण सौदेबाजी:** सामूहिक सौदेबाजी की सुविधा के लिए, नियोक्ताओं और श्रमिकों दोनों को सद्भावना में सौदेबाजी में संलग्न होना चाहिए, जिसका अर्थ है कि दोनों पक्षों को लाभ पहुंचाने वाले समझौते पर पहुंचने के उद्देश्य से उन्हें निष्पक्ष और उचित तरीके से बातचीत करनी चाहिए।
- **विवाद समाधान तंत्र:** सामूहिक सौदेबाजी की सुविधा के लिए, सौदेबाजी की प्रक्रिया के दौरान उत्पन्न होने वाले विवादों को हल करने के लिए तंत्र होना चाहिए। इसका अर्थ है मध्यस्थता, मध्यस्थता, या अन्य प्रकार के विवाद समाधान के लिए प्रक्रियाएँ स्थापित करना।
- **कार्यान्वयन और प्रवर्तन:** सामूहिक सौदेबाजी की सुविधा के लिए, सौदेबाजी के माध्यम से किए गए समझौतों को लागू और लागू किया जाना चाहिए, जिसमें नियोक्ता और कर्मचारी दोनों अपने-अपने दायित्वों को पूरा करते हैं।

अंत में, सामूहिक सौदेबाजी का सिद्धांत श्रम कल्याण में सुधार के लिए नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच सहयोग और सहयोग के महत्व पर जोर देता है। इस सिद्धांत को अपनाने से, श्रमिकों को संगठित करने का अधिकार दिया जा सकता है और सौदेबाजी की पर्याप्त शक्ति दी जा सकती है, नियोक्ता और कर्मचारी दोनों नेकनीयती से सौदेबाजी में संलग्न हो सकते हैं, उत्पन्न होने वाले विवादों को हल करने के लिए तंत्र स्थापित किया जा सकता है, और समझौतों को लागू किया जा सकता है और श्रम कल्याण में सुधार करने में उनकी प्रभावशीलता सुनिश्चित की जा सकती है।

8.4 श्रम कल्याण अधिकारी (Labour Welfare Officer)

औद्योगिक क्रांति से पूर्व उत्पादन को विभिन्न महत्वपूर्ण इकाइयों पर प्रबंधकों का प्रत्यक्ष रूप से संपर्क था लेकिन औद्योगिकीकरण के पश्चात श्रमिकों तथा मिल मालिकों में काफी मतभेद प्रकट हुए तथा उन्हें पारस्परिक दूरी बढ़ती गई। इसका प्रमुख कारण यह था कि दोनों के हित पूर्णतया अलग थे अतः हितों का टकराव होना अवश्यंभावी

था। कार्ल मार्क्स ने इसे वर्ग संघर्ष की संज्ञा दी। उत्पादन की पूंजीवादी व्यवस्था में श्रमिकों तथा नियोक्ता के बीच उत्पन्न होने वाली समस्याओं का हल करने की आवश्यकता अनुभव की गई ताकि दोनों में सद्भाव पूर्ण वातावरण स्थापित किया जा सके। इस कार्य हेतु जिस अधिकारी अथवा व्यक्ति की कल्पना की गई उसे श्रम कल्याण अधिकारी कहा गया।

श्रम पर राष्ट्रीय आयोग ने कहा है कि, "कानून यह सुनिश्चित करने के लिए बनाए गए थे कि प्रबंधन ने एक व्यक्ति को विशेष रूप से अपने कर्मचारियों के कल्याण की देखभाल करने और कल्याणकारी उपायों के संबंध में अपने वैधानिक दायित्वों का निर्वहन करने में मदद करने के लिए नियुक्त किया। कल्याण अधिकारियों को अपनी जिम्मेदारियों को प्रभावी ढंग से निर्वहन करने के लिए प्रशासन का हिस्सा बनना चाहिए। इसलिए, एक कल्याण अधिकारी की नियुक्ति से पहले उसकी पात्रता सुनिश्चित की जानी चाहिए। प्रबंधन की ओर से श्रम विवाद को संभालने के लिए कल्याण अधिकारी को नहीं बुलाया जाना चाहिए।"

श्रम कल्याण समिति ने राज्य सरकारों, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों, निजी नियोक्ता संगठनों, श्रमिक संगठनों और संबंधों के क्षेत्र में प्रतिष्ठित व्यक्तियों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों और कल्याण अधिकारी की भूमिका और स्थिति पर विचार करने के बाद सिफारिश की कि- "प्रबंधन को कानून के उद्देश्य को पूरा करने के लिए कल्याण अधिकारी के रूप में अपने कार्मिक विभाग के मौजूदा अधिकारियों में से एक को नामित करना चाहिए। प्रबंधन को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कार्मिक विभाग के केवल ऐसे अधिकारियों को कल्याणकारी गतिविधियों को देखने के लिए नामित किया गया है जो इन पदों को धारण करने के लिए उचित रूप से योग्य हैं और कल्याण कार्य के लिए योग्यता रखते हैं।

नियुक्त किए जाने वाले कल्याण अधिकारी के पास होना चाहिए-

- (1) एक विश्वविद्यालय की डिग्री;
- (2) किसी मान्यता प्राप्त संस्थान से सामाजिक विज्ञान, सामाजिक कार्य या सामाजिक कल्याण में डिग्री या डिप्लोमा; और
- (3) उस क्षेत्र में जहां कारखाने, खदानें और बागान स्थित हैं, अधिकांश श्रमिकों द्वारा बोली जाने वाली भाषा का पर्याप्त ज्ञान ताकि वह श्रमिकों से अपना व्यवहार तथा संपर्क सुगमता पूर्वक स्थापित कर सके;
- (4) इसके अतिरिक्त श्रम कल्याण अधिकारी की विभिन्न ग्रेड निर्धारित की गई जैसे- प्रथम तथा द्वितीय श्रेणी श्रम कल्याण अधिकारी

भारतीय कारखाना अधिनियम 1948 ने नियोक्ताओं के लिए उन कारखानों में श्रम कल्याण गतिविधियों की देखभाल के लिए कल्याण अधिकारियों की नियुक्ति करना अनिवार्य कर दिया जहां 500 या 500 से अधिक कर्मचारी कार्यरत हैं। इस प्रकार श्रम कल्याण अधिकारी की नियुक्ति वैधानिक आवश्यकता है। वह श्रम संबंधी समस्याओं को हल करने के लिए मानव संसाधन अधिकारियों के साथ काम करता है।

8.4.1 श्रम कल्याण अधिकारी की आवश्यकता तथा महत्व (Need and Importance of Labour Welfare Officer)

उद्योगों तथा कारखानों में श्रम कल्याण अधिकारी के महत्व को अनदेखा नहीं किया जा सकता। वह मधुर औद्योगिक संबंध स्थापित करने की दृष्टि से रीड की हड्डी के समान अपनी भूमिका निभाता है। वस्तुतः श्रम कल्याण अधिकारी के महत्व का निम्न शीर्षकों में अध्ययन किया जा सकता है। इन्हें हम श्रम कल्याण अधिकारी द्वारा संपादित कार्य तथा अधिकारियों की श्रेणी में भी सम्मिलित कर सकते हैं।

(1) औद्योगिक विवादों का समाधान (Conciliation of industrial dispute)

श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका औद्योगिक विवादों के समाधान में महत्वपूर्ण है। श्रम कल्याण अधिकारी श्रमिकों की कल्याणकारी जरूरतों को पूरा करने और उनके अधिकारों की रक्षा सुनिश्चित करके सामंजस्यपूर्ण औद्योगिक संबंधों को बढ़ावा देने के लिए जिम्मेदार है। श्रम कल्याण अधिकारी एक मध्यस्थ के रूप में कार्य करता है। प्रबंधन और श्रमिकों के बीच, संचार की खाई को पाटने में मदद करने और इससे पहले कि वे पूर्ण रूप से विवादों में बहें।

यहाँ कुछ तरीके दिए गए हैं जिनसे एक श्रम कल्याण अधिकारी औद्योगिक विवादों के समाधान में योगदान दे सकता है:

- **संचार को बढ़ावा देना:** एक श्रम कल्याण अधिकारी प्रबंधन और श्रमिकों के बीच प्रभावी संचार स्थापित करने में मदद कर सकता है। दोनों पक्षों के बीच नियमित बैठकों और चर्चाओं को सुगम बनाकर, श्रम कल्याण अधिकारी यह सुनिश्चित करने में मदद कर सकता है कि शिकायतों और चिंताओं को समय पर और प्रभावी तरीके से संबोधित किया जाए।
- **शिकायतों को संबोधित करना:** एक श्रम कल्याण अधिकारी श्रमिकों की शिकायतों को दूर करने और यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार होता है कि उनके अधिकारों की रक्षा की जाती है। श्रम कल्याण अधिकारी पारस्परिक रूप से लाभकारी समाधान खोजने के लिए प्रबंधन के साथ काम करके भुगतान, काम करने की स्थिति और अन्य कल्याणकारी जरूरतों से संबंधित मुद्दों को हल करने में मदद कर सकता है।
- **भरोसा बढ़ाना:** एक श्रम कल्याण अधिकारी प्रबंधन और श्रमिकों के बीच विश्वास बनाने में मदद कर सकता है। कार्यस्थल में पारदर्शिता और निष्पक्षता को बढ़ावा देकर, श्रम कल्याण अधिकारी एक ऐसा वातावरण बनाने में मदद कर सकता है जहाँ कर्मचारी मूल्यवान और सम्मानित महसूस करते हैं।
- **विकासशील नीतियाँ:** एक श्रम कल्याण अधिकारी श्रमिकों के कल्याण को बढ़ावा देने वाली नीतियों और प्रक्रियाओं को विकसित करने के लिए प्रबंधन के साथ काम कर सकता है। यह सुनिश्चित करके कि ये नीतियाँ श्रम कानूनों और विनियमों के अनुरूप हैं, श्रम कल्याण अधिकारी विवादों को उत्पन्न होने से रोकने में मदद कर सकता है।
- **प्रशिक्षण प्रदान करना:** एक श्रम कल्याण अधिकारी श्रमिकों को उनके अधिकारों और उत्तरदायित्वों पर प्रशिक्षण प्रदान कर सकता है। यह सुनिश्चित करके कि श्रमिक अपने अधिकारों को समझते हैं, श्रम

कल्याण अधिकारी गलतफहमी या ज्ञान की कमी के कारण होने वाले विवादों को रोकने में मदद कर सकता है।

कुल मिलाकर, सामंजस्यपूर्ण औद्योगिक संबंधों को बढ़ावा देने और विवादों को उत्पन्न होने से रोकने में एक श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका महत्वपूर्ण है। प्रबंधन और श्रमिकों दोनों के साथ मिलकर काम करके, श्रम कल्याण अधिकारी यह सुनिश्चित करने में मदद कर सकता है कि श्रमिकों की कल्याणकारी ज़रूरतें पूरी हों और उनके अधिकारों की रक्षा हो, जिससे औद्योगिक विवादों के समाधान में योगदान हो।

(2) श्रमिकों की कार्य दशा में सुधार लाना (Improvement in the working condition of the workers)

एक श्रम कल्याण अधिकारी श्रमिकों की कार्य स्थितियों में सुधार लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस संबंध में एक श्रम कल्याण अधिकारी की कुछ विशिष्ट भूमिकाएँ इस प्रकार हैं:

- **श्रम कानूनों की निगरानी और अनुपालन सुनिश्चित करना:** एलडब्ल्यूओ यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार है कि संगठन सभी लागू श्रम कानूनों का अनुपालन करता है, जिसमें काम करने की स्थिति से संबंधित कानून भी शामिल हैं। इसमें काम के घंटे, सुरक्षा, न्यूनतम मजदूरी और अन्य श्रम अधिकारों से संबंधित कानून शामिल हैं। अनुपालन की निगरानी करके, श्रम कल्याण अधिकारी ऐसे किसी भी क्षेत्र की पहचान कर सकता है जहां संगठन को सुधार करने और उन मुद्दों को हल करने के लिए काम करने की आवश्यकता है।
- **कार्यस्थल का मूल्यांकन करना:** श्रम कल्याण अधिकारी किसी भी खतरे या जोखिम की पहचान करने के लिए कार्यस्थल का नियमित मूल्यांकन कर सकता है जो श्रमिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा को प्रभावित कर सकता है। ये आकलन उन क्षेत्रों की पहचान करने में मदद कर सकते हैं जिनमें सुधार की आवश्यकता है और श्रम कल्याण अधिकारी को इन जोखिमों को कम करने के लिए रणनीति विकसित करने की अनुमति देता है।
- **कार्यस्थल सुरक्षा को बढ़ावा देना:** श्रम कल्याण अधिकारी कार्यस्थल सुरक्षा को बढ़ावा दे सकता है यह सुनिश्चित करके कि सभी सुरक्षा नियमों का पालन किया जा रहा है, सुरक्षा ऑडिट आयोजित कर रहा है, और सुरक्षित कार्य प्रथाओं पर प्रशिक्षण प्रदान कर रहा है। यह कार्यस्थल में दुर्घटनाओं और चोटों को कम करने में मदद कर सकता है, श्रमिकों के लिए काम करने की स्थिति में सुधार कर सकता है।

(3) श्रम कल्याण कार्यों की देखरेख (Supervision of labour welfare activities)

एक श्रम कल्याण अधिकारी कार्यस्थल में कल्याणकारी गतिविधियों की निगरानी के लिए जिम्मेदार होता है। यहाँ कुछ तरीके दिए गए हैं जिनसे एक श्रम कल्याण अधिकारी इस उत्तरदायित्व को पूरा कर सकता है:

- **एक कल्याण योजना विकसित करें:** श्रम कल्याण अधिकारी एक कल्याणकारी योजना विकसित कर सकता है जो श्रमिकों के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए की जाने वाली गतिविधियों की रूपरेखा तैयार करती है। यह योजना श्रमिकों और अन्य हितधारकों के परामर्श से विकसित की जा सकती है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि यह उनकी आवश्यकताओं और अपेक्षाओं को पूरा करता है।
- **कल्याण गतिविधियों को लागू करें:** एलडब्ल्यूओ कल्याणकारी गतिविधियों को लागू कर सकता है जो कल्याण योजना में शामिल हैं। इसमें कैंटीन, क्रेच, चिकित्सा सुविधाएं और अन्य कल्याणकारी उपाय जैसी सुविधाएं स्थापित करना शामिल हो सकता है जो श्रमिकों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने में मदद कर सकते हैं। श्रम कल्याण अधिकारी सांस्कृतिक और खेल आयोजनों, स्वास्थ्य शिविरों और अन्य गतिविधियों का भी आयोजन कर सकता है जो श्रमिकों के शारीरिक और मानसिक कल्याण को बढ़ावा देती हैं।
- **कल्याण गतिविधियों की निगरानी करें:** श्रम कल्याण अधिकारी श्रमिकों से प्रतिक्रिया एकत्र करके और उनकी भलाई पर इन गतिविधियों के प्रभाव का मूल्यांकन करके कल्याणकारी गतिविधियों की प्रभावशीलता की निगरानी कर सकता है। इस प्रतिक्रिया का उपयोग सुधार करने और यह सुनिश्चित करने के लिए किया जा सकता है कि कल्याणकारी गतिविधियाँ श्रमिकों की आवश्यकताओं को पूरा कर रही हैं।
- **अन्य विभागों के साथ समन्वय:** श्रम कल्याण अधिकारी यह सुनिश्चित करने के लिए संगठन में अन्य विभागों के साथ समन्वय कर सकता है कि कल्याणकारी गतिविधियाँ उत्पादन और मानव संसाधन प्रबंधन जैसे अन्य कार्यों के साथ एकीकृत हैं। यह सुनिश्चित करने में मदद कर सकता है कि कल्याणकारी गतिविधियाँ संगठन के समग्र लक्ष्यों और उद्देश्यों के साथ संरेखित हैं।

(4) हड़ताल में तालाबंदी की रोकथाम (Prohibition of strikes and Lockouts)

यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि एक श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका हड़तालों और तालाबन्दियों पर रोक लगाने की नहीं है, बल्कि सामंजस्यपूर्ण औद्योगिक संबंधों को बढ़ावा देने और कार्यस्थल में विवादों को उत्पन्न होने से रोकने की है। हालाँकि, श्रम कल्याण अधिकारी हड़तालों और तालाबंदी को रोकने में भूमिका निभा सकता है:

- **संचार को सुगम बनाना:** श्रम कल्याण अधिकारी प्रबंधन और श्रमिकों के बीच मध्यस्थ के रूप में कार्य कर सकता है, मुद्दों को हल करने के लिए संचार और बातचीत की सुविधा प्रदान करता है, इससे पहले कि वे हड़ताल या तालाबंदी के बिंदु तक पहुँचें। संवाद के लिए एक मंच बनाकर, एलडब्ल्यूओ दोनों पक्षों के बीच की खाई को पाटने और पारस्परिक रूप से स्वीकार्य समाधान खोजने में मदद कर सकता है।
- **कर्मचारी संलग्नता को बढ़ावा देना:** श्रम कल्याण अधिकारी निर्णय लेने की प्रक्रिया में कर्मचारियों की संलग्नता और भागीदारी को बढ़ावा दे सकता है। जब श्रमिकों को लगता है कि उनकी आवाज सुनी

जाती है और उनकी राय को महत्व दिया जाता है, तो उनके काम की परिस्थितियों से संतुष्ट होने की संभावना अधिक होती है और हड़ताल या तालाबंदी का सहारा लेने की संभावना कम होती है।

- **श्रमिकों को शिक्षित करना:** श्रम कल्याण अधिकारी श्रमिकों को उनके अधिकारों और जिम्मेदारियों के साथ-साथ हड़ताल श्रम कल्याण अधिकारों और तालाबंदी के परिणामों के बारे में शिक्षित कर सकता है। जब कर्मचारी इन कार्रवाइयों के कानूनी निहितार्थों से अवगत होते हैं, तो उनके इसमें शामिल होने की संभावना कम हो सकती है।
- **कल्याणकारी उपाय प्रदान करना:** श्रम कल्याण अधिकारी कल्याणकारी उपाय और सुविधाएं प्रदान कर सकता है जो श्रमिकों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करने और हड़तालों और तालाबंदी की संभावना को कम करने में मदद कर सकता है। जब कर्मचारी अपनी कार्य स्थितियों से संतुष्ट होते हैं और महसूस करते हैं कि उनकी जरूरतें पूरी हो रही हैं, तो उनके विघटनकारी कार्यों में शामिल होने की संभावना कम होती है।

कुल मिलाकर, एक श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका सौहार्दपूर्ण औद्योगिक संबंधों को बढ़ावा देना और कार्यस्थल में विवादों को उत्पन्न होने से रोकना है। संचार को बढ़ावा देकर, कर्मचारियों की व्यस्तता को बढ़ावा देकर, श्रमिकों को शिक्षित करके, और कल्याणकारी उपाय प्रदान करके, श्रम कल्याण अधिकारी हड़तालों और तालाबंदी की संभावना को कम करने में मदद कर सकता है।

(5) श्रमिकों में अनुशासन स्थापित करना (Maintenance of discipline among workers)

श्रमिकों के बीच अनुशासन बनाए रखना श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका का एक महत्वपूर्ण पहलू है। यहाँ कुछ तरीके हैं जिनसे एक श्रम कल्याण अधिकारी कामगारों के बीच अनुशासन बनाए रखने में मदद कर सकता है:

- **नीतियों और प्रक्रियाओं का कार्यान्वयन:** श्रम कल्याण अधिकारी कार्यस्थल में अनुशासन को बढ़ावा देने वाली नीतियों और प्रक्रियाओं को लागू करने के लिए प्रबंधन के साथ काम कर सकता है। इसमें आचार संहिता स्थापित करना, व्यवहार के लिए अपेक्षाएँ निर्धारित करना और उल्लंघनों के परिणामों की रूपरेखा तैयार करना शामिल हो सकता है।
- **संचार और शिक्षा:** श्रम कल्याण अधिकारी अनुशासन बनाए रखने के लिए कर्मचारियों के साथ संवाद कर सकता है और उन्हें नीतियों और प्रक्रियाओं के बारे में शिक्षित कर सकता है। इससे यह सुनिश्चित करने में मदद मिल सकती है कि कर्मचारी इस बात से अवगत हैं कि उनसे क्या अपेक्षा की जाती है और इन अपेक्षाओं का अनुपालन न करने के क्या परिणाम होते हैं।
- **प्रवर्तन:** श्रम कल्याण अधिकारी अनुशासन से संबंधित नीतियों और प्रक्रियाओं को लागू करने के लिए प्रबंधन के साथ काम कर सकता है। इसमें उन कर्मचारियों के लिए अनुशासनात्मक कार्रवाई शामिल हो सकती है जो इन नीतियों का उल्लंघन करते हैं, जैसे की मौखिक या लिखित चेतावनी, निलंबन, या बर्खास्तगी।

- **परामर्श और समर्थन:** श्रम कल्याण अधिकारी अनुशासनात्मक मुद्दों से जूझ रहे कर्मचारियों को परामर्श और सहायता प्रदान कर सकता है। इसमें उनके व्यवहार के मूल कारणों को संबोधित करना, प्रशिक्षण या सलाह प्रदान करना, या उन्हें बाहरी सहायता सेवाओं के लिए संदर्भित करना शामिल हो सकता है।
- **मान्यता और पुरस्कार:** श्रम कल्याण अधिकारी अनुशासन से संबंधित नीतियों और प्रक्रियाओं के अच्छे व्यवहार और पालन का प्रदर्शन करने वाले कर्मचारियों को पहचान और पुरस्कृत कर सकता है। यह कार्यस्थल में अनुशासन की सकारात्मक संस्कृति बनाने में मदद कर सकता है।

कुल मिलाकर, एक श्रम कल्याण अधिकारी की भूमिका नीतियों और प्रक्रियाओं को लागू करने, श्रमिकों से संवाद करने और शिक्षित करने, इन नीतियों को लागू करने, परामर्श और सहायता प्रदान करने और अच्छे व्यवहार को पहचानने और पुरस्कृत करने के द्वारा श्रमिकों के बीच अनुशासन को बढ़ावा देना है।

8.4.2 श्रम कल्याण अधिकारी के कर्तव्य (Duties of Labour Welfare Officer)

कल्याण अधिकारी (भर्ती और सेवा शर्तों) नियम, 1951 में श्रम कल्याण अधिकारी के कर्तव्य, स्तर और भूमिका का विस्तार से वर्णन किया गया है जो इस प्रकार है:

(क) पर्यवेक्षण संबंधित कार्य:

- (1) सुरक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण कार्यक्रम; आवास, मनोरंजन और स्वच्छता सेवाएं;
- (2) संयुक्त समिति के कामकाज की देखभाल करना;
- (3) मजदूरी संबंधित अवकाश प्रदान करना; और
- (4) श्रमिकों की शिकायतों का निवारण।

(ख) मजदूरों के परामर्श संबंधित कार्य:

- (i) व्यक्तिगत और पारिवारिक समस्याएं;
- (ii) काम के माहौल में समायोजन; और
- (iii) अधिकारों और विशेषाधिकारों को समझना।

(ग) निम्नलिखित मामलों पर प्रबंधन को सलाह देना:

- (i) कल्याणकारी नीतियां तैयार करना;
- (ii) शिक्षता प्रशिक्षण कार्यक्रम;
- (iii) कर्मचारियों के लिए वैधानिक दायित्वों को पूरा करना;

- (iv) अनुषंगी लाभों का विकास करना; और
- (v) श्रमिकों की शिक्षा और संचार माध्यमों का उपयोग।

(घ) श्रमिकों के साथ संपर्क स्थापित करना:

- (i) उन विभिन्न सीमाओं को समझें जिनके तहत वे काम करते हैं;
- (ii) संयंत्र में सामंजस्यपूर्ण औद्योगिक संबंधों की आवश्यकता की सराहना करें;
- (iii) कर्मचारियों को कंपनी की नीतियों की व्याख्या करना; और
- (iv) विवाद की स्थिति में कर्मचारियों को समझौता करने के लिए राजी करना।

(च) प्रबंधन के साथ संपर्क स्थापित करने के लिए:

- (i) विभिन्न मामलों पर श्रमिकों के दृष्टिकोण की सराहना करें;
- (ii) प्रबंधन के विचाराधीन मामलों में श्रमिकों की ओर से हस्तक्षेप करना;
- (iii) विभिन्न विभाग प्रमुखों को उनके दायित्वों को पूरा करने में सहायता करना;
- (iv) संयंत्र में सामंजस्यपूर्ण औद्योगिक संबंध बनाए रखना; और
- (v) श्रमिकों के सामान्य कल्याण को बढ़ावा देने के उपाय सुझाएं।

(छ) प्रबंधन और श्रमिकों के साथ काम करना:

- (i) संयंत्र में सामंजस्यपूर्ण औद्योगिक संबंध बनाए रखना;
- (ii) शिकायतों के शीघ्र निवारण और शीघ्र निपटान की व्यवस्था करना; और
- (iii) उद्यम की उत्पादकता और उत्पादक दक्षता में सुधार।

(ज) जनता के साथ काम करना:

- (i) कारखाना निरीक्षकों, चिकित्सा अधिकारियों और अन्य निरीक्षकों के साथ संपर्क स्थापित करके संयंत्र पर लागू होने वाले अधिनियमों के विभिन्न प्रावधानों का उचित प्रवर्तन सुनिश्चित करना;
- (ii) श्रमिकों को सामुदायिक सेवाओं का उपयोग करने में मदद करना।

यह स्पष्ट है कि एक कल्याण अधिकारी को सौंपे गए कर्तव्यों और कार्यों में नीति निर्माण और कार्यान्वयन में प्रबंधन की सहायता से लेकर कल्याण कार्यक्रम की निगरानी, श्रमिकों और जनता के साथ संपर्क स्थापित करना, श्रमिकों की समस्याओं और शिकायतों को हल करना शामिल है।

श्रम पर राष्ट्रीय आयोग ने कहा है, "काम के स्थान पर और बाहर दोनों जगह, उनकी भलाई को प्रभावित करने वाले सभी मामलों में श्रमिकों की देखभाल, कल्याण अधिकारी पर एक विशेष

जिम्मेदारी डालती है। उसे 'मानवीय पक्ष में रखरखाव इंजीनियर' होना चाहिए। कई मामलों में, वह सेवा के नियमों और शर्तों और घरेलू और अन्य मामलों से संबंधित कर्मचारियों की शिकायतों को भी संभालता है जो कार्मिक प्रबंधन के क्षेत्र में आते हैं। इस प्रकार, वस्तुतः, कार्मिक प्रबंधन कार्यों और कल्याण कार्यों के बीच कोई सीमांकन नहीं है।

भारत में एक कल्याण अधिकारी एक "बहुउद्देश्यीय कार्मिक अधिकारी" है। वह मुख्य रूप से कर्मचारी सलाहकार या विशेषज्ञ की भूमिका के साथ कर्मचारियों के कल्याण से संबंधित है। उनसे एक सलाहकार परामर्शदाता, मध्यस्थ और प्रबंधन और श्रम के बीच एक संपर्क व्यक्ति के रूप में कार्य करने की अपेक्षा की जाती है।

8.5 सारांश

सामाजिक कल्याण का उद्देश्य भोजन, आश्रय, स्वास्थ्य देखभाल, शिक्षा और सामाजिक सेवाओं जैसी बुनियादी जरूरतों तक पहुंच सुनिश्चित करके व्यक्तियों, परिवारों और समुदायों की भलाई को बढ़ावा देना है। सामाजिक कल्याण के सिद्धांतों में सामाजिक न्याय, समानता और एकजुटता शामिल है। इन सिद्धांतों का उद्देश्य एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण समाज बनाना है जहां हर किसी को सम्मानित जीवन जीने का अवसर मिले।

एक कल्याण अधिकारी एक पेशेवर है जो समाज कल्याण क्षेत्र में यह सुनिश्चित करने के लिए काम करता है कि व्यक्तियों और परिवारों को उनके जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए आवश्यक समर्थन प्राप्त हो। कल्याण अधिकारी कमजोर व्यक्तियों, जैसे बच्चों, बुजुर्गों और विकलांग लोगों के साथ काम करते हैं, ताकि उन्हें स्वास्थ्य सेवा, शिक्षा और सामाजिक सहायता जैसी आवश्यक सेवाओं तक पहुंच प्रदान की जा सके। वे गरीबी, बेघरता और असमानता जैसी सामाजिक समस्याओं की पहचान करने और उन्हें दूर करने के लिए भी काम करते हैं।

अंत में, सामाजिक कल्याण उद्देश्य, सिद्धांत और कल्याण अधिकारी व्यक्तियों और समुदायों के कल्याण को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बुनियादी जरूरतों तक पहुंच प्रदान करके और सामाजिक समस्याओं का समाधान करके, सामाजिक कल्याण कार्यक्रम और पेशेवर एक निष्पक्ष और न्यायपूर्ण समाज बनाने में मदद करते हैं जहां हर कोई एक सम्मानित जीवन जी सके।

बोध प्रश्न-

प्रश्न 1. श्रम कल्याण के सिद्धांतों की विवेचना कीजिए ?

प्रश्न 2. श्रम कल्याण के क्या उद्देश्य हैं, इस पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए ?

प्रश्न 3. श्रम कल्याण अधिकारी कौन है और उसके क्या कर्तव्य हैं ?

8.6 परिभाषिक शब्दावली

सिद्धांत: सिद्धांत एक मौलिक सत्य, कानून या दिशानिर्देश है जो अभ्यास या तर्क के आधार के रूप में कार्य करता है।

प्रश्न 3. श्रम कल्याण अधिकारी कौन है, और उसके क्या कर्तव्य है ?

इकाई 9: भारत में श्रम कल्याण के कार्यक्रम

इकाई की रूपरेखा

- 9.0 इकाई के उद्देश्य
- 9.1 परिचय
- 9.2 भारत में श्रम कल्याण का विकास
- 9.3 श्रम कल्याण के प्रावधान
- 9.4 भारत में श्रम कल्याण के कार्यक्रम
- 9.5 सारांश
- 9.6 परिभाषिक शब्दावली
- 9.7 संदर्भित पुस्तकें
- 9.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.0 इकाई के उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में श्रम कल्याण के विभिन्न कार्यक्रमों पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग श्रम कल्याण के निम्नलिखित पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे -

- भारत में श्रम कल्याण के विकास यात्रा को जान सकेंगे;
- भारत में श्रम कल्याण के लिए बनाए गए विभिन्न प्रावधानों के बारे में जान सकेंगे;
- भारत में श्रम कल्याण के लिए चलाए गए विभिन्न कार्यक्रमों के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

9.1 परिचय

भारत में, श्रम कल्याण कार्यक्रम श्रमिकों के कल्याण और कल्याण को बढ़ावा देने और श्रमिकों और प्रबंधन के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंध बनाए रखने के लिए सरकार और नियोक्ताओं द्वारा की गई पहल हैं। इन कार्यक्रमों का उद्देश्य श्रमिकों के रहने और काम करने की स्थिति में सुधार करना, उनके कल्याण और विकास को बढ़ावा देना और उनकी सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करना है।

भारत में श्रम कल्याण कार्यक्रमों की अवधारणा को 20वीं सदी की शुरुआत में देखा जा सकता है जब श्रमिकों के काम की शर्तों, सुरक्षा और स्वास्थ्य को विनियमित करने के लिए पहले श्रम कानून बनाए गए थे। तब से, श्रमिकों के हितों की रक्षा करने और उनके कल्याण को बढ़ावा देने के लिए कई कानून और नियम पारित किए गए हैं। भारत में कुछ प्रमुख श्रम कल्याण कार्यक्रमों में कर्मचारी राज्य बीमा योजना (ईएसआईएस), कर्मचारी भविष्य निधि (ईपीएफ), मातृत्व लाभ अधिनियम, औद्योगिक आवास, कामगार मुआवजा अधिनियम, न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, कारखाना

अधिनियम, बाल श्रम निषेध और विनियमन अधिनियम, राष्ट्रीय बाल श्रम परियोजना, एकीकृत बाल विकास सेवाएँ (ICDS), और बहुत कुछ शामिल हैं।

इन कार्यक्रमों और पहलों को श्रमिकों को विभिन्न लाभ और सहायता प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किया गया है, जिसमें चिकित्सा और वित्तीय सहायता, सेवानिवृत्ति लाभ, मातृत्व अवकाश और लाभ, किफायती आवास सुविधाएं, चोटों और विकलांगों के लिए मुआवजा, शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण, स्वास्थ्य और पोषण सेवाएं शामिल हैं।

कुल मिलाकर, भारत में श्रम कल्याण कार्यक्रमों का उद्देश्य श्रमिकों के कल्याण और विकास को बढ़ावा देना, उनकी सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित करना और श्रमिकों और प्रबंधन के बीच सामंजस्यपूर्ण संबंधों को बढ़ावा देना है।

9.2 भारत में श्रम कल्याण का विकास

परोपकारी, धार्मिक नेताओं, सामाजिक कार्यकर्ताओं और स्वैच्छिक संगठनों के माध्यम से श्रम कल्याण कार्यक्रम विकसित हुए हैं। औद्योगिक विकास की प्रारंभिक अवधि के दौरान, श्रमिकों के कल्याण के प्रयास बड़े पैमाने पर सामाजिक कार्यकर्ताओं, परोपकारी और अन्य धार्मिक नेताओं द्वारा किए गए थे, ज्यादातर मानवीय आधार पर। भारत में कल्याण और अन्य कानूनों की शुरुआत से पहले, श्रम की स्थिति दयनीय थी। बाल श्रम का शोषण, काम के लंबे घंटे, खराब स्वच्छता, सुरक्षा उपायों का अभाव आदि कारखाने के जीवन की नियमित विशेषताएं थीं। सबसे पहले विधायी दृष्टिकोण को 1850 के शिक्षु अधिनियम के पारित होने पर वापस देखा जा सकता है। यह अधिनियम गरीब और अनाथ बच्चों को विभिन्न व्यापारों और शिल्पों को सीखने में मदद करने के उद्देश्य से बनाया गया था। अगला अधिनियम 1853 का घातक दुर्घटना अधिनियम था, जिसका उद्देश्य "कार्रवाई योग्य गलत" के परिणामस्वरूप अपनी जान गंवाने वाले श्रमिकों के परिवारों को मुआवजा प्रदान करना था। इस देश में कानून बनाने के पहले के प्रयास मुख्य रूप से रोजगार के नियमन के उद्देश्य से थे। औद्योगिक क्रांति की शुरुआत के साथ ही बड़े शहरों में बड़े पैमाने के उद्योगों की स्थापना हुई। मजदूर गांवों से शहरों की ओर पलायन कर गए। वे उच्च वेतन, आराम और शहर के जीवन के मनोरंजन से आकर्षित थे; लेकिन उन्हें खराब कामकाजी परिस्थितियों, काम के लंबे घंटों, कम वेतन, स्वास्थ्य संबंधी खतरों और सुरक्षा उपायों की अनुपस्थिति और असंतोषजनक कामकाजी और रहने की स्थिति का सामना करना पड़ा।

स्वतंत्रता पूर्व की अवधि

1881 में प्रथम भारतीय कारखाना अधिनियम के पारित होने के साथ भारतीय श्रमिकों की कार्य स्थितियों में सुधार के लिए आंदोलन शुरू हुआ।

1875 के फैक्ट्री आयोग द्वारा प्रमाणित उन दिनों के दौरान बंबई में कपड़ा मिलों में मजदूरों ने जिस दयनीय स्थिति में काम किया था, वह अधिनियम के पारित होने का तत्काल कारण था। हालाँकि, वयस्क श्रम को किसी भी तरह से संरक्षित नहीं किया गया था। यह कई मायनों में नाकाफी पाया गया। किसी भी तरह, यह एक उपयुक्त कानून के माध्यम से श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए सरकार के अधिकार को मान्यता देता है। इसलिए, 1881 के फैक्ट्री

अधिनियम के कामकाज की समीक्षा के लिए 1884 में बॉम्बे सरकार द्वारा मुलोक आयोग (Mulock Commission) नियुक्त किया गया था।

कारखाना (संशोधन) अधिनियम 1891 50 या अधिक व्यक्तियों को रोजगार देने वाले सभी कारखानों पर लागू होता है। बेहतर वेंटिलेशन, साफ-सफाई और कारखानों में अधिक भीड़ को रोकने के लिए भी प्रावधान किए गए थे। बच्चों के लिए काम के घंटे घटाकर प्रतिदिन छह कर दिए गए। शाम 7.00 बजे से सुबह 5.00 बजे के बीच महिलाओं के काम पर रोक लगा दी गई। महिलाओं को डेढ़ घंटे के आराम के साथ दिन में ग्यारह घंटे काम करने की अनुमति थी। औद्योगिक श्रमिकों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए भी कुछ प्रावधान किए गए थे।

1914 में प्रथम विश्व युद्ध की शुरुआत ने कई नए घटनाक्रमों को जन्म दिया। युद्ध के वर्षों (1914 से 1918) के दौरान कारखानों की संख्या और उनमें कार्यरत व्यक्तियों की संख्या में वृद्धि हुई। मजदूरी बढ़ती कीमतों और मुनाफे के साथ तालमेल नहीं बिठा पाई। 1919 में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (ILO) की स्थापना हमारे देश में श्रम कल्याण आंदोलन के इतिहास में एक और महत्वपूर्ण मील का पत्थर थी। AITUC (1920) के गठन, हमारे देश में पहला केंद्रीय ट्रेड यूनियन संगठन, ने भी कल्याणकारी आंदोलन को आगे बढ़ाने में मदद की। श्रम कल्याण के क्षेत्र में एक और मील का पत्थर 1944 में श्रम जांच समिति, रेगे समिति (Rege Commission) की नियुक्ति के साथ पहुंचा। समिति को मजदूरी और कमाई, रोजगार, आवास और श्रमिकों की सामाजिक स्थितियों से संबंधित समस्याओं की जांच करने के लिए कहा गया था। इसमें श्रम कल्याण के विभिन्न क्षेत्रों जैसे आवास नीति, आराम और मनोरंजन, व्यावसायिक रोग, वृद्धावस्था और मृत्यु के मामले में राहत, क्रश, कैंटीन, चिकित्सा सहायता, कपड़े धोने और नहाने की सुविधा, शैक्षिक सुविधाएं आदि शामिल हैं। भारत, इस समिति ने श्रमिकों के सामाजिक और आर्थिक जीवन में सुधार के लिए कल्याणकारी उपायों के महत्व पर प्रकाश डाला।

आजादी के बाद की अवधि

आजादी के बाद मजदूर कल्याण आंदोलन ने नए आयाम हासिल किए। यह महसूस किया गया कि उत्पादकता बढ़ाने और औद्योगिक तनाव को कम करने में श्रम कल्याण की सकारात्मक भूमिका थी। विभिन्न केंद्रीय ट्रेड यूनियन संगठनों - INTUC (1947), HMS (1943), BMS (1955), CITU (1970), NLO आदि के उद्भव ने श्रम कल्याण आंदोलन के विकास को और बढ़ावा दिया। मुख्य रूप से रेगे समिति की सिफारिशों के आधार पर, भारत सरकार ने कारखाना अधिनियम 1948 अधिनियमित किया। इस महत्वपूर्ण कानून का मसौदा तैयार करने के लिए सर विल्फ्रेड गैरेट की सेवाओं का उपयोग किया गया। इस प्रकार, 1948 का कारखाना अधिनियम 1 अप्रैल 1949 से लागू हुआ।

विभिन्न श्रम कल्याण गतिविधियों को विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में शामिल किया गया। प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951 से 1956) ने श्रमिक वर्गों के कल्याण पर काफी ध्यान दिया। इसने औद्योगिक विवादों से बचने और आपसी सद्भावना और समझ बनाने के लिए कल्याणकारी सुविधाओं के विकास पर जोर दिया। इस अवधि के दौरान, बागान श्रम अधिनियम, 1951, खान अधिनियम, 1951 और कर्मचारी भविष्य निधि अधिनियम, 1952 अधिनियमित किए गए।

दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956 से 1961) में श्रम कल्याण के क्षेत्र में और विकास हुए। नाविकों और मोटर परिवहन कर्मचारियों को शामिल करने के लिए नए अधिनियम बनाए गए। डॉक वर्कर्स (सुरक्षा स्वास्थ्य और कल्याण) योजना के रूप में जानी जाने वाली एक व्यापक योजना 1951 में तैयार की गई थी। 1959 में, असम सरकार ने असम चाय बागान कर्मचारी कल्याण कोष अधिनियम नामक एक अधिनियम पारित किया। इस अवधि में विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा औद्योगिक आवास के क्षेत्र में कई अधिनियम भी देखे गए।

तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961 से 1966) ने विभिन्न वैधानिक कल्याण प्रावधानों के प्रभावी कार्यान्वयन की आवश्यकता पर बल दिया। इसने काम करने की स्थिति में सुधार की सिफारिश की और श्रमिकों की ओर से अधिक उत्पादकता पर जोर दिया। इस अवधि के दौरान कुछ विधायी उपायों में मातृत्व लाभ अधिनियम 1961, प्रशिक्षु अधिनियम 1961 और बोनस भुगतान अधिनियम 1965 शामिल हैं।

पांचवीं पंचवर्षीय योजना (1974 से 1979) में भी श्रमिक कल्याण के लिए कार्यक्रम निर्धारित किए गए थे। बढ़ते पैमाने पर औद्योगिक सुरक्षा को बढ़ावा देने के लिए, विभिन्न राज्यों में सुरक्षा कक्षों की स्थापना के लिए योजना प्रदान की गई। शिल्पकारों के प्रशिक्षण और रोजगार सेवा सहित श्रम कल्याण के लिए 57 करोड़ रुपये की राशि प्रदान की गई।

छठी पंचवर्षीय योजना (1980 से 1985) ने ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में कृषि श्रमिकों, कारीगरों, हथकरघा बुनकरों, मछुआरों, चमड़ा श्रमिकों और अन्य असंगठित श्रमिकों के लाभ के लिए राज्य सरकारों द्वारा चलाए जाने वाले विशेष कार्यक्रमों को बढ़ावा देने का निर्णय लिया। इस वर्ष के दौरान श्रम कल्याण कार्यक्रमों के लिए 161.7 करोड़ रुपये का परिव्यय प्रस्तावित किया गया था।

इन सभी प्रयासों के बावजूद, भारत में कल्याणकारी कार्य अभी भी अन्य देशों के मानक सेटअप से काफी नीचे है। हालांकि, यह रोजगार की स्थिति की एक स्वीकृत विशेषता के रूप में बनी हुई है और आने वाले वर्षों में तेजी से प्रगति करने के लिए बाध्य है, खासकर जब भारतीय गणतंत्र समाजवादी उद्देश्यों के साथ एक कल्याणकारी राज्य के आदर्श से जुड़ा हुआ है।

9.3 श्रम कल्याण के प्रावधान

श्रम कल्याण के प्रावधान वे पहल हैं जो कर्मचारियों की भलाई और कल्याण सुनिश्चित करने के लिए नियोक्ताओं, सरकार और अन्य हितधारकों द्वारा की जाती हैं। इन उपायों का उद्देश्य कर्मचारियों के रहने और काम करने की स्थिति में सुधार करना, उनके स्वास्थ्य, सुरक्षा और सामाजिक सुरक्षा को बढ़ावा देना, उनकी उत्पादकता बढ़ाना और उनका समग्र विकास सुनिश्चित करना है। मोटे तौर पर, श्रम कल्याण से संबंधित प्रावधानों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है:

- (i) संयंत्र या प्रतिष्ठान के भीतर कल्याण सुविधाएं, और
- (ii) संयंत्र या प्रतिष्ठान के बाहर कल्याण सुविधाएं

संयंत्र या प्रतिष्ठान के भीतर कल्याण सुविधाएं

(1) **पीने का पानी:** कारखाना अधिनियम, 1948, खान अधिनियम, 1952, बीड़ी और सिगार श्रमिक (रोजगार की शर्तें) अधिनियम, 1966, बागान श्रम अधिनियम, 1951 और अनुबंध श्रम (विनियमन और उन्मूलन) अधिनियम, 1970 बशर्ते कि उसमें नियोजित सभी श्रमिकों के लिए उपयुक्त पेयजल की पर्याप्त आपूर्ति उपलब्ध कराने और बनाए रखने के लिए प्रभावी व्यवस्था की जानी चाहिए। उपरोक्त प्रावधानों के अलावा कारखाना अधिनियम, 1948 की धारा 18 प्रदान करती है:

- ऐसे सभी बिंदुओं पर कारखाने में कार्यरत अधिकांश श्रमिकों द्वारा समझी जाने वाली भाषा में स्पष्ट रूप से 'पीने का पानी' चिह्नित किया जाएगा, और ऐसा कोई बिंदु किसी भी धोने की जगह, मूत्रालय, शौचालय, थूकदान के छह मीटर के भीतर स्थित नहीं होगा।
- ऐसे प्रत्येक कारखाने में, जिसमें आमतौर पर ढाई सौ से अधिक श्रमिक नियोजित होते हैं, गर्म मौसम के दौरान प्रभावी साधनों द्वारा पीने के पानी को ठंडा करने और उसके वितरण के लिए प्रावधान किया जाएगा।

(2) **धुलाई सुविधाएं:** भीड़-भाड़ वाले क्षेत्रों में रहने वाले श्रमिकों के लिए उपयुक्त धुलाई सुविधाओं का प्रावधान वांछनीय है। इन श्रमिकों के पास आमतौर पर अपने घरों में धोने के लिए पर्याप्त सुविधाएं नहीं होती हैं और ऐसी सुविधाओं का प्रावधान उनके आराम को बढ़ा देगा। कारखाना अधिनियम, गोदी श्रमिक (सुरक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण) योजना, बीड़ी और सिगार श्रमिक (रोजगार की शर्तें) अधिनियम, और अनुबंध श्रम (विनियमन और उन्मूलन) अधिनियम, नियोजितों के लिए धुलाई की सुविधा प्रदान करना अनिवार्य बनाते हैं। कारखाना अधिनियम की धारा 42 में प्रावधान है कि श्रमिकों के उपयोग के लिए धुलाई के लिए पर्याप्त और उपयुक्त सुविधाएं प्रदान की जाएंगी और उनका रखरखाव किया जाएगा।

(3) **कपड़ों के भंडारण और सुखाने की सुविधाएं:** फैक्ट्री अधिनियम कपड़ों के भंडारण और सुखाने की सुविधाओं का प्रावधान करता है। अधिनियम की धारा 43 प्रदान करती है:

राज्य सरकार, किसी भी कारखाने या वर्ग या कारखानों के विवरण के संबंध में नियम बना सकती है, जिसमें काम के घंटों के दौरान न पहने जाने वाले कपड़ों को रखने और गीले कपड़ों को सुखाने के लिए उपयुक्त स्थानों के प्रावधान की आवश्यकता होती है।

धारा 43 के अर्थ में आवास की उपयुक्तता में चोरी से सुरक्षा देना शामिल है। आवास उपयुक्त है या नहीं यह इस बात पर निर्भर करता है कि श्रमिकों के कपड़े चोरी के जोखिम के संपर्क में हैं या नहीं।

(4) **बैठने की सुविधाएं:** फैक्ट्री प्रबंधन के लिए काम के घंटों के दौरान ऑपरेटरों को बैठने की व्यवस्था करना असामान्य है। विशेष रूप से महिला श्रमिकों के लिए उच्च मूल्य प्रदान किए जाने पर थकान के विचार को कम करने में मदद मिलेगी। ऐसी सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए, कारखाना अधिनियम की धारा 44, अन्य बातों के साथ-साथ यह प्रदान करती है:

प्रत्येक कारखाने में खड़े होकर काम करने के लिए बाध्य सभी श्रमिकों के लिए बैठने की उपयुक्त व्यवस्था की जाएगी और उसे बनाए रखा जाएगा, ताकि वे आराम के किसी भी अवसर का लाभ उठा सकें जो उनके काम के दौरान हो सकता है।

- (5) **विश्राम गृह :** विश्राम गृह श्रमिकों के बहुत काम आता है। यह आश्रय प्रदान करता है जहां श्रमिक दोपहर के भोजन के अंतराल के दौरान आराम और जलपान कर सकते हैं। मुख्य उद्देश्य यह है कि कार्यकर्ता काम के घंटों से पहले आश्रय या आराम कर सकता है। 1931 में रॉयल कमीशन ऑन लेबर द्वारा रेस्ट रूम और लंच रूम उपलब्ध कराने की आवश्यकता पर जोर दिया गया था। इसकी सिफारिशों को प्रभावी करने के लिए, कारखानों, खानों, डॉक और मोटर में कार्यरत श्रमिकों के लिए रेस्ट शेल्टर और लंच रूम उपलब्ध कराने के लिए विधायी अधिनियम बनाए गए थे। परिवहन प्लांटेशन लेबर एक्ट, हालांकि, आश्रय, आराम या लंच रूम के लिए प्रदान नहीं करता है। यह आंशिक रूप से एक कैंटीन प्रदान करने के वैधानिक दायित्व के कारण है जहां 150 या अधिक कर्मचारी कार्यरत हैं। कारखानों, खानों और मोटर परिवहन में विश्राम गृहों के वैधानिक प्रावधानों की जांच से पता चलता है कि आश्रयों, विश्राम कक्षों और भोजन कक्षों को उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक कर्मचारियों की न्यूनतम संख्या के संबंध में कोई एकरूपता नहीं है। फैक्ट्री अधिनियम के तहत, केवल 150 या उससे अधिक श्रमिकों को रोजगार देने वाले कारखानों को आश्रय या विश्राम कक्ष और उपयुक्त लंच रूम (पीने के पानी के प्रावधान के साथ) प्रदान करने की आवश्यकता होती है, जहां श्रमिक अपना भोजन कर सकते हैं, खान अधिनियम के तहत बनाए गए नियम इसे अनिवार्य बनाते हैं। जैसे ही खदान में नियोजित श्रमिकों की संख्या 50 से अधिक हो जाती है, तो नियोजित ऐसी सुविधाएं प्रदान करेगा। हालांकि, डॉक वर्क्स (सुरक्षा, स्वास्थ्य और कल्याण) योजना, मोटर परिवहन श्रमिक अधिनियम, और अनुबंध श्रम (विनियमन और उन्मूलन) अधिनियम ऐसी कोई सीमा न रखें। इसके अलावा, फैक्ट्रीज एक्ट और मोटर ट्रांसपोर्ट वर्क्स एक्ट में कहा गया है: आश्रयों या विश्राम कक्षों या दोपहर के भोजन के कमरों में पर्याप्त रोशनी और हवादार होना चाहिए और उन्हें ठंडी और साफ स्थिति में बनाए रखा जाना चाहिए।

इसके अलावा राज्य सरकारों को कारखाना अधिनियम की धारा 47(3) और मोटर परिवहन श्रमिक अधिनियम की धारा 9 के तहत प्रदान किए जाने वाले आश्रयों, विश्राम कक्षों और भोजन कक्षों के निर्माण, आवास, फर्नीचर और अन्य उपकरणों के संबंध में मानक निर्धारित करने का अधिकार है।

- (6) **क्रेच:** दुनिया के कई देशों में क्रेच असामान्य नहीं हैं। भारत में औद्योगिक प्रतिष्ठानों में क्रेच स्थापित करने की आवश्यकता पर 1931 की शुरुआत में जोर दिया गया था, जब भारत में रॉयल कमीशन ऑन लेबर ने अन्य बातों के साथ-साथ सिफारिश की थी कि 250 या अधिक महिला श्रमिकों को रोजगार देने वाले प्रत्येक कारखाने में क्रेच उपलब्ध कराए जाने चाहिए। साथ ही, आयोग ने सुझाव दिया कि प्रांतीय सरकारों को 250 से कम महिलाओं को रोजगार देने वाले प्रतिष्ठानों में भी क्रेच के प्रावधानों का विस्तार करने का अधिकार दिया जाना चाहिए। इसकी सिफारिशों को प्रभावी करने के लिए, कारखाना अधिनियम, 1934 की धारा 33 ने स्थानीय सरकारों को नियम बनाने का अधिकार दिया, ताकि 50 से अधिक महिला श्रमिकों को रोजगार देने

वाली फैक्ट्री ऐसी महिलाओं के छह साल से कम उम्र के बच्चों के उपयोग के लिए उपयुक्त कमरे या कमरे उपलब्ध करा सके।

कारखाना अधिनियम 1948 में इस अधिनियम की धारा 48 और बीड़ी और सिगार श्रमिक (रोजगार की शर्तें) अधिनियम की धारा 14 में फिर से अधिनियमित किया गया था, जो नियोक्ता के लिए इसे प्रदान करने और बनाए रखने के लिए अनिवार्य बनाता है:

- (i) तीस या अधिक महिला श्रमिकों को नियोजित करने वाले प्रत्येक कारखाने में क्रेच;
- (ii) ऐसे कमरों में पर्याप्त आवास;
- (iii) कमरे में पर्याप्त प्रकाश व्यवस्था और वेंटिलेशन;
- (iv) कमरे में साफ और स्वच्छता की स्थिति;
- (v) बच्चों की देखभाल के लिए प्रशिक्षित नर्स या आया;
- (vi) निर्धारित मानक।

राज्य सरकार को निम्नलिखित मामलों पर नियम बनाने का अधिकार है:

- (ए) ऐसे स्थानों के निर्माण, आवास, फर्नीचर और अन्य उपकरणों के संबंध में स्थान और मानक,
- (बी) बच्चों के कपड़े धोने और बदलने की सुविधा या उनकी देखभाल के लिए कोई अन्य अतिरिक्त सुविधा का प्रावधान,
- (सी) बच्चों के लिए मुफ्त दूध या जलपान या दोनों का प्रावधान,
- (घ) ऐसे बच्चों की माताओं के लिए कारखाने में उपयुक्त अंतराल पर उन्हें खिलाने की सुविधा।

- (7) **कैंटीन:** स्वास्थ्य, दक्षता और कल्याण के दृष्टिकोण से निर्विवाद लाभ प्रदान करने वाले श्रमिकों के लिए कैंटीनों को औद्योगिक प्रतिष्ठान के एक अनिवार्य हिस्से के रूप में दुनिया भर में मान्यता प्राप्त है। भारत में, कार्य स्थल के अंदर कैंटीन स्थापित करने की आवश्यकता पर रॉयल कमीशन ऑन लेबर और लेबर इन्वेस्टिगेशन कमेटी द्वारा जोर दिया गया था। राष्ट्रीय श्रम आयोग और श्रम कल्याण समिति ने भी कैंटीन स्थापित करने की आवश्यकता पर बल दिया है। कारखाना अधिनियम, खान अधिनियम, और बीड़ी और सिगार श्रमिक (रोजगार की शर्तें) अधिनियम के अनुसार जहां 250 श्रमिक सामान्य रूप से कार्यरत हैं नियोक्ता के लिए एक कैंटीन चलाने को अनिवार्य बनाता है। प्लांटेशन लेबर एक्ट में कहा गया है कि प्रत्येक प्लांटेशन में जहां 150 श्रमिक कार्यरत हैं, वहां कार्यस्थल पर एक कैंटीन होनी चाहिए। ठेका श्रम (विनियमन और उन्मूलन) अधिनियम उचित सरकार को प्रत्येक प्रतिष्ठान में अनुबंध श्रम के उपयोग के लिए एक या एक से अधिक कैंटीन प्रदान करने और बनाए रखने के लिए ठेकेदार की आवश्यकता वाले नियमों को तैयार करने का अधिकार देता है।

- (8) **वर्दी और सुरक्षात्मक कपड़े:** खान अधिनियम श्रमिकों को वर्दी और सुरक्षात्मक कपड़े प्रदान नहीं करता है। प्लांटेशन लेबर एक्ट और मोटर ट्रांसपोर्ट वर्कर्स एक्ट कुछ श्रेणियों के कर्मचारियों को वर्दी या कंबल और अन्य सुरक्षात्मक सामग्री मुफ्त में देने का प्रावधान करते हैं।
- (9) **प्राथमिक चिकित्सा उपकरण:** औद्योगिक प्रतिष्ठानों में, विशेष रूप से जहां यांत्रिक शक्ति का उपयोग किया जाता है, प्राथमिक चिकित्सा उपकरण और प्रशिक्षित कर्मियों को प्राथमिक चिकित्सा सहायता प्रदान करने के लिए आवश्यक है। यह घायल व्यक्तियों को उनके दर्द और चोटों को कम करने में मदद करेगा। इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए, प्लांटेशंस लेबर एक्ट नियोक्ताओं पर प्राथमिक चिकित्सा बॉक्स प्रदान करने और बनाए रखने के लिए बाध्य करता है।

खान अधिनियम के अनुसार प्रत्येक प्राथमिक चिकित्सा पेटी और अलमारी को एक अलग जिम्मेदार व्यक्ति के 'प्रभारी' में रखा जाएगा जो प्राथमिक चिकित्सा उपचार में प्रशिक्षित है और जो कारखाने के काम के घंटों के दौरान हमेशा उपलब्ध रहेगा। इसके अलावा फैक्ट्री अधिनियम में कहा गया है कि 'प्रत्येक कारखाने में जहां 500 से अधिक श्रमिक कार्यरत हैं, वहाँ निर्धारित आकार का एक एम्बुलेंस कक्ष उपलब्ध कराया जाएगा और बनाए रखा जाएगा जिसमें निर्धारित उपकरण होंगे और ऐसे चिकित्सा और नर्सिंग स्टाफ के प्रभारी होंगे जो कि हो सकते हैं। निर्धारित किया जाए।' इसी प्रकार, खान अधिनियम में यह भी निर्धारित किया गया है कि प्रत्येक खान में जहां 150 से अधिक व्यक्ति कार्यरत हैं, निर्धारित चिकित्सा और नर्सिंग स्टाफ के प्रभारी प्राथमिक चिकित्सा कक्ष उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

संयंत्र या प्रतिष्ठान के बाहर कल्याण सुविधाएं

- (1) **मनोरंजनात्मक सुविधाएं:** मनोरंजन कारखानों, खानों, बागानों और अन्य औद्योगिक प्रतिष्ठानों में श्रमसाध्य और यांत्रिक कार्य करने वाले श्रमिकों को मानसिक ताजगी का अवसर प्रदान करता है। मनोरंजन में भाग लेने से आत्म-अभिव्यक्ति, मौज-मस्ती, विश्राम और ताजगी, आनंद और हँसी के रूप में मानसिक और मनोवैज्ञानिक संतुष्टि मिलती है। श्रम कल्याण समिति ने देखा:

संगीत, नृत्य और नाटक, खेल और लूट, एथलेटिक्स और कैलिसथेनिक्स, पेंटिंग और नक्काशी मनोरंजन के रूप हैं जिनका उपयोग एक कार्यकर्ता अपने मन को मजबूत करने और अपने थके हुए शरीर को ताजा करने के लिए अपने मनोबल को बढ़ाने के लिए कर सकता है। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि मनोरंजन से उसे शारीरिक और मानसिक अनुशासन की भावना विकसित करने का अवसर मिलता है, जो मानवीय संबंधों का एक आवश्यक घटक है, और एक टीम भावना है जो उसे जीवन की समस्याओं को सही दिशा में ले जाने में सक्षम बनाती है। वृक्षारोपण श्रम अधिनियम, 1951 और उसके तहत बनाए गए नियम नियोक्ताओं के लिए यह अनिवार्य बनाते हैं कि वे वहाँ कार्यरत श्रमिकों और उनके बच्चों के लिए इनडोर और आउटडोर खेलों के लिए मनोरंजक सुविधाएं प्रदान करें।

- (2) **शैक्षिक सुविधाएं:** रॉयल कमिशन ऑन लेबर द्वारा 1931 तक औद्योगिक चिंताओं में शैक्षिक सुविधाएं प्रदान करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया था। श्रम जांच समिति ने कर्मचारियों के बच्चों के लिए शैक्षिक

सुविधाओं की आवश्यकता पर भी जोर दिया। हाल ही में, राष्ट्रीय श्रम आयोग ने शैक्षिक सुविधाओं के गुणात्मक पहलुओं पर बल दिया। बागान श्रम अधिनियम में नियोजकों के लिए शैक्षिक सुविधाओं का प्रावधान अनिवार्य किया गया है। वृक्षारोपण की धारा 14 उन प्राथमिक विद्यालयों के मानकों को निर्धारित करती है जहाँ छह से बारह वर्ष की आयु के बीच पच्चीस से अधिक बच्चे हैं। इसके अलावा, खनिकों, बीड़ी श्रमिकों और सिनेमा श्रमिकों के बच्चों के लिए 1600 या उससे कम प्रतिमाह की छात्रवृत्ति प्रदान करने की योजना है।

- (3) **आवास की सुविधा:** आवास की समस्या शहरीकरण से संबंधित है, जो औद्योगीकरण और गांवों से शहरों की ओर श्रमिकों के प्रवास का परिणाम है। शहरीकरण समाज के विभिन्न वर्गों को अलग तरह से प्रभावित करता है और सबसे ज्यादा पीड़ित औद्योगिक श्रमिक हैं। यदि हम औद्योगिक श्रमिकों को एक स्वस्थ और अधिक स्वस्थ वातावरण में रख सकते हैं, तो उनके मितव्ययिता और नैतिक संयम को पुनर्जीवित किया जा सकेगा और वे, जो अब गांवों में अपने घरों से जुड़े प्राथमिक आकर्षणों और सुविधाओं से वंचित रह गए हैं, उनमें एक नई इच्छा होगी उनके जीवन स्तर में सुधार के लिए। अब शायद ही कभी हमें किसी औद्योगिक नगर में बाजार या बस्ती के बाहर स्थित आरामदायक बरामदे के ऊपर फूस की छत वाली दो कमरों वाली गाँव की झोपड़ी देखने को मिलती है। यहां पुरुष और महिला एक वास्तविक पारिवारिक जीवन जी सकते हैं, लेकिन वसूला गया किराया मिल लाइन या बस्ती की तुलना में बहुत अधिक है। बेहतर आवास भारतीय औद्योगिक श्रमिकों के जीवन स्तर, व्यवहार और नैतिकता में सुधार की दिशा में पहला कदम है। इन सबके साथ रोकी जा सकने वाली बीमारियों और परिहार्य मृत्यु दर पर विजय प्राप्त होगी और स्वास्थ्य और उत्पादन में सुधार होगा। आवास की समस्या निर्विवाद रूप से भारतीय कामगार की दक्षता और भलाई के लिए सबसे महत्वपूर्ण समस्या है। जो लोग दावा करते हैं कि भारत औद्योगिक आवास पर अधिक पैसा खर्च नहीं कर सकता है, उनके लिए केवल एक ही उत्तर हो सकता है कि वह इस तरह के व्यय में देरी नहीं कर सकता है।

- (4) **मुआवजे का भुगतान करने के लिए नियोक्ता का दायित्व:** यदि किसी कर्मचारी या उसके घर के किसी सदस्य की मृत्यु या चोट लगने के परिणामस्वरूप धारा 15 के तहत एक घर गिर जाता है, और ढहने के लिए केवल और सीधे तौर पर घर में रहने वाले किसी व्यक्ति की गलती या प्राकृतिक आपदा को जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है, कर्मचारी मुआवजा अधिनियम, 1923 की धारा 4 और अनुसूची IV के प्रावधानों के अनुसार नियोक्ता मुआवजे का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा।

9.4 भारत में श्रम कल्याण के कार्यक्रम

भारत में एक बड़ा कार्यबल है और सरकार लंबे समय से श्रमिकों के कल्याण को सुनिश्चित करने के लिए कदम उठा रही है। भारत में श्रम कल्याण कार्यक्रमों का उद्देश्य श्रमिकों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार करना, उनके हितों की रक्षा करना और उनके सामाजिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक कल्याण को सुनिश्चित करना है। ये कार्यक्रम श्रमिकों को सामाजिक सुरक्षा, काम करने की अच्छी स्थिति और बुनियादी सुविधाओं तक पहुंच प्रदान करने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं।

भारत सरकार ने मजदूरों के कल्याण के लिए कई कार्यक्रम और नीतियां लागू की हैं। भारत में श्रम कल्याण पर कुछ महत्वपूर्ण नीतियां हैं:

1. **कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948:** यह अधिनियम श्रमिकों और उनके परिवारों को बीमारी, मातृत्व, विकलांगता या रोजगार चोट के कारण मृत्यु के मामले में सामाजिक सुरक्षा और लाभ प्रदान करता है।
2. **कारखाना अधिनियम, 1948:** यह अधिनियम कारखानों में कार्यरत श्रमिकों की सुरक्षा, स्वास्थ्य, कल्याण और कार्य स्थितियों के लिए प्रावधान करता है। यह खतरनाक सामग्री, मशीनरी और उपकरणों के उपयोग को भी नियंत्रित करता है।
3. **न्यूनतम मजदूरी अधिनियम, 1948:** यह अधिनियम श्रमिकों के लिए एक सभ्य जीवन स्तर सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न उद्योगों और व्यवसायों के लिए न्यूनतम मजदूरी तय करने का प्रावधान करता है।
4. **वेतन भुगतान अधिनियम, 1936:** यह अधिनियम श्रमिकों को मजदूरी के भुगतान को नियंत्रित करता है और यह सुनिश्चित करता है कि उन्हें समय पर और उनके रोजगार अनुबंध की शर्तों के अनुसार भुगतान किया जाता है।
5. **मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961:** यह अधिनियम 12 सप्ताह की अवधि के लिए महिला श्रमिकों को मातृत्व अवकाश और लाभ प्रदान करता है।
6. **ठेका श्रम (विनियमन और उन्मूलन) अधिनियम, 1970:** यह अधिनियम प्रतिष्ठानों में ठेका श्रमिकों के रोजगार को नियंत्रित करता है और उनके कल्याण और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करता है।
7. **भवन और अन्य निर्माण श्रमिक कल्याण उपकर अधिनियम, 1996:** यह अधिनियम निर्माण की लागत पर उपकर लगाकर निर्माण श्रमिकों के कल्याण का प्रावधान करता है।
8. **औद्योगिक रोजगार (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946:** यह अधिनियम औद्योगिक प्रतिष्ठानों में काम के घंटे, छुट्टी, अवकाश, बर्खास्तगी और अनुशासनात्मक कार्रवाई जैसी रोजगार स्थितियों के नियमन का प्रावधान करता है।
9. **बोनस भुगतान अधिनियम, 1965:** यह अधिनियम उन श्रमिकों को बोनस के भुगतान का प्रावधान करता है जिन्होंने प्रतिष्ठान में सेवा की एक निश्चित अवधि पूरी कर ली है।
10. **समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976:** यह अधिनियम समान कार्य या समान प्रकृति के कार्य के लिए पुरुष और महिला श्रमिकों को समान वेतन के भुगतान का प्रावधान करता है।
11. **कर्मकार मुआवजा अधिनियम, 1923:** यह अधिनियम रोजगार के दौरान चोट लगने या मृत्यु होने पर कामगार को मुआवजा प्रदान करता है। यह अधिनियम कामगारों या उनके आश्रितों को रोजगार के दौरान और उसके दौरान हुई दुर्घटना के कारण हुई चोट के मामले में मुआवजे के भुगतान का प्रावधान करता है।
12. **खान अधिनियम, 1952** खानों में काम करने की स्थिति को नियंत्रित करता है और खानों में कार्यरत श्रमिकों के कल्याण के लिए प्रावधान करता है। अधिनियम श्रमिकों के स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण के लिए प्रदान

करता है, जैसे कि चिकित्सा परीक्षण, सुरक्षात्मक उपकरण और कल्याण सुविधाएं। भवन और अन्य निर्माण श्रमिक कल्याण उपकरण अधिनियम, 1996 निर्माण की लागत पर उपकरण लगाकर निर्माण श्रमिकों के कल्याण का प्रावधान करता है।

13. **राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2005**, ग्रामीण श्रमिकों को रोजगार के अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से एक और महत्वपूर्ण पहल है। अधिनियम ग्रामीण क्षेत्रों में प्रत्येक परिवार को सौ दिनों की गारंटीकृत मजदूरी रोजगार प्रदान करता है। यह योजना ग्रामीण श्रमिकों को रोजगार के अवसर प्रदान करने में सफल रही है और उनके जीवन स्तर में सुधार हुआ है।

सरकार ने श्रमिकों की जीवन स्थितियों में सुधार के लिए कई कार्यक्रम भी शुरू किए हैं।

14. **1980** में शुरू किया गया **एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम**, जिसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बुनियादी ढांचा, स्वास्थ्य और शिक्षा सुविधाएं प्रदान करना है। 15. **1985** में शुरू की गई इंदिरा आवास योजना, ग्रामीण गरीबों को घरों के निर्माण के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती है।

16. **2015** में शुरू की गई **प्रधानमंत्री आवास योजना** का उद्देश्य शहरी गरीबों को किफायती आवास उपलब्ध कराना है।

इन कार्यक्रमों के अलावा, सरकार ने श्रमिकों की कार्य स्थितियों में सुधार के लिए कई पहलें शुरू की हैं।

17. **कौशल भारत मिशन, 2015** में शुरू किया गया, जिसका उद्देश्य श्रमिकों को उनकी रोजगार क्षमता में सुधार के लिए प्रशिक्षण और कौशल विकास प्रदान करना है।

18. **नेशनल करियर सर्विस, 2015** में शुरू की गई, जो नौकरी चाहने वालों को नौकरी से संबंधित जानकारी और करियर परामर्श प्रदान करती है।

ये कानून सुनिश्चित करते हैं कि श्रमिकों का शोषण न हो और कार्यस्थल पर उनके साथ उचित व्यवहार हो। वे अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिए एक कानूनी ढांचा प्रदान करते हैं और उनकी भलाई सुनिश्चित करते हैं। हालाँकि, इन कानूनों का कार्यान्वयन अभी भी एक चुनौती है, और सरकार को उन्हें प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए और उपाय करने की आवश्यकता है।

9.5 सारांश

श्रम और उनका कल्याण किसी भी देश की किसी भी सरकार के लिए चाहे वह विकसित, अविकसित, अविकसित या विकासशील हो, बहुत ही जायज सरोकार होते हैं। देश के श्रमिकों के बारे में सोचे बिना किसी देश के आर्थिक विकास या किसी भी देश के आर्थिक विकास की यथास्थिति बनाए रखने की कल्पना नहीं की जा सकती है। भारत में औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था लगभग दो शताब्दियों तक कायम रही। स्वाधीनता प्राप्ति के साथ ही सुनियोजित अर्थव्यवस्था की शुरुआत हुई, जिसका एक उद्देश्य देश का तीव्र औद्योगीकरण है। राष्ट्रीय सरकार औद्योगिक दुनिया में जो कुछ हो रहा था, उस पर एक निष्क्रिय दर्शक नहीं बनी रह सकती थी।

औद्योगिक संगठनों में मानव संसाधन ने सरकार का ध्यान आकर्षित किया। श्रम पर राष्ट्रीय आयोग (1969) का गठन किया गया था और इसकी सिफारिशें श्रम कल्याण समिति के निष्कर्षों पर आधारित थीं। समिति ने महसूस किया कि प्रगतिशील नियोक्ताओं द्वारा प्रबंधित इकाइयों को छोड़कर वैधानिक कल्याण गतिविधियों को ठीक से और पर्याप्त रूप से प्रदान नहीं किया गया था।

वैधानिक कल्याण प्रावधानों का अनुपालन भी आधे-अधूरे मन से और अपर्याप्त था। समिति ने बड़ी संख्या में सिफारिशें कीं, जिनमें अन्य के साथ-साथ क्रेच, कैंटीन, समय-समय पर चिकित्सा परीक्षा, सामान्य खान कल्याण निधि का निर्माण, वृक्षारोपण श्रम अधिनियम के कवरेज का विस्तार, ठेका श्रमिकों के लिए कल्याणकारी लाभों का विस्तार शामिल है। श्रमिकों के लिए अधिक उचित मूल्य की दुकानें खोलना, उपभोक्ता सहकारी समितियों की स्थापना, वैधानिक और त्रिपक्षीय कल्याण बोर्ड आदि।

श्रमिकों के कल्याण के लिए विभिन्न विधानों में प्रावधानों को पूरी गंभीरता के साथ कार्रवाई में अनुवादित किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, कारखाना अधिनियम के प्रावधानों को ईमानदारी से लागू किया जाना चाहिए। औद्योगिक स्वास्थ्य, सुरक्षा और कल्याण के राष्ट्रीय संग्रहालय का बहुत महत्व है। अधिक संख्या में श्रम कल्याण केन्द्रों की स्थापना की जाए।

कल्याण अधिकारियों का श्रमिकों से सीधा संबंध होना चाहिए। व्यावसायिक रोगों के बारे में जानकारी एकत्र करने की व्यवस्था की जानी चाहिए और श्रमिकों को इन रोगों से मुक्त रखने या अविलंब बीमारियों को ठीक करने के लिए कदम उठाए जाने चाहिए। अधिक कल्याण कोष भी स्थापित किए जाने चाहिए और अंत में, ट्रेड यूनियनों को वास्तव में श्रमिकों के हित में भूमिका निभानी चाहिए। श्रमिकों को उनके वैध अधिकारों और मनुष्यों की तरह जीने के उनके अधिकारों से वंचित करके, कोई भी राज्य एक कल्याणकारी राज्य बनने की आकांक्षा नहीं रख सकता है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न 1. भारत में श्रम कल्याण की विकास यात्रा का संक्षिप्त विश्लेषण कीजिए?

प्रश्न 2. भारत में श्रम कल्याण के लिए क्या प्रावधान बनाए गए हैं, इस पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए?

प्रश्न 3. भारत में श्रम कल्याण के कार्यक्रमों पर प्रकाश डालिए?

9.6 परिभाषिक शब्दावली

अधिनियम: एक अधिनियम, कानून के संदर्भ में, कानून के एक टुकड़े या विधायी निकाय द्वारा अधिनियमित एक वैधानिक कानून को संदर्भित करता है। यह एक औपचारिक लिखित दस्तावेज है जो समाज के एक विशिष्ट क्षेत्र या पहलू को नियंत्रित करने वाले नियमों, विनियमों और प्रावधानों को निर्धारित करता है।

क्रेच: एक क्रेच, जिसे डेकेयर सेंटर या नर्सरी के रूप में भी जाना जाता है, एक सुविधा या संस्थान है जहां छोटे बच्चों, आमतौर पर शिशुओं और बच्चों की देखभाल दिन के दौरान की जाती है, जबकि उनके माता-पिता या अभिभावक काम पर होते हैं या अन्यथा व्यस्त रहते हैं।

9.7 संदर्भित पुस्तकें

- ## 9.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न 1. भारत में श्रम कल्याण की विकास यात्रा का संक्षिप्त विश्लेषण कीजिए?

This image shows a blank sheet of white paper with horizontal ruling lines. The lines are evenly spaced and extend across the width of the page. There are no margins, text, or other markings on the paper.

प्रश्न 3. भारत में श्रम कल्याण के लिए क्या प्रावधान बनाए गए हैं, इस पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए?

[illegible]

प्रश्न 3. भारत में श्रम कल्याण के कार्यक्रमों पर प्रकाश डालिए?

[illegible]

इकाई 10 : सामूहिक सौदेबाजी के उद्देश्य

इकाई की रूपरेखा

- 10.0 इकाई के उद्देश्य
- 10.1 परिचय
- 10.2 सामूहिक सौदेबाजी की अवधारणा
- 10.3 सामूहिक सौदेबाजी का अर्थ एवं परिभाषा
 - 10.3.1 सामूहिक सौदेबाजी की विशेषताएं
- 10.4 सामूहिक सौदेबाजी के उद्देश्य
- 10.5 सारांश
- 10.6 परिभाषिक शब्दावली
- 10.7 संदर्भित पुस्तकें
- 10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.0 इकाई के उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में सामूहिक सौदेबाजी के विभिन्न उद्देश्य पर विस्तृत रूप से चर्चा की गई है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग सामूहिक सौदेबाजी के निम्नलिखित पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे -

- सामूहिक सौदेबाजी की अवधारणा को समझ सकेंगे;
- सामूहिक सौदेबाजी का अर्थ जान सकेंगे एवं उसे परिभाषित कर सकेंगे;
- सामूहिक सौदेबाजी की विशेषताओं को जान सकेंगे;
- सामूहिक सौदेबाजी के उद्देश्य पर प्रकाश डाल सकेंगे।

10.1 परिचय

सामूहिक सौदेबाजी श्रम संबंधों के दायरे में एक महत्वपूर्ण तंत्र के रूप में है, जो नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच बातचीत के लिए आधारशिला के रूप में कार्य करता है। यह अध्याय इस आवश्यक प्रक्रिया का व्यापक अवलोकन प्रदान करते हुए सामूहिक सौदेबाजी की मूलभूत अवधारणाओं, अर्थों, विशेषताओं और उद्देश्यों की पड़ताल करता है।

यह अध्याय सामूहिक सौदेबाजी की अवधारणा की खोज से शुरू होता है, इसकी मौलिक प्रकृति और उद्देश्य को स्पष्ट करता है। यह जांच करता है कि कैसे सामूहिक सौदेबाजी नियोक्ताओं या उनके प्रतिनिधियों और कर्मचारियों या उनके संघों के बीच बातचीत और बातचीत के लिए एक मंच के रूप में कार्य करती है। अध्याय आगे सामूहिक

सौदेबाजी की गतिशील प्रकृति और रोजगार संबंधों को आकार देने में इसकी विकसित भूमिका पर प्रकाश डालता है। इसके अलावा, अध्याय सामूहिक सौदेबाजी के अर्थ की पड़ताल करता है, कानूनी रूप से बाध्यकारी समझौते स्थापित करने में इसके महत्व पर जोर देता है जो रोजगार के नियमों और शर्तों को परिभाषित करता है। यह खेल में शक्ति की गतिशीलता, सौदेबाजी एजेंटों की भूमिका और औपचारिक प्रक्रिया जिसके माध्यम से बातचीत की जाती है, पर प्रकाश डालता है।

जैसे-जैसे अध्याय आगे बढ़ता है, यह उन प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालता है जो सामूहिक सौदेबाजी को बातचीत के अन्य रूपों से अलग करती हैं। यह श्रमिक संघों या कर्मचारी संघों द्वारा कर्मचारियों के प्रतिनिधित्व पर जोर देता है, जो कार्यबल के हितों और चिंताओं को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके अतिरिक्त, यह अध्याय सद्भावना सौदेबाजी, पारदर्शिता और समावेशिता के सिद्धांतों को संबोधित करता है जो प्रक्रिया को रेखांकित करते हैं। बाद के खंड में, सामूहिक सौदेबाजी के उद्देश्यों पर चर्चा की गई है। यह कर्मचारियों के निष्पक्ष और न्यायसंगत व्यवहार, सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने और दोनों पक्षों के हितों को संतुलित करने के उद्देश्य को रेखांकित करता है। अध्याय जांच करता है कि सामूहिक सौदेबाजी कैसे संघर्षों के समाधान को बढ़ावा देती है, संचार चैनलों को बढ़ाती है, और सामंजस्यपूर्ण श्रम-प्रबंधन संबंधों की स्थापना में योगदान करती है।

इस अध्याय के समापन तक, पाठकों को सामूहिक सौदेबाजी की अवधारणाओं, अर्थों, विशेषताओं और उद्देश्यों की व्यापक समझ प्राप्त हो जाएगी। चाहे व्यवसायी हों, शोधकर्ता हों या श्रम संबंधों के छात्र, पाठक इस महत्वपूर्ण प्रक्रिया की पेचीदगियों को समझने के लिए आवश्यक ज्ञान से लैस होंगे। इस समझ के साथ सशस्त्र, वे सामूहिक सौदेबाजी की जटिलताओं को नेविगेट कर सकते हैं और उत्पादक और सहकारी रोजगार संबंधों की स्थापना में योगदान दे सकते हैं।

10.2 सामूहिक सौदेबाजी की अवधारणा

अनुशासन के प्रवर्तन और वैज्ञानिक शिकायत प्रबंधन प्रणाली को बनाए रखने के अलावा, सामूहिक संघर्ष के मामलों में, संगठन सामूहिक सौदेबाजी का उपयोग करते हैं, जो एक संस्थागत और संरचित दृष्टिकोण से अधिक है। सामूहिक सौदेबाजी बातचीत के माध्यम से काम करने की स्थिति और रोजगार की शर्तों को निर्धारित करने का एक तरीका है। बातचीत एक नियोक्ता और एक संगठन के एक या एक से अधिक कर्मचारियों के बीच होती है। बातचीत की प्रक्रिया दोनों पक्षों को एक समझौते पर पहुंचने में मदद करती है। सामूहिक सौदेबाजी को एक आर्थिक संस्था के रूप में माना जाता है, और ट्रेड यूनियनवाद श्रम कार्टेल बनाकर व्यापार में प्रवेश को प्रतिबंधित करता है। एलन फ्लैंडर्स (1975) ने इस अवधारणा को खारिज कर दिया और वकालत की कि सामूहिक सौदेबाजी मूल रूप से राजनीतिक है क्योंकि इसका उद्देश्य आर्थिक हित के बजाय गरिमा की रक्षा करना है।

मार्क्सवादी स्कूल सामूहिक सौदेबाजी को सामाजिक नियंत्रण का एक साधन मानता है। विपणन अवधारणा सामूहिक-सौदेबाजी प्रक्रिया को प्रबंधन और ट्रेड यूनियनों के बीच संबंधों को निर्धारित करने के लिए एक संवैधानिक प्रणाली के रूप में मानती है। अंत में, औद्योगिक संबंध अवधारणा सामूहिक सौदेबाजी को 'औद्योगिक शासन' की प्रणाली के रूप में देखती है। हालाँकि, व्यवहार में, हम किसी भी सैद्धांतिक भेद को ध्यान में नहीं रखते हैं। ये सभी

सिद्धांत तीन बुनियादी मुद्दों पर अभिसरित होते हैं, जो सामूहिक सौदेबाजी को परिभाषित करते हैं। यह (i) श्रम की बिक्री के लिए अनुबंध करने का एक साधन है, (ii) औद्योगिक सरकार का एक रूप है, और अंत में (iii) औद्योगिक संबंधों की एक प्रणाली है।

सामूहिक सौदेबाजी में, उद्देश्य मजदूरी और रोजगार की अन्य शर्तों पर एक समझौते पर पहुंचना है, जिसके बारे में पार्टियां अलग-अलग दृष्टिकोणों से शुरू करती हैं, लेकिन अंततः समझौता करने का प्रयास करती हैं। जैसे ही सौदेबाजी की जाती है, समझौते की शर्तों को अमल में लाया जाता है। दूसरी ओर, मरने वाले का प्रमुख कार्य स्वास्थ्य, सुरक्षा, कल्याण और उत्पादक दक्षता सहित सामान्य हितों के मुद्दों के संबंध में सूचना और सुझावों को साझा करने से संबंधित है।

मैरी सुर (Mary Sur) (1965) ने देखा कि सामूहिक सौदेबाजी दोनों पक्षों द्वारा उन्नत दावों के साथ शुरू होती है - संघ की मांगों और प्रबंधन द्वारा जारी किए गए बयान कि वे इन मांगों को कहाँ तक मान सकते हैं और बदले में क्या चाहते हैं। यह बाजार विक्रेता और खरीदार के बीच सौदेबाजी के समान है। वे कीमतों को उद्धृत करके शुरू करते हैं जो भिन्न हैं, प्रत्येक यह जानते हुए कि अंतिम कीमत तक पहुंचने के लिए उन्हें अंत में कुछ समायोजन करना होगा, जिस पर वे दोनों सहमत हैं।

10.3 सामूहिक सौदेबाजी: अर्थ एवं परिभाषा (Collective bargaining: Meaning and definition)

किसी निर्णय पर पहुंचने के लिए कर्मचारी और नियोक्ता के बीच औद्योगिक विवादों को इन दोनों पक्षों के बीच चर्चा और बातचीत से सुलझाया जा सकता है। इसे आमतौर पर सामूहिक सौदेबाजी के रूप में भी जाना जाता है क्योंकि दोनों पक्ष अंततः एक निर्णय का पालन करने के लिए सहमत होते हैं जो वे बहुत बातचीत और चर्चा के बाद पहुंचते हैं। नियोक्ता एवं कर्मचारियों के प्रतिनिधियों के मध्य सीधी बातचीत द्वारा स्वयं विवादों का निपटारा करने की विधि को ही सामूहिक सौदेबाजी कहते हैं। यह कम्पनी तथा संघ के प्रतिनिधियों के मध्य वेतन, कार्य के घण्टे, कार्यकारी परिस्थितियाँ, बोनस, स्वास्थ्य, सुरक्षा, श्रमिक कल्याण आदि विषयों पर नियम तथा शर्तों के निर्धारण के लिए किसी समझौते पर पहुँचने का प्रयास है।

1960 में ILO मैनुअल के अनुसार, सामूहिक सौदेबाजी को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

“रोजगार की कार्यदशाओं तथा शर्तों के अन्तर्गत किसी निष्कर्ष अथवा पारस्परिक सहमति पर पहुँचने के उद्देश्य से नियोक्ता (Employer) नियोक्ताओं का समूह अथवा एक या अधिक नियोक्ता संगठनों को एक तरफ तथा दूसरी तरफ एक या अधिक प्रतिनिधि श्रमिक संगठनों को बैठाकर पारस्परिक वार्तालाप कराना, **सामूहिक सौदेबाजी (Collective Bargaining)** कहलाता है।”

सामूहिक सौदेबाजी सम्मेलन, 1981 (संख्या 154) के अनुच्छेद 2 के अनुसार “सामूहिक सौदेबाजी” सभी वार्ताओं तक फैली हुई है जो एक नियोक्ता, नियोक्ताओं के एक समूह या एक या एक से अधिक नियोक्ता संगठनों के बीच होती है, और दूसरी ओर एक या एक से अधिक श्रमिक संगठनों के लिए

(ए) काम करने की स्थिति और रोजगार शर्तों का निर्धारण; और/या

(बी) नियोक्ताओं और श्रमिकों के बीच संबंधों को विनियमित करना; और/या

(सी) नियोक्ताओं या उनके संगठनों और श्रमिकों के संगठन या श्रमिकों के संगठनों के बीच संबंधों को विनियमित करना"।

लुइस ई० हावर्ड (Luis E. Haward) के अनुसार, "सामूहिक सौदेबाजी वस्तुतः एकजुट होने का अधिकार, सहायता का अधिकार, संगठित करने व समझौते करने का अधिकार अथवा हड़ताल करने का अधिकार है।"

बीच (Beach) के अनुसार, "सामूहिक सौदेबाजी का संबंध कर्मचारियों और नियोक्ताओं (या उनके प्रतिनिधियों) को रिपोर्ट करने वाले यूनियनों के बीच संबंधों से है। इसमें कर्मचारियों के संघ संगठन की प्रक्रिया, बातचीत प्रशासन और वेतन, काम के घंटे और ठोस आर्थिक कार्यों में बहस करने वाले कर्मचारियों की अन्य स्थितियों से संबंधित सामूहिक समझौतों की व्याख्या विवाद निपटान प्रक्रियाओं की प्रक्रिया शामिल है।"

फ्लिप्पो (Flippo) के अनुसार, "सामूहिक सौदेबाजी एक प्रक्रिया है जिसमें एक श्रमिक संगठन के प्रतिनिधि और व्यावसायिक संगठन के प्रतिनिधि मिलते हैं और एक अनुबंध या समझौते पर बातचीत करने का प्रयास करते हैं, जो कर्मचारी-नियोक्ता संघ संबंधों की प्रकृति को निर्दिष्ट करता है। सामूहिक सौदेबाजी कर्मचारियों के संगठित निकाय और आमतौर पर अधिकृत एजेंटों के माध्यम से कार्य करने वाले कर्मचारियों के एक नियोक्ता या संघ के बीच सौदेबाजी के माध्यम से रोजगार की शर्तों को तय करने का एक तरीका है। सामूहिक सौदेबाजी का सार इच्छुक पार्टियों के बीच सौदेबाजी है न कि बाहरी पार्टियों से।"

जूसिसस (Jucissous) के अनुसार, "सामूहिक सौदेबाजी एक ऐसी प्रक्रिया को संदर्भित करती है जिसके द्वारा एक ओर नियोक्ता और दूसरी ओर कर्मचारियों के प्रतिनिधि, उन शर्तों को कवर करने वाले समझौते पर पहुंचने का प्रयास करते हैं जिसके तहत कर्मचारी योगदान देंगे और उनकी सेवाओं के लिए मुआवजा दिया जाएगा।"

आरएफ होक्सी (R.F. Hoxie) के अनुसार, "सामूहिक सौदेबाजी कर्मचारियों के एक संगठित निकाय और एक नियोक्ता या नियोक्ताओं के एक संघ के बीच आमतौर पर संगठित एजेंटों के माध्यम से काम करने के बीच सौदेबाजी के माध्यम से रोजगार की शर्तों को तय करने का एक तरीका है। सामूहिक सौदेबाजी का सार हितबद्ध पक्षों के बीच सौदेबाजी है न कि बाहरी पक्षों का फरमान।

एनसाइक्लोपीडिया ऑफ सोशल साइंसेज (Encyclopedia of Social Sciences) के अनुसार "सामूहिक सौदेबाजी दो पक्षों के बीच चर्चा और बातचीत की एक प्रक्रिया है, जिनमें से एक या दोनों व्यक्तियों का एक समूह मिलकर काम कर रहा है। परिणामी सौदा नियमों और शर्तों के बारे में एक समझ है जिसके तहत एक निरंतर सेवा अधिक विशेष रूप से की जानी है, सामूहिक सौदेबाजी एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा नियोक्ता और कर्मचारियों का एक समूह काम की शर्तों पर सहमत होता है।

यूके एम्प्लॉयमेंट लॉ प्रोग्राम (UK Employment Law programme) के TULRCA 1992 के 178 (1) और (2) द्वारा सामूहिक सौदेबाजी की सबसे व्यापक परिभाषा प्रदान की गई है;

“यह निम्न में से एक या अधिक से जुड़ी बातचीत है:

- (1) रोजगार के नियम और शर्तें, या भौतिक स्थितियां जिनमें किसी कर्मचारी को काम करने की आवश्यकता होती है
- (2) एक या अधिक श्रमिकों की सगाई या गैर-सगाई, या रोजगार की समाप्ति या निलंबन या रोजगार के कर्तव्यों
- (3) श्रमिकों या श्रमिकों के समूहों के बीच कार्य का आवंटन या रोजगार के कर्तव्य
- (4) अनुशासन के मामले
- (5) एक कार्यकर्ता की सदस्यता या ट्रेड यूनियन की गैर-सदस्यता
- (6) ट्रेड यूनियनों के अधिकारियों के लिए सुविधाएं
- (7) वार्ता या परामर्श के लिए मशीनरी, और उपरोक्त मामलों से संबंधित अन्य प्रक्रियाएं, जिसमें नियोक्ताओं या नियोक्ताओं के संघों द्वारा इस तरह की बातचीत या परामर्श या ऐसी प्रक्रियाओं को पूरा करने में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करने के लिए ट्रेड यूनियन के अधिकार की मान्यता शामिल है।

10.3.1 सामूहिक सौदेबाजी की विशेषताएं

सामूहिक सौदेबाजी की कुछ मुख्य विशेषताएं हैं:

1. यह एक ग्रुप एक्शन है:

सामूहिक सौदेबाजी व्यक्तिगत कार्रवाई के विपरीत सामूहिक कार्रवाई है। समझौते के दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व उनके समूहों द्वारा किया जाता है। नियोक्ता का प्रतिनिधित्व उसके प्रतिनिधि करते हैं और दूसरी ओर; कर्मचारियों का प्रतिनिधित्व उनके ट्रेड यूनियन द्वारा किया जाता है।

2. यह एक सतत प्रक्रिया है:

सामूहिक सौदेबाजी एक सतत प्रक्रिया है और एक समझौते पर समाप्त नहीं होती है। यह प्रबंधन और ट्रेड यूनियन के बीच निरंतर और संगठित संबंध के लिए एक तंत्र प्रदान करता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो साल के 365 दिनों तक चलती है।

3. यह एक द्विदलीय प्रक्रिया है:

सामूहिक सौदेबाजी एक दो पार्टी प्रक्रिया है। दोनों पक्ष-नियोक्ता और कर्मचारी-सामूहिक रूप से कुछ कार्रवाई करते हैं। किसी तीसरे पक्ष का कोई हस्तक्षेप नहीं है। यह एक विवाद के निपटारे पर पहुंचने के लिए इसे लेने या छोड़ने के बजाय पारस्परिक रूप से दिया और लेना है।

4. यह एक प्रक्रिया है:

सामूहिक सौदेबाजी इस मायने में एक प्रक्रिया है कि इसमें कई चरण होते हैं। शुरुआती बिंदु श्रमिकों द्वारा मांगों के चार्टर की प्रस्तुति है और अंतिम चरण एक समझौते, या एक अनुबंध तक पहुंचना है जो एक उद्यम में समय-समय पर श्रम-प्रबंधन संबंधों को नियंत्रित करने वाले बुनियादी कानून के रूप में काम करेगा।

5. यह एक लचीली प्रक्रिया है ना की स्थिर है:

इसमें तरलता है। किसी समझौते पर पहुँचने के लिए कोई कठिन और तेज़ नियम नहीं है। समझौते की काफी गुंजाइश है। लेन-देन की भावना तब तक काम करती है जब तक दोनों पक्षों को स्वीकार्य अंतिम समझौता नहीं हो जाता।

6. यह काम पर औद्योगिक लोकतंत्र है:

सामूहिक सौदेबाजी औद्योगिक लोकतंत्र के सिद्धांत पर आधारित है जहां श्रमिक संघ नियोक्ता या नियोक्ताओं के साथ बातचीत में श्रमिकों का प्रतिनिधित्व करता है। औद्योगिक लोकतंत्र शासित-श्रमिकों की सहमति से श्रम की सरकार है। मनमाना एकपक्षवाद के सिद्धांत ने उद्योग में स्वशासन के लिए रास्ता दिया है। दरअसल, सामूहिक सौदेबाजी केवल एक टेबल के आसपास बैठकर वरिष्ठता, छुट्टियां और वेतन वृद्धि प्रदान करने वाले समझौते पर हस्ताक्षर करना नहीं है।

7. यह गतिशील है:

यह अपेक्षाकृत एक नई अवधारणा है, और बढ़ रही है, फैल रही है और बदल रही है। पहले यह भावनात्मक, अशांत और भावुक हुआ करता था, लेकिन अब यह वैज्ञानिक, तथ्यात्मक और व्यवस्थित है।

8. यह एक पूरक प्रक्रिया है न कि प्रतिस्पर्धी प्रक्रिया:

सामूहिक सौदेबाजी एक प्रतिस्पर्धी प्रक्रिया नहीं है, अर्थात्, श्रम और प्रबंधन एक ही वस्तु के लिए बातचीत करते समय सहयोग नहीं करते हैं। यह अनिवार्य रूप से एक पूरक प्रक्रिया है यानी, प्रत्येक पार्टी को कुछ ऐसा चाहिए जो दूसरे पक्ष के पास हो, अर्थात्, श्रम अधिक उत्पादक प्रयास कर सकता है और प्रबंधन के पास उस प्रयास के लिए भुगतान करने और उद्यम के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए इसे व्यवस्थित करने और मार्गदर्शन करने की क्षमता है।

9. यह एक कला है (It is an Art):

निम्नलिखित कारणों से सामूहिक सौदेबाजी को एक कला माना जा सकता है:

- **बातचीत कौशल:** सामूहिक सौदेबाजी में पारस्परिक रूप से स्वीकार्य समझौते तक पहुंचने के लिए नियोक्ता और ट्रेड यूनियन के बीच बातचीत शामिल है। बातचीत के लिए उत्कृष्ट संचार कौशल, सक्रिय रूप से सुनने की क्षमता और दूसरों को मनाने और प्रभावित करने की क्षमता की आवश्यकता होती है। कुशल वार्ताकार जटिल समस्याओं का रचनात्मक समाधान खोजने में निपुण होते हैं, जिसके लिए विश्लेषणात्मक और पारस्परिक कौशल के संयोजन की आवश्यकता होती है।
- **रचनात्मकता:** सफल सामूहिक सौदेबाजी में अक्सर उन मुद्दों का रचनात्मक समाधान खोजना शामिल होता है जो असंभव लग सकते हैं। रचनात्मक समाधान में मौद्रिक और गैर-मौद्रिक लाभों का संयोजन शामिल हो सकता है, जैसे लचीले काम के घंटे, दूरसंचार और नौकरी-साझाकरण। इन समाधानों को विकसित करने के लिए रचनात्मकता और कल्पना की आवश्यकता होती है।

- **रणनीतिक सोच:** सामूहिक सौदेबाजी के लिए रणनीतिक सोच और योजना की आवश्यकता होती है। एक कुशल वार्ताकार को दोनों पक्षों की ताकत और कमजोरियों की पहचान करने, संभावित बाधाओं का अनुमान लगाने और सौदेबाजी की प्रक्रिया की विशिष्ट परिस्थितियों के अनुरूप बातचीत की रणनीति विकसित करने में सक्षम होना चाहिए।
- **भावनाओं को प्रबंधित करने की क्षमता:** सामूहिक सौदेबाजी भावनात्मक रूप से आवेशित प्रक्रिया हो सकती है। एक कुशल वार्ताकार को अपनी भावनाओं को प्रबंधित करने और दबाव में शांत रहने में सक्षम होना चाहिए। उन्हें अपनी भावनाओं को प्रबंधित करने और पारस्परिक रूप से स्वीकार्य समाधान खोजने की दिशा में काम करने में दूसरों की मदद करने में भी सक्षम होना चाहिए।

10.4 सामूहिक सौदेबाजी के उद्देश्य

सामूहिक सौदेबाजी नियोक्ताओं (या उनके प्रतिनिधियों) और कर्मचारियों (या उनके प्रतिनिधियों), आमतौर पर श्रमिक संघों के बीच बातचीत की प्रक्रिया को संदर्भित करती है, ताकि रोजगार के नियम और शर्तें स्थापित की जा सकें। सामूहिक सौदेबाजी के प्राथमिक उद्देश्य इस प्रकार हैं:

1. **श्रमिक प्रतिनिधित्व:** सामूहिक सौदेबाजी कर्मचारियों को यूनियन या अन्य श्रम संगठनों द्वारा प्रतिनिधित्व करने के लिए एक मंच प्रदान करती है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि काम करने की स्थिति, मजदूरी, लाभ और रोजगार से संबंधित अन्य मामलों को प्रभावित करने वाले निर्णयों में श्रमिकों की आवाज हो।
2. **मजदूरी और लाभों पर बातचीत करना:** सामूहिक सौदेबाजी का एक मुख्य उद्देश्य कर्मचारियों के लिए उचित वेतन और लाभों पर बातचीत करना है। इसमें मजदूरी दर, वेतन संरचना, वेतन वृद्धि, ओवरटाइम दर, बोनस, सेवानिवृत्ति योजना, स्वास्थ्य सेवा कवरेज, अवकाश और अवकाश नीतियां, और अन्य अनुषंगी लाभ निर्धारित करना शामिल है।
3. **काम करने की स्थिति:** सामूहिक सौदेबाजी का उद्देश्य काम की परिस्थितियों को स्थापित करना और सुधारना है, जिसमें काम के घंटे, विश्राम विराम, शिफ्ट शेड्यूल, नौकरी की सुरक्षा, कार्यस्थल की सुरक्षा, व्यावसायिक स्वास्थ्य और एर्गोनोमिक मानकों जैसे मुद्दे शामिल हैं। यह सुनिश्चित करना चाहता है कि कर्मचारियों के पास एक सुरक्षित और अनुकूल कार्य वातावरण हो।
4. **नौकरी की सुरक्षा:** सामूहिक सौदेबाजी अक्सर उन प्रावधानों पर बातचीत करने पर केंद्रित होती है जो कर्मचारियों की नौकरी की सुरक्षा की रक्षा करते हैं, जैसे कि छंटनी और वापस बुलाने की प्रक्रिया, वरिष्ठता अधिकार, मनमानी बर्खास्तगी के खिलाफ सुरक्षा, और शिकायतों और अनुशासनात्मक कार्रवाइयों को संभालने की प्रक्रिया। इसका उद्देश्य कर्मचारियों को अनुचित रोजगार प्रथाओं के खिलाफ स्थिरता और सुरक्षा प्रदान करना है।
5. **शिकायत समाधान:** सामूहिक सौदेबाजी में कार्यस्थल विवादों और शिकायतों को संबोधित करने और हल करने के लिए प्रक्रियाएं स्थापित करना शामिल है। इसमें कर्मचारियों और नियोक्ताओं के बीच संघर्षों को हल

करने के लिए तंत्र स्थापित करना शामिल है, जैसे कि मध्यस्थता या मध्यस्थता प्रक्रियाएं, ताकि उचित उपचार और संघर्षों का प्रभावी समाधान सुनिश्चित किया जा सके।

6. **कैरियर विकास और प्रशिक्षण:** सामूहिक सौदेबाजी कैरियर के विकास के अवसरों, प्रशिक्षण कार्यक्रमों, पदोन्नति और उन्नति के मानदंडों से संबंधित मुद्दों को भी संबोधित कर सकती है। इसका उद्देश्य कर्मचारियों को कौशल वृद्धि, पेशेवर विकास और करियर में उन्नति के समान अवसर प्रदान करना है।
7. **गैर-भेदभाव और समान अवसर:** सामूहिक सौदेबाजी अक्सर कार्यस्थल में गैर-भेदभाव और समान अवसर प्रथाओं को बढ़ावा देने पर केंद्रित होती है। इसका उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सभी कर्मचारियों के साथ उनकी नस्ल, लिंग, आयु, अक्षमता, धर्म या अन्य संरक्षित विशेषताओं की परवाह किए बिना उचित और समान व्यवहार किया जाए।
8. **कार्य-जीवन संतुलन:** कुछ मामलों में, सामूहिक सौदेबाजी कार्य-जीवन संतुलन के मुद्दों को संबोधित करती है, जैसे लचीली कार्य व्यवस्था, माता-पिता की छुट्टी की नीतियां, चाइल्डकेअर समर्थन और अन्य उपाय जो कर्मचारियों की भलाई और जीवन की गुणवत्ता को बढ़ावा देते हैं।

कुल मिलाकर, सामूहिक सौदेबाजी का उद्देश्य कर्मचारियों के हितों की रक्षा करना और उन्हें आगे बढ़ाना है, रोजगार के उचित नियमों और शर्तों पर बातचीत करना, सामंजस्यपूर्ण श्रम संबंधों को बढ़ावा देना और नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच पारस्परिक रूप से लाभप्रद कार्य संबंध बनाना है।

10.5 सारांश

सामूहिक सौदेबाजी नियोक्ताओं (या उनके प्रतिनिधियों) और कर्मचारियों (आमतौर पर श्रमिक संघों द्वारा प्रतिनिधित्व) के बीच रोजगार के नियमों और शर्तों को स्थापित करने के लिए एक बातचीत प्रक्रिया है। मुख्य उद्देश्य पारस्परिक रूप से लाभप्रद कार्य संबंध बनाते हुए कर्मचारियों के हितों की रक्षा करना और उन्हें आगे बढ़ाना है। सामूहिक सौदेबाजी कर्मचारियों को उनके काम करने की स्थिति और रोजगार की शर्तों को प्रभावित करने वाले फैसलों में आवाज उठाने के लिए एक मंच प्रदान करती है। इसका उद्देश्य उचित वेतन, वेतन संरचना, लाभ और अन्य मुआवजे से संबंधित मामलों पर बातचीत करना है। सुरक्षित और अनुकूल कार्य वातावरण सुनिश्चित करने के लिए सामूहिक सौदेबाजी काम के घंटे, विश्राम विराम, कार्यस्थल सुरक्षा और व्यावसायिक स्वास्थ्य जैसे मुद्दों को संबोधित करती है। यह कर्मचारियों को मनमानी बर्खास्तगी, छंटनी प्रक्रियाओं और वरिष्ठता अधिकारों से बचाने के लिए प्रावधान स्थापित करता है। यह कार्यस्थल विवादों और शिकायतों को हल करने के लिए प्रक्रियाओं को स्थापित करता है, उचित उपचार और संघर्ष समाधान सुनिश्चित करता है। यह कर्मचारियों की विशेषताओं की परवाह किए बिना कार्यस्थल में गैर-भेदभाव और समान अवसर प्रथाओं को बढ़ावा देता है। कुछ मामलों में, यह कार्य-जीवन संतुलन के मुद्दों को संबोधित करता है, जैसे लचीली कार्य व्यवस्था और माता-पिता की छुट्टी के लिए समर्थन। कुल मिलाकर, सामूहिक सौदेबाजी का उद्देश्य नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच सामंजस्यपूर्ण श्रम संबंधों को बनाए रखते हुए रोजगार की उचित और न्यायसंगत शर्तें स्थापित करना है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न 1. सामूहिक सौदेबाजी क्या है, इसे परिभाषित कीजिए?

प्रश्न 2. सामूहिक सौदेबाजी की विशेषताओं पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए?

प्रश्न 3. सामूहिक सौदेबाजी के क्या उद्देश्य हैं, इसकी व्याख्या कीजिए?

10.6 परिभाषिक शब्दावली

द्विपक्षीय: शब्द "द्विपक्षीय" दो पार्टियों या संस्थाओं से जुड़ी स्थिति या संबंध को संदर्भित करता है।

प्रतिनिधि: शब्द "प्रतिनिधि" एक ऐसे व्यक्ति या संस्था को संदर्भित करता है जो दूसरों की ओर से कार्य करता है या किसी समूह या व्यक्तियों के हितों, विचारों या अधिकारों का प्रतिनिधित्व करता है। विभिन्न संदर्भों में, प्रतिनिधि उन व्यक्तियों या समूहों की ओर से वकालत करने, बातचीत करने या निर्णय लेने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं जिनका वे प्रतिनिधित्व करते हैं।

10.7 संदर्भित पुस्तकें

1. सामूहिक सौदेबाजी: एक नीति गाइड / अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय, शासन और त्रिपक्षीय विभाग (शासन), कार्य की शर्तें और गुणवत्ता विभाग (कार्य गुणवत्ता) - जिनेवा: ILO, 2015
2. भारत में सामूहिक सौदेबाजी, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ- डॉ. बालेश्वर पांडे, 1983
3. सामूहिक सौदेबाजी: परिप्रेक्ष्य और अभ्यास, संगम बुक पब्लिकेशन- बी.आर.पाटिल, 1993

10.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

प्रश्न 1. सामूहिक सौदेबाजी क्या है, इसे परिभाषित कीजिए?

प्रश्न 2. सामूहिक सौदेबाजी की विशेषताओं पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए?

[illegible]

प्रश्न 3. सामूहिक सौदेबाजी के क्या उद्देश्य हैं, इसकी व्याख्या कीजिए?

इकाई 11 : सामूहिक सौदेबाजी के प्रकार

इकाई की रूपरेखा

- 11.0 इकाई के उद्देश्य
- 11.1 परिचय
- 11.2 सामूहिक सौदेबाजी के प्रकार
- 11.3 सामूहिक सौदेबाजी के लिए आवश्यक शर्तें
 - 11.3.1 प्रभावी सामूहिक सौदेबाजी के लिए पूर्वापेक्षाएँ
- 11.4 सामूहिक सौदेबाजी के लाभ
- 11.5 सारांश
- 11.6 परिभाषिक शब्दावली
- 11.7 संदर्भित पुस्तकें
- 11.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 इकाई के उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थियों, प्रस्तुत इकाई में सामूहिक सौदेबाजी के विभिन्न उद्देश्य पर विस्तृत रूप से चर्चा की गई है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप लोग सामूहिक सौदेबाजी के निम्नलिखित पहलू के बारे में जानकारी प्राप्त कर पाएंगे -

- सामूहिक सौदेबाजी के प्रकारों को जान सकेंगे;
- सामूहिक सौदेबाजी के लिए आवश्यक शर्तों को समझ सकेंगे;
- प्रभावी सामूहिक सौदेबाजी के लिए क्या पूर्वापेक्षाएँ हैं इसको जान सकेंगे;
- सामूहिक सौदेबाजी के लाभों के बारे में जानकारी प्राप्त सकेंगे।

11.1 परिचय

श्रम संबंधों के क्षेत्र में सामूहिक सौदेबाजी एक महत्वपूर्ण तत्व है, जो नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच पारस्परिक रूप से लाभकारी समझौतों की स्थापना के लिए आधारशिला के रूप में कार्य करता है। यह अध्याय इस महत्वपूर्ण प्रक्रिया की व्यापक समझ प्रदान करते हुए सामूहिक सौदेबाजी के विभिन्न प्रकारों, लाभों और अनिवार्यताओं पर चर्चा करता है।

अध्याय विभिन्न प्रकार की सामूहिक सौदेबाजी की खोज से शुरू होता है। यह वितरणात्मक सौदेबाजी की जांच करता है, जहां पार्टियां सीमित संसाधनों को विभाजित करने के लिए प्रतिस्पर्धी वार्ताओं में संलग्न होती हैं। इसके बाद एकीकृत सौदेबाजी की जांच की जाती है, जो मूल्य बनाने और जीत-जीत के परिणाम प्राप्त करने के उद्देश्य से इसके

सहयोगी दृष्टिकोण पर प्रकाश डालती है। इसके अलावा, उत्पादकता सौदेबाजी पर चर्चा की जाती है, जो संगठनों के भीतर दक्षता और प्रदर्शन बढ़ाने के अपने उद्देश्य पर जोर देती है।

अध्याय के अगले भाग में सामूहिक सौदेबाजी के लाभों पर चर्चा की गई है। यह उन फायदों को स्पष्ट करता है जो कर्मचारियों, नियोक्ताओं और समाज को इस प्रक्रिया से प्राप्त होते हैं। कर्मचारियों के लिए बेहतर कामकाजी परिस्थितियों और उचित वेतन से लेकर स्थिर श्रम-प्रबंधन संबंधों और कम संघर्ष तक, अध्याय विभिन्न हितधारकों पर सामूहिक सौदेबाजी के सकारात्मक प्रभाव पर रोशनी डालता है। इसके अतिरिक्त, यह कार्यस्थल में इकिवटी, आवाज और भविष्यवाणी को बढ़ावा देने में सामूहिक सौदेबाजी की भूमिका पर प्रकाश डालता है।

अध्याय तब सामूहिक सौदेबाजी की अनिवार्यता को रेखांकित करता है। यह कर्मचारियों के हितों की वकालत करने में श्रमिक संघों या कर्मचारी संघों की भूमिका पर जोर देते हुए प्रतिनिधित्व के महत्व को रेखांकित करता है। इसके अलावा, यह पारस्परिक रूप से स्वीकार्य समझौतों तक पहुंचने के लिए दोनों पक्षों के ईमानदार प्रयासों की आवश्यकता पर बल देते हुए सद्भावना वार्ता के महत्व पर चर्चा करता है। अध्याय सामूहिक सौदेबाजी की स्वैच्छिक प्रकृति और संघ की स्वतंत्रता के सिद्धांत को भी संबोधित करता है जो इसे रेखांकित करता है। अंत में, यह सामूहिक सौदेबाजी की प्रक्रिया में बातचीत और समझौते की केंद्रीयता को रेखांकित करता है।

इस अध्याय के अंत तक, पाठकों को विभिन्न प्रकार की सामूहिक सौदेबाजी, विभिन्न हितधारकों को मिलने वाले लाभों और इस महत्वपूर्ण प्रक्रिया को रेखांकित करने वाले आवश्यक तत्वों की व्यापक समझ प्राप्त हो जाएगी। चाहे शोधकर्ता, व्यवसायी, या श्रम संबंधों के छात्र हों, पाठक सामूहिक सौदेबाजी की जटिलताओं को नेविगेट करने और निष्पक्ष और उत्पादक रोजगार संबंधों की स्थापना में योगदान करने के लिए आवश्यक ज्ञान से लैस होंगे।

11.2 सामूहिक सौदेबाजी के प्रकार

इसे पाँच प्रमुख प्रकारों में वर्गीकृत किया जा सकता है -

1. **वितरणात्मक सौदेबाजी:** वितरणात्मक सौदेबाजी एक बातचीत की रणनीति है जहां शामिल पार्टियां एक निश्चित मात्रा में संसाधनों या मूल्य को विभाजित और वितरित करने के लिए एक प्रतिस्पर्धी प्रक्रिया में संलग्न होती हैं। वितरणात्मक सौदेबाजी में, अंतर्निहित धारणा यह है कि एक सीमित पाई है, और एक पक्ष द्वारा प्राप्त कोई भी लाभ दूसरे पक्ष की कीमत पर आता है। प्राथमिक ध्यान रियायतों को कम करते हुए और व्यक्तिगत लाभ को अधिकतम करते हुए स्वयं के लिए सर्वोत्तम संभव परिणाम प्राप्त करने पर है।

वितरणात्मक सौदेबाजी में, पार्टियों के हित अक्सर सीधे संघर्ष में दिखाई देते हैं, और बातचीत की प्रक्रिया प्रतिस्पर्धी और स्थितिगत हो सकती है। प्रत्येक पक्ष एक प्रारंभिक स्थिति अपनाता है और पारस्परिक रूप से स्वीकार्य समझौते तक पहुंचने के लिए रियायतें, प्रस्ताव और प्रति-प्रस्ताव करता है। लाभ प्राप्त करने के लिए झांसा देना, जानकारी छिपाना या अत्यधिक दबाव डालने जैसी युक्तियों को नियोजित किया जा सकता है। वितरण सौदेबाजी की प्रमुख विशेषताओं में एक निश्चित पाई की धारणा, एक प्रतिस्पर्धी बातचीत का माहौल

और मूल्य, वेतन या संसाधनों के वितरण जैसे मूर्त मुद्दों पर जोर शामिल है। यह उन स्थितियों में एक सामान्य दृष्टिकोण है जहां संसाधन सीमित हैं, और एक स्पष्ट जीत-हार गतिशील है।

हालांकि, यह ध्यान रखना महत्वपूर्ण है कि वितरण सौदेबाजी कई बातचीत रणनीतियों में से एक है। हालांकि यह कुछ स्थितियों में उपयुक्त हो सकता है, अन्य रणनीतियाँ जैसे कि एकीकृत सौदेबाजी, जो मूल्य बनाने और पारस्परिक लाभ प्राप्त करने पर केंद्रित है, अधिक सहयोगी और स्थायी परिणाम प्राप्त कर सकती हैं। वितरण सौदेबाजी के सिद्धांतों और गतिशीलता को समझने से वार्ताकारों को प्रतिस्पर्धी परिदृश्यों को नेविगेट करने और पारस्परिक रूप से स्वीकार्य समझौते खोजने में मदद मिल सकती है।

2. **एकीकृत सौदेबाजी:** एकीकृत सौदेबाजी एक बातचीत की रणनीति है जो सहयोग, समस्या-समाधान और शामिल सभी पक्षों के लिए मूल्य बनाने पर केंद्रित है। वितरणात्मक सौदेबाजी के विपरीत, जो बातचीत को एक शून्य-राशि के खेल के रूप में देखता है, एकीकृत सौदेबाजी आपसी लाभ के अवसरों की पहचान करने और उन्हें भुनाने का प्रयास करती है।

एकीकृत सौदेबाजी में, पार्टियां अपनी स्थिति के तहत हितों, जरूरतों और चिंताओं का पता लगाने के लिए मिलकर काम करती हैं। जोर एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझने और सभी पक्षों के हितों को संबोधित करने वाले रचनात्मक समाधान खोजने पर है। यह दृष्टिकोण मानता है कि ऐसे कई समाधान हो सकते हैं जो सरल व्यापार-नापसंद से परे जाते हैं।

एकीकृत सौदेबाजी को विभिन्न संदर्भों में लागू किया जा सकता है, जैसे व्यापार वार्ता, श्रम विवाद और पारस्परिक संघर्ष। मूल्य सृजित करने, सामान्य जमीन तलाशने और संबंधों के निर्माण पर ध्यान केंद्रित करके, एकीकृत सौदेबाजी बातचीत के लिए एक अधिक सहकारी और स्थायी दृष्टिकोण को बढ़ावा देती है, जिससे ऐसे परिणाम निकलते हैं जो इसमें शामिल सभी पक्षों को लाभान्वित करते हैं।

3. **उत्पादकता सौदेबाजी:** उत्पादकता सौदेबाजी एक बातचीत प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य नियोक्ताओं और कर्मचारियों दोनों की चिंताओं और हितों को संबोधित करते हुए एक संगठन के भीतर उत्पादकता में सुधार करना है। इसमें कार्यकुशलता, आउटपुट और समग्र प्रदर्शन को बढ़ाने वाले उपायों को लागू करने पर केंद्रित चर्चा और समझौते शामिल हैं। उत्पादकता सौदेबाजी का प्राथमिक उद्देश्य प्रक्रिया में सुधार, तकनीकी प्रगति, कौशल विकास कार्यक्रम, कार्य पुनर्गठन, या कार्य प्रथाओं में परिवर्तन जैसे विभिन्न माध्यमों से उत्पादकता बढ़ाने के तरीके खोजना है। इन उपायों पर आम तौर पर नियोक्ताओं (या उनके प्रतिनिधियों) और कर्मचारियों के बीच बातचीत और सहमति होती है, जिसका अक्सर श्रमिक संघों द्वारा प्रतिनिधित्व किया जाता है।

उत्पादकता सौदेबाजी में अक्सर एक सहयोगी दृष्टिकोण शामिल होता है, जिसमें नियोक्ता और कर्मचारी मिलकर काम करते हैं ताकि उत्पादकता में वृद्धि करने वाली रणनीतियों की पहचान की जा सके और उन्हें लागू किया जा सके। इसमें संयुक्त समस्या-समाधान, सूचना और विचारों को साझा करना और दोनों पक्षों की सक्रिय भागीदारी शामिल हो सकती है। उत्पादकता बढ़ाने के प्रयासों के बदले में, कर्मचारी या श्रमिक संघ रोजगार के नियमों और शर्तों में कुछ रियायतों या संशोधनों के लिए सहमत हो सकते हैं। इन रियायतों में काम के घंटे, वेतन

संरचना, लाभ, नौकरी की भूमिका या रोजगार के अन्य पहलुओं में बदलाव शामिल हो सकते हैं। इसका एक पारस्परिक रूप से लाभकारी समझौता बनाना है जहां दोनों पक्ष उत्पादकता में सुधार में योगदान करते हैं और इससे लाभान्वित होते हैं।

उत्पादकता सौदेबाजी अक्सर एक दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य लेती है, यह पहचानते हुए कि निरंतर उत्पादकता वृद्धि के लिए निवेश, प्रशिक्षण और चल रहे सुधार प्रयासों की आवश्यकता हो सकती है। कार्यान्वित उपायों की प्रभावशीलता का आकलन करने और आवश्यक समायोजन करने के लिए निगरानी और मूल्यांकन तंत्र स्थापित किया जा सकता है।

इस प्रकार की सौदेबाजी आमतौर पर उन स्थितियों में नियोजित की जाती है जहां संगठन दक्षता में सुधार करना, लागत कम करना या प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाना चाहते हैं। इसके लिए सहयोग, सहयोग और जीत-जीत समाधान खोजने पर ध्यान देने की आवश्यकता है जो कर्मचारियों की भलाई और नौकरी की सुरक्षा सुनिश्चित करते हुए उत्पादकता को बढ़ाते हैं।

4. **समग्र सौदेबाजी:** "समग्र सौदेबाजी" एक बातचीत प्रक्रिया को संदर्भित करता है जहां सामूहिक सौदेबाजी में एक साथ कई मुद्दों या घटकों को संबोधित किया जाता है। इसमें रोजगार संबंधों के विभिन्न पहलुओं पर चर्चा और सौदेबाजी शामिल है, जैसे मजदूरी, काम के घंटे, लाभ, नौकरी की सुरक्षा और रोजगार के अन्य नियम और शर्तें, सभी एक ही बातचीत के ढांचे के भीतर।

समग्र सौदेबाजी में, प्रत्येक मुद्दे को अलग-अलग या अलग-अलग संबोधित करने के बजाय, सभी विभिन्न तत्वों को एक व्यापक पैकेज के परस्पर जुड़े भागों के रूप में माना जाता है। यह दृष्टिकोण मानता है कि रोजगार संबंध के विभिन्न पहलू आपस में जुड़े हुए हैं और एक दूसरे को प्रभावित कर सकते हैं।

समग्र सौदेबाजी में संलग्न होने से, नियोक्ता और श्रमिक संघ या कर्मचारी प्रतिनिधियों दोनों के पास दोनों पक्षों के हितों को संतुष्ट करने वाले समग्र समझौते तक पहुंचने के लिए विभिन्न मुद्दों पर बातचीत और व्यापार बंद करने का अवसर होता है। यह व्यापक तस्वीर और विभिन्न तत्वों के बीच परस्पर क्रिया पर विचार करते हुए वार्ता के लिए अधिक समग्र दृष्टिकोण की अनुमति देता है।

5. **रियायती सौदेबाजी:** रियायती सौदेबाजी सामूहिक सौदेबाजी में एक समझौता दृष्टिकोण है जहां एक पक्ष, आम तौर पर कर्मचारी या उनके प्रतिनिधि, दूसरे पक्ष, आमतौर पर नियोक्ता या प्रबंधन की चिंताओं या मांगों को पूरा करने के लिए रियायतें देने या कुछ लाभों या अधिकारों को छोड़ने के लिए सहमत होते हैं। इसमें अन्य विचारों के बदले समझौता करना और कम अनुकूल शर्तों को स्वीकार करना शामिल है। रियायती सौदेबाजी में, रियायत देने वाली पार्टी विभिन्न परिवर्तनों के लिए सहमत हो सकती है, जैसे कि कम वेतन स्वीकार करना, कम लाभ, काम की परिस्थितियों में बदलाव, या नौकरी सुरक्षा प्रावधानों में बदलाव। ये रियायतें आम तौर पर आर्थिक चुनौतियों, वित्तीय कठिनाइयों, या नियोक्ता द्वारा सामना किए जाने वाले प्रतिस्पर्धी दबावों को दूर करने की आवश्यकता के जवाब में दी जाती हैं।

रियायती सौदेबाजी के कारण अलग-अलग हो सकते हैं। यह उद्योग में मंदी, वित्तीय घाटे, या संगठन की प्रतिस्पर्धात्मकता को बनाए रखने या सुधारने की आवश्यकता की प्रतिक्रिया हो सकती है। कर्मचारियों या उनके प्रतिनिधियों द्वारा की गई रियायतों को अक्सर नियोक्ता को चुनौतियों से उबरने और नौकरियों या व्यवसाय की व्यवहार्यता को बनाए रखने में मदद करने के लिए आवश्यक त्याग के रूप में देखा जाता है। रियायती सौदेबाजी एक विवादास्पद और कठिन प्रक्रिया हो सकती है, क्योंकि इसमें व्यापार-नापसंद और समझौते शामिल होते हैं जो कर्मचारियों की आजीविका और भलाई को प्रभावित कर सकते हैं। इसके लिए नौकरी की सुरक्षा, वेतन, लाभ और काम करने की स्थिति पर संभावित अल्पकालिक और दीर्घकालिक प्रभावों के सावधानीपूर्वक विचार और मूल्यांकन की आवश्यकता है।

रियायती समझौतों पर बातचीत के लिए प्रभावी संचार, विश्वास-निर्माण और दोनों पक्षों के सामने आने वाली चुनौतियों की साझा समझ की आवश्यकता होती है। नियोक्ता की जरूरतों और कर्मचारियों की भलाई के बीच संतुलन खोजने पर ध्यान दिया जाता है, जबकि यह सुनिश्चित किया जाता है कि रियायत भी उचित हो। रियायती सौदेबाजी अक्सर एक अस्थायी या असाधारण दृष्टिकोण होता है, जिसे चुनौतीपूर्ण समय के दौरान या ऐसी स्थितियों में नियोजित किया जाता है जहां नियोक्ता की वित्तीय स्थिरता दांव पर होती है। दोनों पक्षों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वे पारदर्शिता, खुली बातचीत, और कर्मचारियों के अधिकारों और हितों की रक्षा करते हुए संगठन को बनाए रखने में मदद करने वाले समाधान खोजने के लिए साझा प्रतिबद्धता के साथ रियायती सौदेबाजी करें।

यह ध्यान देने योग्य है कि रियायती सौदेबाजी विवादास्पद हो सकती है, और रियायतें देने का निर्णय कर्मचारियों या उनके प्रतिनिधियों द्वारा सावधानीपूर्वक मूल्यांकन किया जाना चाहिए, उनके सदस्यों पर संभावित प्रभाव और श्रम-प्रबंधन संबंधों के समग्र दीर्घकालिक प्रभाव को ध्यान में रखते हुए।

11.3 सामूहिक सौदेबाजी के लिए आवश्यक शर्तें

सामूहिक सौदेबाजी के लिए आवश्यक शर्तें - राष्ट्रीय श्रम आयोग द्वारा अनुशंसित

ए. फ़्लैंडर्स के अनुसार, सामूहिक सौदेबाजी के व्यवहार्य प्रक्रिया के रूप में जीवित रहने से पहले कुछ शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए। ये-

- पार्टियों को पर्याप्त मात्रा में संगठन प्राप्त करना चाहिए;
- पारस्परिक मान्यता, पार्टियों को एक दूसरे के साथ समझौतों में प्रवेश करने के लिए तैयार रहना चाहिए;
- समझौते आमतौर पर उन लोगों द्वारा देखे और लागू किए जाने चाहिए जिन पर वे लागू होते हैं।

सामूहिक सौदेबाजी का संबंध संगठित निकायों के बीच है जो 19वीं शताब्दी में श्रमिकों और नियोक्ताओं के बीच हुए रोजगार के अनुबंध से अलग है। सामूहिक सौदेबाजी के माध्यम से श्रमिकों के हितों की रक्षा और बढ़ावा देने के लिए श्रमिकों के संगठन या ट्रेड यूनियनों का गठन किया जाता है।

जब तक ट्रेड यूनियनों संगठनात्मक और आर्थिक रूप से कमजोर रहती हैं, तब तक नियोक्ताओं के साथ सौदेबाजी करने की उनकी क्षमता कमजोर और क्षीण होती है। सौदेबाजी में श्रमिकों की प्रभावशीलता उनकी संगठनात्मक ताकत पर निर्भर करती है।

नियोक्ताओं, श्रमिकों और उनके ट्रेड यूनियनों को यह महसूस करना चाहिए कि एक सफल सामूहिक सौदेबाजी संबंध के लिए उन्हें काफी हद तक आम सहमति, समर्थन और सहयोग विकसित करना चाहिए। उन्हें एक-दूसरे को पहचानना चाहिए और यह भी पहचानना चाहिए कि उनके लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए उनके बीच समायोजन और समायोजन आवश्यक है।

अगली शर्त समझौते के पीछे प्रतिबंधों से संबंधित है और साथ ही आवश्यक प्रतिबंधों से समझौते में शामिल रोजगार संबंध के नियमों का पालन सुनिश्चित होता है। इस संबंध में मुख्य मुद्दा यह है कि क्या पार्टियां स्वयं नियमों का पालन करती हैं या वे किसी तीसरे पक्ष - सरकार की मदद लेंगी।

इन पूर्व-आवश्यकताओं के संदर्भ में, सामूहिक सौदेबाजी विभिन्न देशों में शामिल पार्टियों के संगठनात्मक विकास के विभिन्न चरणों में, आपसी मान्यता की प्रकृति और सीमा और समझौतों के पालन को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक प्रतिबंधों पर अभ्यास किया जाता है।

1969 में राष्ट्रीय श्रम आयोग ने समस्या पर विचार करने के बाद निम्नलिखित सिफारिशें कीं-

- (1) औद्योगिक संबंधों में विशेष रूप से औद्योगिक विवादों के निपटारे में सरकारी हस्तक्षेप को न्यूनतम संभव सीमा तक धीरे-धीरे कम किया जाना चाहिए। विवादों के अनिवार्य अधिनिर्णय का उपयोग केवल अंतिम उपाय के रूप में किया जाना चाहिए।
- (2) यूनियनों के पंजीकरण को अनिवार्य बनाने, यूनियन सदस्यता शुल्क में वृद्धि करने, और यूनियन कार्यकारी और पदाधिकारियों के बीच बाहरी लोगों की उपस्थिति को कम करने के लिए 1926 के ट्रेड यूनियन अधिनियम में संशोधन करके ट्रेड यूनियनों को संगठनात्मक और वित्तीय दोनों रूप से मजबूत किया जाना चाहिए। पंजीकरण के लिए आवेदन करने वाले संघ के संबंध में सदस्यों की न्यूनतम संख्या में वृद्धि करना।
- (3) कानूनी प्रावधान या तो एक अलग कानून द्वारा या मौजूदा कानून में संशोधन करके बनाया जा सकता है-
 - ट्रेड यूनियनों की अनिवार्य मान्यता और सौदेबाजी एजेंटों के रूप में यूनियनों का प्रमाणन।
 - अनुचित श्रम प्रथाओं का निषेध और दंड।
 - नियोक्ताओं और यूनियनों दोनों द्वारा अच्छे विश्वास में सौदेबाजी।
 - सामूहिक समझौतों पर कानूनी वैधता और वैधता प्रदान करना।

श्रम पर राष्ट्रीय आयोग ने निम्नलिखित सिफारिशें की:

1. **अच्छा विश्वास:** कुछ राज्यों को छोड़कर यूनियनों की वैधानिक मान्यता की व्यवस्था के अभाव में और नियोक्ताओं और श्रमिकों को 'सद्भावना' में सौदेबाजी करने की आवश्यकता वाले प्रावधानों के अभाव में, यह

कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि सामूहिक समझौतों तक पहुँचने से हमारे देश में बहुत प्रगति नहीं हुई है। बहरहाल, सामूहिक समझौतों का रिकॉर्ड उतना असंतोषजनक नहीं रहा, जितना कि आम तौर पर माना जाता है। एक व्यापक क्षेत्र में इसका विस्तार निश्चित रूप से वांछनीय है।

2. **अधिनिर्णय:** जोर में बदलाव और सामूहिक सौदेबाजी के लिए अधिक से अधिक गुंजाइश और निर्भरता का मामला है। सामूहिक सौदेबाजी की प्रणाली द्वारा अधिनिर्णयन के स्थान पर अचानक परिवर्तन की न तो आवश्यकता है और न ही यह व्यावहारिक है। प्रक्रिया धीरे-धीरे होनी चाहिए। औद्योगिक विवादों को निपटाने की प्रक्रिया में इसे प्रधानता प्राप्त करने की घोषणा करके सामूहिक सौदेबाजी की ओर बढ़ने की शुरुआत करनी होगी।
3. **अनुकूल स्थिति:** सामूहिक सौदेबाजी को बढ़ावा देने के लिए स्थितियाँ बनानी होंगी। उनमें से सबसे महत्वपूर्ण एकमात्र सौदेबाजी एजेंट के रूप में एक प्रतिनिधि संघ की वैधानिक मान्यता है। औद्योगिक संबंधों की समग्र योजना में हड़ताल/तालाबंदी के स्थान को परिभाषित करने की आवश्यकता है; हड़ताल/तालाबंदी के अधिकार के बिना सामूहिक सौदेबाजी नहीं हो सकती।

11.3.1 प्रभावी सामूहिक सौदेबाजी के लिए पूर्वापेक्षाएँ

सामूहिक सौदेबाजी नियोक्ताओं और कर्मचारियों के बीच संबंधों को विनियमित करने का एक महत्वपूर्ण तरीका है। सामूहिक सौदेबाजी में कर्मचारियों और नियोक्ताओं के बीच लिखित अनुबंधों की बातचीत, प्रशासन और प्रवर्तन शामिल है। सामूहिक सौदेबाजी में श्रम-प्रबंधन संघर्षों को हल करने की प्रक्रिया भी शामिल है। सामूहिक सौदेबाजी नियोक्ताओं और कर्मचारियों द्वारा संयुक्त निर्णय लेने की प्रक्रिया है।

इसलिए, इसकी प्रभावशीलता उनके दृष्टिकोण और उस प्रासंगिक वातावरण पर निर्भर करती है जिसमें सामूहिक सौदेबाजी होती है। यदि ये कारक अनुकूल हैं, तो औद्योगिक विवादों के उद्भव को रोकने के लिए सामूहिक सौदेबाजी करना एक अच्छा तंत्र हो सकता है।

प्रभावी सामूहिक सौदेबाजी के लिए पूर्वापेक्षाएँ हैं: -

- (i) **समान सौदेबाजी की शक्ति** - ट्रेड यूनियन और प्रबंधन के बीच रचनात्मक परामर्श तभी संभव है जब दो पक्षों की सौदेबाजी की शक्ति अपेक्षाकृत समान हो और जिम्मेदारी और भेदभाव के साथ प्रयोग की जाती हो।
- (ii) **मुफ्त परामर्श** - सामूहिक सौदेबाजी के दो पक्ष सार्वजनिक हित की उन्नति के अनुरूप 'मुफ्त परामर्श' और 'मुक्त उद्यम' के सिद्धांत को स्वीकार करते हैं।
- (iii) **प्रतिनिधि संघ** - सामूहिक सौदेबाजी की प्रक्रिया में भाग लेने के लिए प्रबंधन को ट्रेड यूनियन को मान्यता देनी चाहिए। यदि एक से अधिक संघ हैं, तो संयुक्त परामर्श के माध्यम से सभी प्रमुख संघों को प्रतिनिधित्व देते हुए एक सरकारी एजेंसी द्वारा सदस्यता के सत्यापन के माध्यम से चयन किया जा सकता है। इस प्रकार, कोई भी कार्रवाई शुरू करने से पहले श्रमिकों के सौदेबाजी एजेंट की ठीक से पहचान की जानी चाहिए।
- (iv) **परस्पर विश्वास** - दोनों पक्षों में परस्पर विश्वास, सद्भाव और सामूहिक सौदेबाजी तंत्र को सफल बनाने की इच्छा होनी चाहिए।

- (v) **सक्रिय दृष्टिकोण** - प्रबंधन को समस्याओं को उठाने के लिए संघ की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए, बल्कि उन्हें उत्पन्न होने से रोकने और उन्हें उत्पन्न होने पर तुरंत दूर करने के लिए हर उचित प्रयास करना चाहिए। इस प्रकार प्रबंधन के पास सक्रिय दृष्टिकोण होना चाहिए।
- (vi) **समस्या समाधान, वैधानिकता नहीं** - अत्यधिक वैधानिकता पर जोर देने के साथ समस्या समाधान दृष्टिकोण पर जोर।
- (vii) **त्वरित निस्तारण** - एक ही बैठक में मुद्दों का निस्तारण करें और लंबित मदों को कम करें।
- (viii) **निपटान की इच्छा** - कर्मचारियों की संतुष्टि के लिए मुद्दों को निपटाने के लिए प्रबंधन की इच्छा। इसका मतलब यह नहीं है कि प्रबंधन को कंपनी को निर्देशित करने के अपने अधिकार को छोड़ देना चाहिए या उसे यूनियन की सभी मांगों को मान लेना चाहिए।
- (ix) **संघ सहयोग** - संघों को सामूहिक सौदेबाजी के आर्थिक निहितार्थों को समझना चाहिए और महसूस करना चाहिए कि संगठन की आय और संसाधनों से संघ की मांगों को पूरा किया जाना चाहिए।
- (x) **आपसी सम्मान** - दोनों पक्षों को एक दूसरे के अधिकारों और जिम्मेदारियों का सम्मान करना चाहिए।
- (xi) **निष्पक्ष श्रम व्यवहार** - नियोक्ता और ट्रेड यूनियन दोनों को अनुचित श्रम प्रथाओं से बचना चाहिए। आपसी मान्यता और सम्मान के माहौल में ही सामूहिक सौदेबाजी संभव है। प्रबंधन को न्याय के लिए संगठित होने और लड़ने के कार्यकर्ता के अधिकार को पहचानना और स्वीकार करना चाहिए। इसी तरह कर्मचारी और उनके संघ को प्रबंधन के नियोक्ता के अधिकार को पहचानना और स्वीकार करना चाहिए। ऐसी मान्यता के अभाव में सामूहिक सौदेबाजी केवल शक्ति का परीक्षण मात्र है।
- (xii) **श्रमिकों के बीच एकमत** - बातचीत में प्रवेश करने से पहले, श्रमिकों के बीच एकमत होना चाहिए। कम से कम श्रमिकों के प्रतिनिधियों को अधिकांश श्रमिकों की राय या मांगों का प्रतिनिधित्व करने में सक्षम होना चाहिए।
- (xiii) **सकारात्मक दृष्टिकोण** - पार्टियों (शामिल) का दृष्टिकोण सकारात्मक होना चाहिए। दोनों पक्षों को बेहतर समाधान खोजने के इरादे से बातचीत की मेज पर पहुंचना चाहिए।
- (xiv) **लेन-देन की प्रवृत्ति** - सामूहिक सौदेबाजी में शामिल पक्षों को कुछ पाने के लिए कुछ देने के लिए तैयार रहना चाहिए।
- (xv) **पिछले समझौतों का सम्मान करें** - सामूहिक सौदेबाजी के दोनों पक्षों को पिछले समझौतों के नियमों और शर्तों का पालन करना चाहिए और उनका पालन करना चाहिए। सामूहिक सौदेबाजी, एक सतत प्रक्रिया होने के नाते, पिछले समझौतों के सफल कार्यान्वयन के साथ ही प्रभावी हो सकती है। किसी भी संबंधित पक्ष की ओर से कोई भी चूक वर्तमान प्रक्रिया पर अपना प्रभाव दिखाती है।
- (xvi) **निहितार्थों की स्पष्टता** - दोनों पक्षों के प्रतिनिधियों को समस्याओं और उनके प्रभावों के बारे में पूरी तरह से समझना और स्पष्ट होना चाहिए।

(xviii) **वेतन से परे** - भागीदारी प्रबंधन और अच्छी कार्य स्थितियों को प्राप्त करने के लिए कर्मचारी सामूहिक सौदेबाजी प्रक्रिया का प्रभावी उपयोग कर सकते हैं। उन्हें केवल मौद्रिक लाभों के लिए सामूहिक सौदेबाजी तक सीमित नहीं रहना चाहिए।

11.4 सामूहिक सौदेबाजी के लाभ

सामूहिक सौदेबाजी एक मौलिक सिद्धांत है और काम पर अधिकार है। सामूहिक सौदेबाजी को एक समर्थकारी अधिकार भी माना जाता है। सामूहिक सौदेबाजी के अधिकार की प्रभावी मान्यता से कई लाभ हो सकते हैं। अध्ययनों से पता चलता है कि सामूहिक सौदेबाजी मजदूरी और काम करने की स्थिति में सुधार के साथ-साथ समानता में भी योगदान दे सकती है।

यह आर्थिक संकट के दौरान उद्यमों और अर्थव्यवस्थाओं की अनुकूलन क्षमता को सुविधाजनक बनाने में भी सहायक रहा है। प्रभावी होने पर, सामूहिक सौदेबाजी नियोक्ताओं, श्रमिकों और उनके संगठनों के बीच विश्वास और आपसी सम्मान बनाने में मदद कर सकती है और स्थिर और उत्पादक श्रम संबंधों में योगदान कर सकती है। साथ ही, कमजोर और अप्रभावी सामूहिक सौदेबाजी संस्थान आर्थिक और सामाजिक लागतों के साथ श्रम विवादों में वृद्धि का कारण बन सकते हैं।

सामूहिक सौदेबाजी के अधिकार की प्रभावी मान्यता विनियमन के एक ऐसे रूप के विकास को सक्षम बनाती है जो वैधानिक विनियमन को पूरा करता है। सामूहिक समझौते वैधानिक प्रावधानों के अनुपालन को सुदृढ़ कर सकते हैं, पार्टियों को उनमें सुधार करने में सक्षम बनाते हैं, और कुछ उद्यमों या आर्थिक क्षेत्रों के लिए विशिष्ट मुद्दों को संबोधित करने के लिए एक तंत्र प्रदान करते हैं। यह दोनों पक्षों को लाभान्वित कर सकता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि श्रमिकों को लाभप्रद रूप से संचालित करने के लिए नियोक्ताओं की क्षमता को कम किए बिना उत्पादकता लाभ का उचित हिस्सा मिलता है। जहां पार्टियां अच्छी तरह से संगठित हैं, सामूहिक समझौतों का उपयोग किसी उद्योग या उद्योग की शाखा में न्यूनतम मजदूरी और काम करने की स्थिति स्थापित करने के लिए भी किया जा सकता है। सामूहिक सौदेबाजी के लाभों का सारांश नीचे दिया गया है। बेशक इन परिणामों की उपलब्धि सहायक कानूनों और संस्थानों और शामिल अभिनेताओं की रणनीतियों पर निर्भर करती है।

सामूहिक सौदेबाजी के कुछ लाभ इस प्रकार हैं:

नौकरी की गुणवत्ता

- मजदूरी में सुधार
- मजदूरी और उत्पादकता को सुरक्षित करने के लिए एक उपकरण हो सकता है
- काम के समय की व्यवस्था की बातचीत को सक्षम बनाता है जो लचीले काम के समय में नियोक्ताओं के हितों के साथ काम / जीवन संतुलन में श्रमिकों के हितों को संतुलित करता है
- सामाजिक बीमा तक पहुंच बढ़ा सकते हैं

- नौकरी की सुरक्षा और रोजगार सुरक्षा की सुविधा प्रदान कर सकता है
- कार्यस्थल भागीदारी के लिए अवसर पैदा करता है

हिस्सेदारी

- वेतन संरचनाओं को संकुचित करता है
- लैंगिक समानता को बढ़ाता है
- एक ही उद्यम में काम करने वाले नियमित और गैर-मानक प्रकार के रोजगार में श्रमिकों के बीच समानता को बढ़ावा दे सकते हैं

प्रशिक्षण

- निरंतर व्यावसायिक प्रशिक्षण तक पहुंच बढ़ा सकते हैं
- कार्यकर्ता, उद्यम और उद्योग की जरूरतों के लिए प्रशिक्षण उन्मुखीकरण

श्रम संबंध

- अन्य अधिकारों के अधिग्रहण को सक्षम बनाता है
- इस प्रक्रिया में ही अधिकारों और लोकतांत्रिक सिद्धांतों का प्रयोग शामिल है
- एक चैनल प्रदान करता है जिसके माध्यम से "आवाज" और शिकायतों को हल किया जाता है, जो बदले में कार्यकर्ता कल्याण को बढ़ाता है
- विवादों के समाधान को संस्थागत बनाता है और श्रम वृद्धि में स्थिरता में योगदान देता है।
- एक उद्योग या कार्यस्थल के लिए संयुक्त नियमन की अनुमति देता है
- नियमों को वैध बनाता है और अनुपालन बढ़ाता है (वैधानिक या सामूहिक समझौते के साथ बढ़ाता है)

उद्यम का प्रदर्शन

- अस्थायी गिरावट या मांग में वृद्धि के लिए उद्यमों की अनुकूलन क्षमता को सुगम बना सकता है
- कार्यकर्ता प्रतिबद्धता बढ़ाता है और जानकारी साझा करने में वृद्धि करता है (उदाहरण के लिए कार्य प्रक्रियाओं पर)
- श्रम टर्नओवर में कमी के साथ जुड़ा हुआ है, जो प्रक्रिया-उद्यम-विशिष्ट प्रशिक्षण के लिए प्रोत्साहन को बढ़ाता है। यह बदले में उत्पादकता और उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार में योगदान देता है
- उद्यम के प्रदर्शन पर कार्यस्थल और तकनीकी परिवर्तन के सकारात्मक प्रभाव को बढ़ाता है
- उत्पादकता प्रोत्साहन या लाभ साझा करने की योजनाओं की बातचीत को सक्षम बनाता है

व्यापक आर्थिक लाभ

- असमानता को कम करता है और राष्ट्रीय आय के उचित वितरण की अनुमति देता है

- आर्थिक झटकों के लिए समायोजन की सुविधा
- समन्वित सौदेबाजी का आर्थिक प्रदर्शन (मुद्रास्फीति, रोजगार, आदि) पर सकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।
- सामूहिक समझौतों द्वारा उच्च कवरेज सक्रिय श्रम बाजार नीतियों पर सार्वजनिक व्यय में वृद्धि से जुड़ा है

11.5 सारांश

यह अध्याय श्रम संबंधों में इस आवश्यक प्रक्रिया का व्यापक अवलोकन प्रदान करता है। यह विभिन्न प्रकार की सामूहिक सौदेबाजी की खोज से शुरू होता है, अर्थात् वितरण सौदेबाजी, एकीकृत सौदेबाजी और उत्पादकता सौदेबाजी। वितरणात्मक सौदेबाजी सीमित संसाधनों को विभाजित करने पर केंद्रित है, जबकि एकीकृत सौदेबाजी का उद्देश्य सहयोगी, जीत-जीत के परिणाम हैं। उत्पादकता सौदेबाजी संगठनों के भीतर दक्षता और प्रदर्शन को बढ़ाने का प्रयास करती है। अध्याय सामूहिक सौदेबाजी के लाभों पर प्रकाश डालता है। यह जोर देता है कि सामूहिक सौदेबाजी कर्मचारियों को प्रतिनिधित्व और एक आवाज प्रदान करती है, उचित व्यवहार सुनिश्चित करती है, और संसाधनों का समान वितरण करती है। यह श्रम-प्रबंधन संबंधों में स्थिरता, पूर्वानुमेयता और संघर्ष समाधान को भी बढ़ावा देता है। इसके अतिरिक्त, सामूहिक सौदेबाजी सामाजिक न्याय और संतुलित रोजगार संबंधों को बढ़ावा देकर सामाजिक ल्याण में योगदान करती है। अध्याय सामूहिक सौदेबाजी के आवश्यक तत्वों की रूपरेखा तैयार करता है। यह कर्मचारियों के हितों की वकालत करने वाले श्रमिक संघों या कर्मचारी संघों के साथ प्रतिनिधित्व के महत्व पर जोर देता है। नेकनीयती की बातचीत महत्वपूर्ण है, जिसके लिए दोनों पक्षों से ईमानदारी और निष्पक्ष व्यवहार की आवश्यकता होती है। सामूहिक सौदेबाजी की स्वैच्छिक प्रकृति और संघ की स्वतंत्रता के सिद्धांत पर प्रकाश डाला गया है। अंत में, अध्याय सामूहिक सौदेबाजी प्रक्रिया के मूल के रूप में बातचीत और समझौते को रेखांकित करता है।

बोध प्रश्न-

प्रश्न 1. सामूहिक सौदेबाजी के प्रकारों का विश्लेषण कीजिए?

प्रश्न 2. सामूहिक सौदेबाजी के लिए क्या आवश्यक शर्तें हैं, इस पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए?

प्रश्न 3. प्रभावी सामूहिक सौदेबाजी के लिए क्या पूर्वपेक्षाएं हैं?

प्रश्न 4. सामूहिक सौदेबाजी के क्या लाभ हैं इसकी विवेचना कीजिए?

11.6 परिभाषिक शब्दावली

हिस्सेदारी: हिस्सेदारी आपसी समझदारी और भरोसे के आधार पर आयोजित की जाती है जिसमें संयुक्त निर्णय लिया जाता है और साझेदारों के बीच संगठित ढंग से समझौता किया जाता है।

पूर्वापेक्षाएँ: शब्द "पूर्व-अपेक्षाएँ" उन आवश्यकताओं या शर्तों को संदर्भित करता है जिन्हें किसी विशेष कार्य को करने, किसी लक्ष्य का पीछा करने, या किसी विशिष्ट गतिविधि में संलग्न होने से पहले पूरा किया जाना चाहिए या पूरा किया जाना चाहिए।

प्रश्न 2. सामूहिक सौदेबाजी के लिए क्या आवश्यक शर्तें हैं, इस पर विस्तृत रूप से चर्चा कीजिए?

This image shows a single sheet of white paper with horizontal ruling lines. The lines are evenly spaced and extend across the width of the page. There are no margins, text, or other markings on the paper.

प्रश्न 3. प्रभावी सामूहिक सौदेबाजी के लिए क्या पूर्वपेक्षाएं हैं?

प्रश्न 4. सामूहिक सौदेबाजी के क्या लाभ हैं इसकी विवेचना कीजिए?



MSW-106

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन
मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

श्रम कल्याण और
मानव संसाधन प्रबंधन

खण्ड -3

औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947

- इकाई-12 औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947
- इकाई-13 औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946
- इकाई- 14 श्रम संघ अधिनियम 1926
- इकाई- 15 व्यक्तिगत क्षति प्रतिकर बीमा अधिनियम 1963
- इकाई-16 मातृत्व लाभ अधिनियम 1961

MSW-106 श्रम कल्याण एवं मानव संसाधन प्रबंध

संरक्षण एवं मार्गदर्शक

कुलपति – प्रो० सीमा सिंह, माननीय कुलपति, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

- | | |
|------------------------|---|
| 1. प्रो. सन्तोषा कुमार | निदेशक, समाज विज्ञान विद्याशाखा,
उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज— अध्यक्ष |
| 2. प्रो. अनूप भारतीय, | समाज कार्य विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ—सदस्य |
| 3. डॉ. सन्दीप गिरी, | समाज कार्य विभाग. महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी—सदस्य |
| 4. डॉ. रोहित मिश्रा, | समाज कार्य विभाग विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ—सदस्य |
| 5. डॉ. रुपेश सिंह, | डॉ. शकुन्तला मिश्रा विकलांग विश्वविद्यालय, लखनऊ—सदस्य |
| 6. डॉ. अलका वर्मा, | असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य, उ.प्र.रा.ट. मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज—सचिव |

परिभाषक

प्रो० विवेक सिंह, समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज

सम्पादक

प्रो० विवेक सिंह, समाज कार्य विभाग, प्रो० राजेन्द्र सिंह रज्जू भैया विश्वविद्यालय प्रयागराज

समन्वयक –

डॉ. अलका वर्मा, असिस्टेंट प्रोफेसर,
समाज कार्य, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक –

- | | | |
|---------|-----------------|---|
| खण्ड..1 | श्री मनीष सिंह, | असिस्टेंट प्रोफेसर, समाज कार्य
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज |
| खण्ड..2 | श्री मनीष सिंह, | असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य,
उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज |
| खण्ड..3 | डॉ० दिनेश सिंह, | असिस्टेंट प्रोफेसर समाज कार्य, अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या |

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN No. - 978-81-19530-95-3

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के द्वारा स्वयं उपलब्ध कराई गई है। विश्वविद्यालय, इस सामग्री के सम्बन्ध में किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं है।

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिनियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठ्य सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन— विनय कुमार, कुलसचिव, उ० प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, 2023।

मुद्रक— चन्द्रकला यूनिवर्सल प्रा० लि०, 42/7 जवाहर लाल नेहरू रोड, प्रयागराज—211002

इकाई-12 औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947

इकाई की रूपरेखा

- 12.0 प्रस्तावना
- 12.1 अधिनियम का ऐतिहासिक विकास
- 12.2 औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के उद्देश्य
- 12.3 औद्योगिक विवाद अधिनियम की मुख्य विशेषताएँ
- 12.4 अधिनियम की संवैधानिकता
- 12.5 अधिनियम का विस्तार
- 12.6 प्रासंगिक संशोधन
- 12.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

12.0 प्रस्तावना :

प्रिय विद्यार्थियों प्रस्तुत इकाई में आप औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे इस इकाई में आप सर्वप्रथम औद्योगिक विवाद अधिनियम की अवधारणा से अवगत होंगे उसके उपरांत आप इसके अर्थ के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे। इस इकाई में आगे चलकर आप औद्योगिक विवाद अधिनियम के उद्देश्य के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे उसके उपरांत आप इसकी विशेषताओं के बारे में ज्ञान प्राप्त करेंगे। औद्योगिक विवाद मुख्य रूप से उद्योगों में होने वाला एक विवाद है इससे किसी उद्योग के मालिक तथा उस उद्योगों में होने वाला एक विवाद है इसमें किसी उद्योग के मालिक तथा उस उद्योग में काम करने वाले श्रमिक या कर्मचारी के बीच होता है। जब कभी उद्योग का मालिक अपने श्रमिकों को नियत समय पर वेतन नहीं देता या किसी सुविधा से वंचित कर देता है तब विवाद की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसके साथ ही औद्योगिक विवाद जन्म ले लेता है। हड़ताल और तालाबंदी जैसी घटना औद्योगिक विवाद का ही एक रूप है। जब किसी उद्योग का मालिक अपने श्रमिकों की कल्याण संबंधी सुविधाओं को रोक देता है या उनको किसी प्रकार की सुविधाएं नहीं प्रदान करता है तो हड़ताल की स्थिति पैदा हो जाती है हड़ताल में श्रमिक उद्योग में काम नहीं करते वह पूर्ण रूप से कार्य से विरत हो जाते हैं।

12.1 अधिनियम का ऐतिहासिक विकास :

प्रथम विश्वयुद्ध से पूर्व औद्योगिक प्रतिष्ठानों में सामान्यतया औद्योगिक शांति का वातावरण उपलब्ध था। भारतीय उद्योगों में हड़ताल एवं तालाबंदी जैसी घटनायें बहुत कम दृष्टिगत होती थीं। इसका कारण ढूँढना कठिन कार्य नहीं है। श्रमिक वर्ग संगठित नहीं था। विचार— स्वातन्त्र्य जैसे लोकतांत्रिक अधिकार का कोई प्रश्न ही नहीं था। इस दिशा में लोकमत सजग नहीं था एवं राजकीय हस्तक्षेप नाममात्र के लिए भी उपलब्ध नहीं था। परन्तु यह कहना

यथार्थपूर्ण नहीं होगा कि हड़ताल एवं तालाबन्दी जैसी घटनायें नाममात्र को भी नहीं थीं। सन् 1877 में नागपुर की एम्प्रेस मिल में मजदूरी की दरों को लेकर हड़ताल प्रारम्भ की गई, बम्बई की कपड़ा मिलों में 1882 में श्रमिकों द्वारा हड़ताल की गई। इसी भाँति 1882 एवं 1890 के बीच बम्बई एवं मदास के प्रेसीडेन्सी नगरों में करीब 25 हड़ताल हुई। 1890 से 1914 के दौरान वेतन वृद्धि एवं काम करने की समायावधि को लेकर अनेक हड़ताले आयोजित की गई। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् श्रमिकों तथा नियोजकों के सम्बन्ध दिन प्रतिदिन बिगड़ने लगे एवं औद्योगिक विवाद आम चर्चा का विषय बन गया। प्रथम विश्वयुद्ध के तुरन्त पश्चात् तथा विशेष तौर से तत्कालीन सोवियत रूस की बोलशेविक क्रान्ति के पश्चात् भारतीय मजदूर भी अपने अधिकारों के प्रति सजग होने लगा। करीब इसी समय अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर अन्तराष्ट्रीय श्रम संगठन का अभ्युदय हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने श्रमिकों में एकता की भावना का संचार किया तथा श्रमिकों को इनके अधिकारों के प्रति जागरूक कर महत्वपूर्ण ऐतिहासिक भूमिका निभाई। इस संस्था ने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर श्रमिकों के आत्म सम्मान को जागृत किया जिसके फलस्वरूप भारत में श्रम आन्दोलनों को और भी अधिक बल मिलने लगा।

औद्योगिक विवादों को सुलाने एवं निपटाने के संदर्भ में ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रथम बार सन् 1929 में हस्तक्षेप किया गया जबकि भारतीय धारा सभा ने इसी वर्ष व्यवसाय विवाद अधिनियम, 1929 पारित किया। इस अधिनियम द्वारा ब्रिटिश भारत सरकार को औद्योगिक विवादों में हस्तक्षेप करने के लिए समुचित शक्ति प्रदान कर दी गई परन्तु इस अधिनियम का यथोचित उपयोग नहीं किया गया क्योंकि उस समय भारत में ब्रिटिश शासन की नीति यथा—स्थिति—वाद अथवा ‘जैसा चल रहा है चलने दो’ के सिद्धान्त पर आधारित थी। व्यवसाय विवाद अधिनियम, 1929 के अतिरिक्त बम्बई प्रेसडेन्सी द्वारा बम्बई व्यवसाय विवाद (समझौता) अधिनियम 1934 पारित किया गया। यह अधिनियम बम्बई प्रान्त में लागू था जिसके अन्तर्गत औद्योगिक विवादों को सुलझाने के लिए अधिकारियों को नियुक्ति सम्बन्धी व्यवस्था का प्रावधान किया गया था। इस अधिनियम में अस्थायी तौर से जाँच करने के लिए न्यायालयों एवं समझौता कराने के लिए समझौता बोर्डों की व्यवस्था की गई। जनोपयोगी सेवाओं में बिना नोटिस दिये हड़ताल व तालाबन्दी अवैध घोषित की गई। अधिनियम में व्यास कमियों को दूर करने के लिए सन् 1939 में महत्वपूर्ण संशोधन किये गये जिसमें स्थायी रूप से समझौता अधिकारियों को नियुक्ति को गई अवैध हड़ताल व तालाबन्दी को प्रतिबन्धित करने के लिए भी प्रावधान समाहित किये गये। इसके अतिरिक्त नियोजकों द्वारा श्रम संघ को मान्यता प्रदान करना अनिवार्य बना दिया, श्रमिकों के प्रतिनिधि श्रम संघों द्वारा अपना विवाद उठाने के लिए उन्हें अधिकार प्रदान किये गये।

द्वितीय विश्वयुद्ध के फलस्वरूप उत्पन्न विभिन्न परिस्थितियों पर नियंत्रण बनाये रखने के लिए भारत सरकार ने 1942 में एक विज्ञप्ति जारी कर भारत प्रतिरक्षा नियम पारित किये तथा उन्हें लागू किया गया। प्रतिरक्षा नियम 81—1 के द्वारा सामान्य या विशिष्ट दशाओं में सरकार को हड़ताल तालाबन्दी पर प्रतिबन्ध लगाने की शक्ति प्रदान की गई। उक्त नियम के अन्तर्गत

भारत सरकार ऐसी भी निर्धारित कर सकती थी जिनका पालन करना नियोजकों के लिए अनिवार्य था। सन् 1942 के अगस्त माह में एक और आदेश प्रसारित किया गया जिसमें हड़ताल व तालाबन्दी के लिए न्यूनतम 14 दिन का नोटिस अनिवार्य बना दिया गया एवं समझौता कार्यवाही के दौरान हड़ताल व तालाबन्दी प्रतिबन्धित कर दी गयी। जब प्रतिरक्षा नियमों को समाप्त किया गया तो भी उप नियम 81-अ को 6 माह के लिए और जारी रेखा गया। औद्योगिक अशांति को रोकने के लिए इस नियम को अत्यधिक उपयोगी पाया गया। लगभग उसी समय भारत सरकार ने औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 पारित कर दिया।

औद्योगिक विवाद विधेयक केन्द्रीय विधान सभा के पटल पर 28 अक्टूबर, 1946 को रखा गया। 3 फरवरी, 1947 को प्राकलन समिति ने कतिपय संशोधन प्रस्तुत किए जिन्हें मार्च, 1947 में विधायिनी स्वीकारोक्ति प्रदान की गई। अन्ततोगत्वा 1 अप्रैल, 1937 को कथित विधेयक को औद्योगिक विवाद अधिनियम 1967 के रूप में पारित किया गया। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के प्रभाव में आने के पश्चात व्यवसाय विवाद अधिनियम, 1929 को निरसित कर दिया गया। सन् 1947 के पश्चात् समय-समय पर औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में अनेक महत्वपूर्ण संशोधन किये गये हैं, परन्तु यह अधिनियम आज भी श्रम विवादों को निपटाने के संदर्भ में राजकीय हस्तक्षेप के रूप में एक महत्वपूर्ण औजार के रूप में स्वीकारा गया है।

12.2 औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के उद्देश्य

भारतीय संविधान की प्रस्तावना में नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय प्रदान करने का संकल्प किया गया है। संविधान के मूल अधिकारों तथा राज्य के नीति निर्देशक तत्वों से सम्बद्ध विभिन्न अनुच्छेदों में आर्थिक एवं सामाजिक न्याय प्रदान करने सम्बन्धी अनेक प्रावधान किये गये हैं। इस परिप्रेक्ष्य में संविधान को एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 का प्रमुख उद्देश्य श्रमिकों की सामाजिक न्याय प्रदान करना है। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में एक महत्वपूर्ण संशोधन कर 1953 में जबरी छुट्टी तथा छंटनी सम्बन्धी प्रावधान किये गये हैं जिनके अन्तर्गत श्रमिकों की प्रतिकर प्रदान किया जाता है। श्रमिकों को सामाजिक न्याय दिलाने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है। भारत सरकार का आर्थिक विकास बहुत कुछ उद्योगों के विकास पर निर्भर करता है। औद्योगिक विकास के लिए औद्योगिक शान्ति की महती आवश्यकता है। उद्योगों में शान्ति बनाये रखना इस विधायन का सर्वतोमुखी उद्देश्य है। श्रमिकों तथा नियोजकों में सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखना इस अधिनियम का अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य है।

दीमाकुची टी एस्टेट के कर्मकार बनाम दीमाकुची टी एस्टेट के प्रबन्धक के विनिश्चय में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय के विश्लेषण के अनुसार औद्योगिक विवाद अधिनियम के निम्नलिखित उद्देश्य हैं—

- (1) नियोजकों और श्रमिकों के बीच सौहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करना।
- (2) नियोजकों और नियोजकों, नियोजकों तथा कर्मकारों एवं कर्मकारों और कर्मकारों के बीच औद्योगिक विवादों को निपटाने के लिए व्यवसाय संघों, कर्मकारों तथा नियोजकों के संघों को उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करना।
- (3) अवैध हड़तालों और तालाबन्दियों पर प्रतिबन्ध लगाना।
- (4) जबरी छुट्टी एवं छँटनी के सम्बन्ध में श्रमिकों को अनुतोष स्वरूप प्रतिकर राशि प्रदान करता।
- (5) सामूहिक सौदेकारी की प्रक्रिया को प्रभावी बनाना।

औद्योगिक विवाद अधिनियम के उद्देश्यों को रेखांकित करते हुए अधिनियम की प्रस्तावना में इसके दो मुख्य उद्देश्य स्पष्ट किये गये हैं— औद्योगिक विवादों का अन्वेषण तथा उनका निपटारा इस दृष्टि से अधिनियम एक प्रगतिशील सामाजिक विधायन है जिसमें न्याय निर्णयन सम्बन्धी एक नवीनतम पद्धति प्रयोग किया गया है। समस्त श्रम-विधियों का उद्देश्य मेहनतकश वर्ग के लिए उचित मजदूरी का सुरक्षा तितादों की रोकथाम करना है ताकि उत्पादन पर विपरीत प्रभाव न पड़ सके। एस० एन०राय एशबानाथ के विनिश्चय में पटना उच्च न्यायालय ने उक्त अधिनियम का उद्देश्य न्यायनिर्णयन के से विवादों का समान न्यायोचित निपटारा करना बताया है।

12.3 औद्योगिक विवाद अधिनियम की मुख्य विशेषताएँ

1. औद्योगिक न्यायालयों को विवाद सुपुर्द करना व उनके विनिश्चयों को क्रियान्वित करना।

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं जो निम्न प्रकार रेखांकित को सकती है। अन्य सामान्य विधियों की भाँति प्रभावित व व्यथित पक्षकार औद्योगिक विवाद अधिनियम के अन्तर्गत सोधे न्यायालय में वाद प्रस्तुत नहीं कर सकता। उदाहरण के लिए संविदा अधिनियम, भारतीय संहिता एवं अन्य विधियों के अन्तर्गत राज्य एवं अन्य प्रभावित पक्षकार न्यायालय में उपस्थित हो सकते हैं परन्तु औद्योगिक विधि इससे भिन्न प्रक्रिया है। औद्योगिक विवादों को औद्योगिक न्यायाधिकरण के सम पक्षकारों की सहमति पर या समुचित सरकार द्वारा उपयुक्त समझे जाने पर विचार हेतु प्रस्तुत किया है। विवाद को अंतिम रूप से निपटाने के लिए समुचित सरकार को इन न्यायालयों को औद्योगिक विवाद करने व उनके निर्णयों को क्रियान्वित करने की शक्ति प्रदान की गई है।

2. हड़ताल व तालाबन्दी पर प्रतिबन्ध

जब तक समझौता कार्यवाही या निपटारे की कार्यवाही औद्योगिक न्यायालय में चलती रहेगी उस सम तक हड़ताल व तालाबन्दी समुचित सरकार द्वारा प्रतिबन्धित कर दी जाती है। इसके बावजूद भी यदि को पक्ष हड़ताल व तालाबन्दी जैसी घटनाओं में अपने को शामिल करता है तो ऐसी हड़ताल व तालाबन्दी को अवैध माना जायेगा। जनोपयोगी सेवाओं में कार्यरत श्रमिकों द्वारा हड़ताल घोषित करने से पूर्व या नियो द्वारा तालाबन्दी जारी करने से पूर्व दूसरे पक्ष व समुचित सरकार को अग्रिम सूचना देना औद्योगिक विवाद अधिनियम के अन्तर्गत अनिवार्य कर दिया गया है। इस विधि का उल्लंघन करने पर हड़ताल या तालाबन्दी अवैध मानी जायेगी।

3. जन उपयोगी सेवायें

जन उपयोगी सेवाओं में कार्यरत श्रमिकों द्वारा हड़ताल व नियोजकों द्वारा तालाबन्दी प्रारम्भ करना जटिल बनाया गया है। जनहित एवं आपातकाल के लिए अन्य उद्योगों को भी जन उपयोगी सेवाओं में सम्मिलित किया जा सकता है, इसके लिए अधिनियम के अन्तर्गत राज्य सरकारों को समुचित शक्ति प्रदान की गई है। जन उपयोगी सेवाओं से सम्बद्ध उद्योगों में हड़ताल व तालाबन्दी करने से पूर्व यथाविहित नोटिस देने को आवश्यकता है।

कम्पनी बनाम औद्योगिक अधिकरणम्बई आई आर 1951 बम्बई, 100/— 2. ए० आई० आर 1960 पटना 10 बंगलौर वाटर सप्लाई एवं सीवरेज बोर्ड बनाम ए० रामप्पा एवं अन्य ए० जर 1978 एस०सी० 553 का भी अवलोकन करें।

4. शीघ्र न्याय प्रसारण की व्यवस्था

सामान्य सिविल न्यायालयों में पक्षकारों को न्याय प्राप्त करने में लम्बी अवधि तक इन्तजार करना होता है। सिविल न्यायालय में कानून को बारीकी एवं तकनीकी निर्वाचन के परिणामस्वरूप न्याय निर्णयन में समय लगता है। श्रम न्यायालयों व औद्योगिक अधिकरणों में इस व्यवस्था को नहीं अपनाया गया है। समझौता निर्णय शीघ्र हो इसके लिए समझौता अधिकारी के लिए 14 दिन एवं बोर्ड के लिए दो माह में निर्णय देना अनिवार्य कर दिया गया है।

चन्द्रकान्त तुकाराम निकायमान अहमदाबाद नगर निगम के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि संसद ने औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 को शीघ्र न्यायनिर्णयन, कम चला व प्रभावपूर्ण न्यायाधिकरण प्रदान करने हेतु पारित किया है। अधिनियम में अन्तर्निहित उद्देश्य यह है कि कर्मकार व्यवहार न्यायालयों की तकनीकी बारीकियों एवं जटिलताओं में न उलझ जाये औद्योगिक न्यायालयों को शक्ति अत्यधिक व्यापक है उन्हें यह शक्ति प्रदान की गई है कि वे कर्मकार को उचित न्यायसंगत एवं पर्याप्त राहत प्रदान कर सकते हैं। यह कर्मकार के हित में है कि उनके तथा नियोजकों

के बाच उत्पन्न विवाद औद्योगिक अधिकरणों द्वारा अभिनिर्णीत किये जायें। अतः औद्योगिक न्याय निर्णयन के क्षेत्र में व्यवहार अथवा दिवानी न्यायालयों के क्षेत्राधिकार को निर्बन्धित किया जाना चाहिये।

5. सामाजिक न्याय की व्यवस्था

संविधान की प्रस्तावना में अन्तर्निहित आर्थिक सामाजिक न्याय के सिद्धान्तों को दृष्टिगत रखते हुए इस अधिनियम में श्रमिकों को सामाजिक न्याय प्रदान करने का सपन प्रयास किया गया है, क्योंकि श्रमिक वर्ग को समाज का एक कमजोर वर्ग माना गया है। उच्चतम न्यायालय ने अधिनियम की धारा 10 की परिधि में अपने विभिन्न अभिनिर्णय प्रदान करते समय सामाजिक न्याय के संदर्भ में अनेक सारगर्भित सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं।

12.4 अधिनियम की संवैधानिकता

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 को संवैधानिकता का परीक्षण करना यहाँ आवश्यक प्रतीत होता है। क्योंकि भारतीय संविधान के अनुच्छेद 13(1) के अनुसार संविधान लागू होने के पूर्व की समस्त विधियों उस सीमा तक शून्य अथवा अवैध होंगी, जहाँ तक ये संविधान के तृतीय भाग में वर्णित नागरिकों के मूल अधिकारों का अनिलंघन करती है। प्रायः यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि उक्त अधिनियम में वर्णित अनेक प्रावधान नियोजक को अपने व्यापार करने और व्यापार को प्रभावी करने के लिए ठहराव करने के मूल अधिकार अनुच्छेद 19(1)(छ) को प्रभावित करता है। संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (छ) में निम्न प्रावधान किये गये हैं—

प्रत्येक नागरिक, व्यापार, वाणिज्य, व्यवसाय व उपजीविका करने का मूल अधिकार धारण करता है और यह अधिकार केवल उन्हीं निबन्धनों के अधीन उपलब्ध होता है जो सार्वजनिक कल्याण के हित में अनुच्छेद 19(6) में दिये गये आधारों पर राज्य द्वारा लगाये गये हों। अतएव प्रश्न यह है कि क्या अधिनियम के ये उपबन्ध जो किसी औद्योगिक विवाद के पक्षकारों को अधिनियम में वर्णित न्यायाधिकरणों के माध्यम से अपने विवादों का निपटारा करवाने के लिए बाध्य करते हैं, उपर्युक्त संवैधानिक अधिकार अनुच्छेद 19(1)(क) पर कोई पुतिन है हमारे वर्तमान संवैधानिक में यह मानना औद्योगिक विवाद अधिनियम, जिसका आशय औद्योगिक शांति के हित सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने का है, संविधान के अनुच्छेद 19(1)(छ) में वर्णित मूल नियोजक और अनावश्यक प्रतिबन्ध है। सामान्य लोकहित में विशेषकर जबकि की स्वता का अधिकार द्वारा सुरक्षित किया गया है अधिनियम के उपबन्ध जो नायाधिकरणों को पक्षकारों के प उसके पूर्ववर्ती के प्रतिकूल होने के बावजूद भी व्यापार करने के मूल अधिकार युक्तियुक्त निधन नहीं माने जा सकते। अतएव यह अधिनियम इस आधार पर असंवैधानिक सकता कि यह अनुच्छेद 19(1)(छ) द्वारा प्रदत्त, मूल अधिकार को प्रभावित करता है। टेक्सटाइल फिनिशिंग मिल्स के एक अन्य महत्वपूर्ण विनिश्चय में उच्चतम न्यायालय से विवाद अधिनियम, 1947 को

पूर्णतया सविधानिक घोषित किया है। बंगलौर वाटर सप्लाई एण्ड बोर्ड बनाम ए० राजप्पा एवं अन्य के ऐतिहासिक महत्व के विनिश्चय में उच्चतम न्यायालय ने विवाद अधिनियम 1947 का मुख्य उद्देश्य औद्योगिक शांति की प्रतिस्थापना तथा समाज की उत्पादनों का अविरल वितरण बताया है। अधिनियम में प्रावधित विभिन्न उपबन्ध औद्योगिक शांति का स्थापना हेतु नियोजक तथा कर्मकारों के पारस्परिक सम्बन्धों को विनियमित करते हैं।

12.5 अधिनियम का विस्तार

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 भारत क्षेत्र के समस्त राज्यों पर लागू होगा। इसका प्रवर्त 1947 से प्रारम्भ हुआ। लेकिन जम्मू एवं कश्मीर राज्य क्षेत्र में यह अधिनियम लागू नहीं होगा। भारत सरकार द्वारा जम्मू एवं कश्मीर राज्य में नियोजित औद्योगिक कर्मकारों पर इस अधिनियम के प्रावधान लागू होंगे। अधिनियम को गोवा, दमन, ड्यू, पाण्डिचेरी एवं लंकाद्वीप के संघ क्षेत्रों में भी विस्तारित किया गया है। श्रम विषय भारतीय संविधान को समवर्ती सूची में सम्मिलित किया गया है। एतदुर्ग, भारतीय संसद के अतिरिक्त कुछ राज्यों के विधानमण्डलों ने अपने स्वयं के औद्योगिक विवाद अधिनियम पारित किये हैं राज्यों के विधानमण्डलों को भी श्रम विषयक अधिनियम पारित करने के लिए अधिकृत किया गया है।

12.6 प्रासंगिक संशोधन

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में समय-समय पर कतिपय महत्वपूर्ण संशोधन किये गये हैं।

विशिष्ट परिस्थितियों में समय विशेष की आवश्यकता तथा न्यायिक विनिश्चयों को मध्य नजर रखते हुए अधिनियम में निम्न संशोधन किये गये हैं—

- 1 औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1982
2. औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1984
3. औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1996
1. औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1982 का उद्देश्य औद्योगिक विवादों का शीघ्रत समाधान करना है जिससे विलम्बकारी प्रक्रिया तथा जटिलताओं को दूर किया जा सके। राष्ट्रीय श्रम आयोग (1969) ने औद्योगिक सम्बन्धों को सौहार्द्रपूर्ण, अधिक कारगर तथा सकारात्मक दिशा प्रदान करने के लिए अधिनियम में व्यापक संशोधन किये हैं। कचित संशोधन द्वारा उद्योग को परिभाषा को सीमित करना था। उद्योग शब्द की परिभाषा में संशोधन करना इसलिए भी आवश्यक हो गया था क्योंकि उच्चतम न्यायालय ने बंगलौर वाटर सप्लाई एवं सीवरेज बोर्ड बनाम ए० राजप्पा के महत्वपूर्ण विनिश्चय में उद्योग को परिभाषा में अस्पताल, शैक्षणिक प्रतिष्ठानों क्लब व्यावसायिक संस्थाओं आदि को शामिल

कर लिया गया था। संशोधित परिभाषा में मुख्य रूप से अस्पताल तथा शैक्षणिक संस्थाओं को श्रुद्धोगर् की परिभाषा से निकाल दिया गया है।

औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1982 को 21 अगस्त, 1984 की तिथि से प्रभावी बना दिया गया लेकिन निम्न प्रावधानों को संशोधनों को परिधि से निकाल दिया गया।

(i) उद्योग शब्द को नई परिभाषा, अर्थात् उद्योग शब्द की परिभाषा अभी भी वही बनी रहेगी। जो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में प्रावधित है। एतदर्थ, उच्चतम न्यायालय द्वारा विनिश्चित बंगलोर वाटर सप्लाई के ऐतिहासिक निर्णय का महत्व अभी भी कायम रहेगा,

(ii) शिकायत समझौता प्राधिकारी की स्थापना सम्बन्धी प्रावधान।

2. औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1984— इस संशोधन द्वारा अधिनियम की धारा 2 (णण), 25—च, 25—द, 25—25—न में कतिपय संशोधन किये गये हैं। संशोधित अधिनियम को 18 अगस्त, 1984 से प्रभाव में लाया गया है।
3. औद्योगिक विवाद (संशोधन) अधिनियम, 1996—इस संशोधन द्वारा समुचित सरकार की परिभाषा में परिवर्तन किया गया है जो धारा 2(क) (i) में प्रावधित की गई है। संशोधित परिभाषा को दिनांक 11—10—1996 से लागू किया गया है।

12.7 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कुमावत बालकृष्ण, औद्योगिक सन्नियम, साहित्य भवन पब्लिके’नस, आगरा
2. सिंह इन्द्रजीत, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ पब्लिके’नस, इलाहाबाद
3. मिश्र, सूर्य नारायण, श्रम एवं औद्योगिक विधि, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
4. शर्मा गंगा सहाय, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद

इकाई 13 औद्योगिक नियोजन अधिनियम—1946

इकाई की रूप रेखा

- 13.0 प्रस्तावना
- 13.1 अधिनियम का परिचय
- 13.2 अधिनियम के उद्देश्य
- 13.3 औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946 का प्रवर्तन
- 13.4 औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946 की प्रमुख विशेषताएं
- 13.5 परिभाषाएँ
- 13.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

13.0 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थी! इस इकाई में आप औद्योगिक नियोजन अधिनियम, 1946 के बारे में विस्तृत रूप से जानकारी प्राप्त करेंगे। किसी भी उद्योग में जब किसी प्रकार का विवाद पैदा हो जाता है तो उसमें शांति की अत्यंत आवश्यकता होती है। इसके निपटारे के लिए भारत सरकार ने औद्योगिक विवाद अधिनियम को लेकर आई जिससे किसी भी उद्योग में किसी प्रकार का कोई विवाद न हो। औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946 का लाने का पूर्ण मकसद था कि रोजगार की शर्त तथा समस्त नियमों को नियमित किया जाए जिससे लोगों को रोजगार प्राप्त करने में आसानी हो सके तथा वे अपने व अपने परिवार का सही से जीवन यापन कर सकें। यह अधिनियम जम्मू कश्मीर राज्य को छोड़कर समस्त भारत वर्ष में लागू किया गया है? इस अधिनियम के पारित होने से भारत में नियोजकों और कर्मचारों के बीच औद्योगिक विवाद बने रहने का एक मुख्य कारण यह भी रहा है कि अभी तक ऐसा कोई आदेश नहीं था जो कर्मचारियों के मुख्य अधिकारों और उनके उत्तरदायित्वों का स्पष्ट रूप से व्याख्या कर सके। किसी भी उद्योग में नियोजन की शर्तें अवकाश, भर्ती, बर्खास्तगी या अनुशासनात्मक कार्यवाही इत्यादि प्रमुख रूप से ऐसे जटिल विषय हैं जिन पर मतभेद हो सके।

13.1 अधिनियम का परिचय

औद्योगिक शांति स्थापित करने की दृष्टि से औद्योगिक विवाद अधिनियम के पश्चात् दूसरा रचनात्मक कार्य रोजगार की शर्तों और नियमों को नियमित करना है। छोटे विषय कभी-कभी उग्र रूप धारण कर लेते हैं, जो औद्योगिक प्रतिष्ठान में श्रमिक असन्तोष को जन्म देते हैं। नियोजक और कर्मचारों के सम्बन्धों को नियोजक की इच्छाओं अथवा उनके विशेषाधिकार के नाम पर नहीं छोड़ा जा सकता है। कर्मकार का यह विधिक अधिकार है कि वह नियोजन की उन शर्तों तथा दशाओं को जाने जिनके अधीन उसे नियोजन में रखा गया है। इसी भाँति अनुशासन के नियमों को भी उसे जानकारी होनी चाहिए जिनके अनुपालन करने की

उससे अपेक्षा की जाती है। ग्रेट ब्रिटेन में ऐसी शर्तें संयुक्त ऐच्छिक समझौतों द्वारा निर्धारित की जाती हैं, जिनको विधिक उपबन्धों की भाँति ही महत्व प्रदान किया जाता है। वहाँ नियोजक ऐसे समझौतों का उल्लंघन नहीं कर सकते।

भारत में बड़े औद्योगिक संस्थानों में छुटपुट जगहों पर स्थायी आदेश बना लिये गये थे जो पारस्परिक सम्बन्धों को निश्चित करने के लिए संस्थित किये गये थे। भारत में नियोजकों और कर्मकारों के बीच औद्योगिक विवाद बने रहने का एक मुख्य कारण यह भी रहा है कि ऐसे कोई स्थायी आदेश नहीं थे जो कर्मकारों के अधिकारों और उत्तरदायित्वों की यथोचित एवं स्पष्ट व्याख्या कर सकें। नियोजन की सर्तें, भर्ती, बर्खास्तगी, अवकाश, अनुशासनात्मक कार्यवाही आदि प्रमुख रूप से ऐसे जटिल विषय हैं जिन पर मतभेद हो सकते हैं। अनेक त्रिदलीय श्रम सम्मेलनों में इस बात पर जोर दिया गया है कि स्थायी आदेशों के लिए पृथक से एक केन्द्रीय अधिनियम बनाया जाय। परिणामस्वरूप, औद्योगिक नियोजन अधिनियम, 1946 पारित किया गया जिसके अन्तर्गत केन्द्र सरकार ने ऐसे आदर्श स्थायी आदेश बनाये जिनकी अनुपालना उन औद्योगिक संस्थानों को करनी होती थी जिनमें 100 अथवा इससे अधिक श्रमिक कार्यरत थे। इस सम्बन्ध में प्रथम विधायिनी कदम बम्बई का औद्योगिक विवाद अधिनियम था, जिसके उपबन्धों के अन्तर्गत नियोजक को निर्धारित फार्म पर दो माह के भीतर औद्योगिक सम्बन्धों के विषय में स्थायी आदेशों को श्रम आयुक्त को प्रस्तुत करने का आदेश दिया गया था।

प्रारम्भ में औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946 जम्मू-कश्मीर राज्य को छोड़कर समस्त भारत में लागू किया गया था। सितम्बर, 1971 से इस अधिनियम के प्रावधान जम्मू-कश्मीर राज्य में भी लागू कर दिये गये। अधिनियम में उन समस्त औद्योगिक संस्थानों में जिनमें 100 अथवा उससे अधिक कर्मकार कार्यरत हैं, अधिनियम में यह उपबन्धित किया गया है कि अधिनियम को लागू होने के 6 माह के भीतर नियोजकों को प्रमाणकर्ता अधिकारी के समक्ष निम्न विषयों से सम्बन्धित स्थायी आदेश प्रस्तुत करने होंगे—श्रमिकों का वर्गीकरण, छुट्टियाँ, मजदूरी भुगतान का दिन, मजदूरी की दरें, अवकाश के लिए प्रार्थना-पत्र की विधि, सेवा समाप्ति व बर्खास्तगी, अनुशासनात्मक कार्यवाही, इत्यादि। स्थायी आदेशों को प्रमाणित करने से पूर्व श्रमिकों से परामर्श करने की व्यवस्था भी की गई है। प्रमाणकर्ता अधिकारी कर्मकारों और नियोजकों की आपत्तियों को ध्यान में रखते हुए स्थायी आदेशों को प्रमाणित करता है। प्रमाणकर्ता अधिकारों के विनिश्चय के विरुद्ध श्रम न्यायालय में अपील की जा सकती है। स्थायी आदेशों का प्रारूप प्रस्तुत न किये जाने पर नियोजक को जुर्माने के रूप में दण्ड दिया जा सकता है। अधिनियम का प्रशासन केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारें दोनों ही अपने-अपने क्षेत्र में करती है।

13.2 अधिनियम के उद्देश्य

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट परिलक्षित होता है कि औद्योगिक नियोजन अधिनियम, 1946 का मुख्य उद्देश्य औद्योगिक संस्थानों में औद्योगिक सम्बन्धों से सम्बद्ध कतिपय नियमों में

एकरूपता लाना है तथा उन्हें समान रूप से लागू करना है। इस अधिनियम के प्रभाव में आने से पूर्व श्रमिकों को यह जानकारी नहीं हो पाती थी कि उन्हें किन सेवा शर्तों के अधीन काम करना है। स्थायी आदेश नियोजकों और कर्मकारों दोनों के लिए ही लाभकारी है। इससे पूर्व नियोजकों और कर्मकारों के मध्य सामान्य विषयों पर भी संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो जाया करती थी। अधिनियम के अध्ययन से नियोजक और कर्मकार दोनों ही अपने अधिकारों और दायित्वों को जान सकते हैं। इससे नियोजकों की स्वेच्छाचारी प्रवृत्ति, मनमानीपूर्ण कार्यप्रणाली तथा उनके विशेषाधिकारों पर प्रतिबन्ध लगा है। परिणामस्वरूप दोनों पक्षों की तनावपूर्ण स्थिति में कमी आई है।

एल्यूमिनियम इण्डस्ट्रीज एम्पलाइज बनाम एल्यूमिनियम इण्डस्ट्रीज लिमिटेड के विनिश्चय में उड़ीसा उच्च न्यायालय ने स्थायी आदेश की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए यह विचार अभिव्यक्त किया है कि स्थायी आदेश का उद्देश्य दोनों पक्षकारों को यह स्पष्ट कर देना है कि किन निबन्धनों और शर्तों पर कर्मकारगण कार्य करने के लिए अपने आपको समर्पण कर रहे हैं और किन शर्तों पर नियोजक उन्हें कार्यों में नियोजित करना चाहता है। नियोजन की शर्तों को उचित रूप में परिभाषित करना और शर्तों की कर्मकारों को पूर्ण जानकारी कराना नियोजकों का विधिक दायित्व है। ये शब्द इतने व्यापक हैं कि उनमें ऐसे भी कार्य सम्मिलित हो जाते हैं जो कि कारखाने के बाहर सम्पन्न किये गये हैं।

उच्चतम न्यायालय ने अपने एक महत्वपूर्ण निर्णय डी० के० यादव बनाम जे० एस० उद्योग लि० में यह अवधारणा प्रस्तुत की है कि प्रमाणित स्थायी आदेशों को विधि का बल प्राप्त है, एतदर्थ वे अपने में संविधान के अनुच्छेद 14 एवं 21 तथा नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों को आकर्षित एवं अन्तर्निहित करते हैं। इस प्रकार जब कभी स्थायी आदेशों के अधीन किसी कर्मकार की सेवा को समाप्त किया है तो उक्त सिद्धान्तों की अनुपालना की जानी आवश्यक है।

औद्योगिक नियोजन, अधिनियम, 1946 उन सभी औद्योगिक प्रतिष्ठानों पर स्वतः लागू माना जायेगा जहाँ कर्मकारों की संख्या पिछले वर्ष से कम से कम 100 रही है। एक मर्तबा लागू होने के पश्चात् कर्मकार संख्या 100 से कम होने के पश्चात् भी यह अधिनियम लागू रहेगा। लेकिन समुचित सरकार शासकीय राजपत्र में दो माह पूर्व को सूचना देकर अधिसूचना द्वारा इस अधिनियम के उपबन्धों को ऐसे औद्योगिक संस्थानों में भी लागू कर सकती है जिनमें नियोजित कर्मकारों की संख्या 100 से कम है।

इस अधिनियम का प्रयोजन किसी औद्योगिक संस्थान में समान या एक ही प्रकार का काम कर रहे कर्मकारों के मामले, उनकी नियुक्ति, उन्हें काम से हटाने, अनुशासनात्मक कार्यवाही, अवकाश आदि की शर्तों और दशाओं आदि में समरूपता या समानता स्थापित करने एवं विनियमित करने का है। स्थायी आदेश सेवारत सभी कर्मकार के लिए होगा चाहे उनको नियुक्ति उसके प्रवर्तन के पूर्व हुई हो अथवा पश्चात् बी० डी० शेटी बनाम सीएट लिमिटेड के

मामले में उच्चतम न्यायालय ने औद्योगिक नियोजन अधिनियम, 1946 की प्रकृति पर प्रकाश डालते हुये बताया है कि यह अधिनियम कर्मकारों के हित में एक लाभकारी विधायन है।

13.3 औद्योगिक नियोजन अधिनियम 1946 का प्रवर्तन

इस अधिनियम के विभिन्न उपबन्ध निम्न प्रकृति के समस्त औद्योगिक संस्थानों पर लागू होते हैं—

1. जिन औद्योगिक संस्थानों में 100 अथवा इससे अधिक कर्मकार नियोजित हों अथवा कार्यरत हों।
2. पिछले 12 महीने के पूर्व किसी भी दिन 100 अथवा इससे अधिक कर्मकार नियोजित किये गये हों।
3. समुचित सरकार को यह शक्ति प्राप्त है कि यह ऐसे औद्योगिक प्रतिष्ठानों में भी इस अधिनियम के उपबन्धों को लागू कर सकती है जहाँ 100 से कम कर्मकार नियोजित हैं। ऐसा करने से पूर्व समुचित सरकार सम्बन्धित औद्योगिक संस्थान को उक्त आशय को नोटिस द्वारा सूचना देगी।

औद्योगिक नियोजन अधिनियम, 1946 के उपबन्ध निम्नलिखित प्रकृति के उद्योगों पर लागू नहीं होंगे—

- (i) किसी ऐसे उद्योग में जहाँ बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध अधिनियम, 1946 के अध्याय 7 के उपबन्ध लागू है, अथवा
- (ii) किसी ऐसे औद्योगिक संस्थान में, जहाँ मध्य प्रदेश औद्योगिक नियोजन आदेश, 1961 के उपबन्ध लागू होते हैं। परन्तु मध्य प्रदेश औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी इस अधिनियम के उपबन्ध केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण के अधीन सभी औद्योगिक संस्थानों पर लागू होंगे।

उच्चतम न्यायालय ने अपने एक विनिश्चय ऐवरो इण्डिया लिमिटेड बनाम द्वितीय औद्योगिक न्यायाधिकरण, पश्चिम बंगाल में यह अभिनिर्णय प्रदान किया गया है कि स्थायी आदेशों में निवृत्ति को आयु के सम्बन्ध में किए गए उपबन्ध संस्थान के समस्त कर्मकारों पर लागू होंगे चाहे वे स्थायी आदेशों को लागू होने से पहले अथवा पश्चात्पूर्वी तिथि से सेवा में नियोजित किये गये हों। किसी औद्योगिक संस्थान में स्थायी आदेशों अथवा नियमों के न होने की स्थिति में अर्थात् उनके अभाव में कर्मकारों और नियोजक के पारस्परिक सम्बन्ध को तत्सम्बन्धी विधि नियंत्रित करती है।

एम० एल० कान्ताराब बनाम आजम जूही मिल्स लिमिटेड वारंगल के विनिश्चय में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि किसी ऐसी स्थिति में जबकि नियोजक

कर्मकार को बीमारी के कारण अवकाश प्रदान करने का विकल्प प्रदान करता है तथा नियोजक को इसके लिए बाध्यकारी माना गया है वहाँ स्थायी आदेश कर्मचारी पर बीमारी की छुट्टी के अधिकार को एक संविदा द्वारा प्रदान किया हुआ माना जाता है। एतदर्थ कर्मचारी अपने अधिकार का प्रयोग कर सकता है। इसके लिए यह आवश्यक नहीं है कि बीमारी विषयक प्रसुविधा की याचना कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के उपबन्धों के अन्तर्गत करें।

13.4 औद्योगिक नियोजन

अधिनियम, 1946 की प्रमुख विशेषताएँ

- (क) अधिनियम के अधीन नियोजकों से यह अपेक्षा की गई है कि वे अपने औद्योगिक संस्थानों के लिए स्थायी आदेश तैयार करें और उन्हें प्रमाणीकरण हेतु प्रमाणन अधिकारी के सम्मुख प्रस्तुत करें। सामान्यतया प्रदेश के श्रम आयुक्त को प्रमाणन अधिकारी नियुक्त किया जाता है।
- (ख) कर्मकार की परिभाषा में किन्हीं परिस्थितियों में पर्यवेक्षीय प्राविधिक व्यक्ति भी सम्मिलित होंगे।
- (ग) प्रमाणकर्ता अधिकारी को यह शक्ति प्राप्त होगी कि वह स्थायी आदेशों के प्रालेख में कुछ परिवर्तन कर सके।
- (घ) समान प्रकृति के औद्योगिक संस्थानों के नियोजकों को यह छूट प्राप्त होगी कि संयुक्त स्थायी आदेश का प्रलेख प्रस्तुत कर सकें।
- (ङ) प्रमाणकर्ता अधिकारी तथा अपीलीय प्राधिकारी को अधिनियम की धारा 11 के अन्तर्गत कतिपय मामलों में ऐसी सभी शक्तियाँ प्राप्त होंगी जो एक सिविल न्यायालय को प्राप्त होती हैं।
- (च) स्थायी आदेश समर्पित न करने की स्थिति में नियोजक को दण्डित किया जा सकेगा।
- (छ) समुचित सरकार गजट सूचना द्वारा अधिनियम के किसी उपबन्ध के प्रवर्तन से किसी औद्योगिक संस्थापन को छूट प्रदान कर सकती है।
- (ज) समुचित सरकार को यह शक्ति प्राप्त होगी कि यह अधिनियम के प्रयोजन की अनुपालना हेतु नियमावली बना सकती है।
- (झ) समुचित सरकार नियम बनाकर इस अधिनियम के प्रयोजन के निमित्त आदर्श स्थायी आदेशों की भी व्यवस्था कर सकती है। नियोजकों से यह अपेक्षा की गई है कि वे अपने द्वारा तैयार स्थायी आदेशों को आदर्श स्थायी आदेश के अनुरूप तैयार करें। आदर्श स्थायी आदेशों के उल्लंघन स्वरूप कोई स्थायी आदेश नहीं बनाये जा सकते हैं।
- (ञ) यह नियम प्रायः सभी ऐसे औद्योगिक संस्थापनों पर लागू होंगे जहाँ 100 या इससे अधिक कर्मचारी नियोजित हैं।

13.5 परिभाषाएँ

(क) **अपील प्राधिकारी** से अभिप्राय ऐसे प्राधिकारी से है जिसे समुचित सरकार ने इस अधिनियम के अधीन अपील प्राधिकारी के कृत्यों का प्रयोग ऐसे क्षेत्र में करने के लिए, जो अधिसूचना में विनिर्दिष्ट हो, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियुक्त किया हो—

परन्तु ऐसी अपील के सम्बन्ध में, जो औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) संशोधन अधिनियम, 1963 के प्रारम्भ से पूर्व किसी औद्योगिक अधिकरण के समक्ष लम्बित हो, वह न्यायालय या प्राधिकारी ही अपील अधिकारी समझा जायेगा।

(ख) **समुचित सरकार** से तात्पर्य केन्द्रीय सरकार या रेल प्रशासन के अधीन या किसी महापत्तन खान या तैल क्षेत्र के औद्योगिक संस्थान के बारे में केन्द्रीय सरकार, और अन्य सभी दशाओं में राज्य सरकार से है—

परन्तु जहाँ यह प्रश्न उठता है कि कोई औद्योगिक संस्थान केन्द्रीय सरकार के अधीन है अथवा नहीं, वहाँ वह सरकार नियोजक या कर्मकार या किसी व्यवसाय संघ या कर्मकारों का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य निकाय द्वारा किये गये निर्देश पर या स्वप्रेरणा से और पक्षकारों की सुनवाई का अवसर देने के पश्चात् उस प्रश्न का विनिश्चय कर सकेंगी और ऐसा विनिश्चय अन्तिम माना जायेगा और पक्षकारों पर बाध्यकारी होगा।

(ग) **प्रमाणकर्ता अधिकारी** से तात्पर्य श्रम आयुक्त या प्रादेशिक श्रम आयुक्त से है, और इसके अन्तर्गत कोई ऐसा अन्य अधिकारी आता है जिसे समुचित सरकार ने इस अधिनियम के अधीन प्रमाणकर्ता अधिकारी के कृत्यों का या उनमें से कतिपय कृत्यों की अनुपालना करने के लिए शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा नियुक्त किया गया हो।

(घ) **नियोजक** से तात्पर्य उस औद्योगिक संस्थान के स्वामी से है, जिसे यह अधिकार तत्समय लागू हो। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित आते हैं—

- (i) किसी कारखाने में, कारखाने के उपबन्ध के रूप में कारखाना अधिनियम, 1948 की धारा 7 (1) (च) के अधीन नामित कोई व्यक्ति;
- (ii) भारत में किसी सरकार के किसी विभाग के नियंत्रणाधीन किसी औद्योगिक संस्थान में, वह प्राधिकारी, जो इस निमित्त ऐसी सरकार द्वारा नियुक्त किया गया हो अथवा जहाँ कि ऐसा कोई प्राधिकारी नियुक्त न किया गया हो वहाँ उस विभाग का विभागाध्यक्ष,
- (iii) किसी अन्य औद्योगिक संस्थान में, उस औद्योगिक संस्थान के पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए स्वामी के प्रति उत्तरदायी कोई व्यक्ति,

(ङ) **औद्योगिक संस्थान से तात्पर्य है—**

- (i) मजदूरी भुगतान अधिनियम, 1936 की धारा 2
- (ii) में परिभाषित औद्योगिक संस्थान, अथवा
- (ii) कारखाना अधिनियम, 1948 की धारा 2 (ङ) में परिभाषित कारखाना, अथवा
- (iii) भारतीय रेल अधिनियम, 1890 की धारा 2 (4) में परिभाषित रेल, अथवा

(iv) किसी ऐसे व्यक्ति का संस्थान जो किसी औद्योगिक संस्थान के स्वामी के साथ की गई संविदा की पूर्ति करने के प्रयोजन के लिए कर्मकार नियोजित करता है।

कर्नाटक एग्रो इण्डस्ट्रीज कारपोरेशन कर्मकार संघ बनाम कर्नाटक राज्य के अभिनिर्णय में कर्नाटक उच्च न्यायालय ने यह अभिकथन प्रस्तुत किया है कि एग्रो इण्डस्ट्रीज की पाँच कार्यशालाओं का पंजीकरण कारखाना अधिनियम, 1948 के उपबन्धों के अधीन किया गया है जिनमें 100 से अधिक कर्मकार कार्यरत हैं। परिणामस्वरूप, समस्त कार्यशालाओं को औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 के अन्तर्गत औद्योगिक संस्थान माना जायेगा। इसी प्रकार नगरपालिका के विद्युत् विभाग को औद्योगिक संस्थान कहा गया है। अतः इस विभाग द्वारा बनाये गये आदर्श स्थायी आदेश ऐसे कर्मकारों पर लागू होंगे जो उस विभाग के कर्मकार हैं।

एस० बगियानाथन बनाम सचिव, तमिलनाडु सरकार तथा अन्य के विनिश्चय में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा यह विनिश्चित किया गया है कि औद्योगिक नियोजन (स्थायी आदेश) अधिनियम, 1946 एक विशेष प्रकृति का विधायन है, अतएव अधिनियम के उपबन्ध जिला परिषद् अधिनियम अथवा इस अधिनियम की धारा 74 के अन्तर्गत राज्य सरकार द्वारा निर्मित नियमों पर लागू होते हैं।

(च) विहित से तात्पर्य समुचित सरकार द्वारा इस अधिनियम के अधीन बनाये गये नियमों द्वारा विहित से है,

(छ) स्थायी आदेश से तात्पर्य इस अधिनियम की अनुसूची में वर्णित विषयों के सम्बन्ध में नियम से है,

स्थायी आदेश शब्द से इस अधिनियम की अनुसूची में वर्णित मामलों के सम्बन्ध में नियमावली से है। प्रत्येक नियोजक इस अधिनियम की अनुसूची में उपबन्धित किसी मामले के सम्बन्ध में स्थायी आदेशों में आवश्यक उपबन्ध करने के लिए बाधित होगा।

औद्योगिक नियोजन अधिनियम, 1946 के अधीन निम्नलिखित विषयों को स्थायी आदेशों में सम्मिलित किया गया है :

1. कर्मकारों का वर्गीकरण, यथा स्थायी शिशु, परिवीक्षाधीन या बदली कर्मकार
2. ऐसे कर्मकारों की काम की अवधियां घण्टों, अवकाश दिनों, वेतन दिवसों और मजदूरी की दरें प्रज्ञापित करने की रीति,
3. पारी में काम,
4. उपस्थिति और विलम्ब से आना,
5. अवकाश स्वीकृत करने वाले प्राधिकारी के पास आवेदन करने की शर्तें और प्रक्रिया
6. परिसर में प्रवेश निर्धारित द्वारों से हो और तलाशी के लिए दायित्वाधीन होना,

7. औद्योगिक संस्थापना के अनुभागों को बन्द करना और पुनः खोलना तथा काम का अस्थायी रूप से रोका जाना और उससे उत्पन्न कर्मकारों और नियोजकों के अधिकारों और दायित्वों के सम्बन्ध में उपबन्ध,
8. नियोजन का पर्यवसान तथा नियोजक और कर्मकारों द्वारा उसकी सूचना का दिया जाना,
9. अवचार के लिए निलम्बन या पदच्युति और ऐसे कृत्य या लोप जो अवचार घटित करते हों,
10. नियोजक या उसके अभिकर्ताओं या सेवकों द्वारा बर्ताब या सदोष अत्यादाय के विरुद्ध कर्मकारों के लिए प्रतितोष के साधन,
11. कोई अन्य विषय जो विहित किये जायें।

दि हिन्दू मद्रास बनाम दि हिन्दू आफिस एण्ड नेशनल प्रेस एम्पलाइज यूनियन के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय ने यह विचार अभिव्यक्त किया है कि, नियोजन के पर्यवसान और उस सम्बन्ध में नियोजक और कर्मकारों द्वारा दी जाने वाली नोटिस, जिसका प्रयोग अनुसूची के खण्ड 8 में किया गया है। यद्यपि प्रत्यक्षतः वे भिन्न दिखाई पड़ते हैं, किन्तु उनमें अन्तर्ग्रस्त मामले एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। नियोजन का पर्यवसान प्रधान या प्राथमिक विषय हो सकता है और उस सम्बन्ध में नोटिस का दिया जाना एक सहायक विषय माना जायेगा।

ग्लैक्सो लेबोरेटरीज (इण्डिया) लि० बनाम श्रम न्यायालय मेरठ तथा अन्य के विनिश्चय में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिकथन प्रस्तुत किया है कि दुराचरण विषयक प्रश्न का निर्धारण प्रबन्ध समिति की स्वेच्छा पर नहीं छोड़ा जा सकता। यदि किसी कर्मकार को दुराचरण के लिए दण्डित किया जा रहा है तो वह दुराचरण निश्चित रूप से स्थायी आदेश में उल्लिखित होना चाहिए। यदि कथित दुराचरण स्थायी आदेश में उल्लिखित नहीं है तो ऐसे कृत्य के लिए कर्मकारी को दण्डित नहीं किया जा सकता। एक ग्राहक को गेहूँ अधिक तोलने के दुराचरण के दीप के सम्बन्ध में कर्मकार को जाँच के बाद सेवा से निलम्बित कर दिया गया।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि एक मर्तबा की गई उपेक्षा दुराचरण नहीं है वरन् दुराचरण के दुष्कृत्य के लिए बार-बार उपेक्षा करना आवश्यक है। वी० के० वर्मा बनाम हिन्दुस्तान मशीन टूल्स लि० एवं अन्य के मामले में यह विनिश्चय किया गया है कि ड्यूटी से अनुपस्थित रहने की स्थिति में जहाँ मजदूरी को कटौती सम्बन्धी उपबन्ध स्थायी आदेशों में किये जाते हैं, यह नहीं कहा जा सकता है कि यह दण्डस्वरूप किया गया है। लेकिन आदतन विलम्ब से उपस्थित होने की स्थिति को स्थायी आदेशों के अन्तर्गत कदाचार कहा गया है। ऐसी स्थिति में मजदूरी करने के साथ-साथ कर्मकार के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही करना विधिसंगत होगा। एसोशियेटेड सीमेण्ट कम्पनी लि० बनाम टी० सी० श्रीवास्तव एवं अन्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि पदच्युति का दण्ड दिये जाने से पूर्व कर्मकार को अपना स्पष्टीकरण देने के लिए अवसर दिया जाना चाहिए। लेकिन कर्मकार को स्पष्टीकरण सम्बन्धों दूसरा अवसर दिये जाने का स्थायी आदेशों में कोई प्रावधान नहीं किया गया है। परन्तु स्थायी आदेशों के अन्तर्गत इस विषय पर कोई नियम प्रतिपादित किया

जा सकता है। एतदर्थ, किसी अन्य प्रकार की छानबीन वैध होगी यदि वह अन्यथा रूप से वैध है।

भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लि० बनाम महाराष्ट्र जनरल कामगार यूनियन और अन्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि स्थायी आदेश के अधीन लगाई गई वह शर्त तर्कपूर्ण एवं विधिसम्मत है जिसमें कहा गया है कि अनुशासनात्मक कार्यवाही के दौरान किसी कर्मचारी का प्रतिनिधित्व उसी संस्थान में कार्यरत अन्य कर्मचारी ही कर सकता है। न्यायालय ने अपने विनिश्चय में तार्किक रूप से स्पष्ट किया है कि उसी संस्थान का कोई सहकर्मी संस्थान में मौजूदा कार्यदशाओं से अपेक्षाकृत अधिक परिचित होता है तथा वह किसी बाहरी व्यक्ति के बनिस्बत उस कर्मचारी की सहायता करने में अधिक सक्षम होगा जिसके विरुद्ध प्रबन्धक अनुशासनात्मक कार्यवाही करना चाहता है।

जहाँ स्थायी आदेशों के अन्तर्गत कर्मकारों को पदच्युति के सम्बन्ध में कारण बताओ नोटिस दिया जाना है और ऐसे कारण उन्हें एक निर्धारित अवधि के अन्दर बताना है तो ऐसी नोटिस द्वारा कर्मकारों को एक युक्तिसंगत अवसर प्रदान करना चाहिए। यह एक ऐसी पूर्व शर्त है, जिसकी अनुपालना के बिना कोई भी पदच्युति सम्बन्धी आदेश वैध नहीं माना जायेगा। स्थायी आदेशों के उल्लंघन करने के परिणामस्वरूप यदि किसी कर्मकार की सेवायें स्वतः समाप्त कर दी जाती हैं तो ऐसे सेवा समापन को न्यायाधिकरण की स्वीकृति आवश्यक नहीं होगी।

अनुसूची का पैरा 11 सरकार को अनुसूची में कोई अन्य विषय बढ़ाने का प्राधिकार प्रदान करता है। समुचित सरकार द्वारा इस प्रकार से जोड़ा गया कोई विषय केवल उस समय उसकी क्षमता के अधीन माना जायेगा जबकि, उसका सम्बन्ध नियोजन की शर्तों से हो।

(ज) व्यवसायसंघ से अभिप्राय भारतीय व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 के अधीन तत्समय पंजीकृत व्यवसाय संघ से है।

(झ) 'मजदूरी' और 'कर्मकार' का यह अर्थ वही है जो उनका क्रमशः औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2 के खण्ड (द) तथा खण्ड (घ) में उपबन्धित किया गया है।

13.6 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कुमावत बालकृष्ण, औद्योगिक सन्नियम, साहित्य भवन पब्लिके^१न्स, आगरा
2. सिंह इन्द्रजीत, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ पब्लिके^१न्स, इलाहाबाद
3. मिश्र, सूर्य नारायण, श्रम एवं औद्योगिक विधि, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
4. शर्मा गंगा सहाय, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद

इकाई 14 श्रम संघ अधिनियम—1926

इकाई की रूप रेखा

- 14.0 प्रस्तावना
- 14.1 भारत में श्रम संघों का उद्भव एवं विकास क्रम
- 14.2 भारत में श्रम संघ के गठन के प्रारंभिक प्रयास
- 14.3 भारत में श्रम संघ आंदोलनों का उद्भव
- 14.4 अधिनियम का आरम्भिक स्वरूप
- 14.5 स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् श्रम संघ आंदोलन में विखराव
- 14.6 श्रम संघों की वर्तमान स्थिति
- 14.7 भारत में श्रम संघ विधायन का इतिहास
- 14.8 श्रम संघ अधिनियम 1926 के उद्देश्य
- 14.9 श्रम संघों का सांविधानिक स्वरूप
- 14.10 परिभाषाएँ
- 14.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

14.0 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थीजन आप इस इकाई में श्रम संघ अधिनियम 1926 के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे। जब भारत में औद्योगिक क्रांति आई तो दो वर्गों का उदय हुआ जिन्हें पूंजीवादी वर्ग एवं श्रमिक वर्ग कहा गया। औद्योगिक क्रांति के इतिहास में इन्हें पूंजीवादी एवं श्रमिक के नाम से संबोधित किया जाने लगा। इन दोनों वर्गों के अपने अपने अलग हित थे। अतः उनमें संघर्ष होना स्वाभाविक था। पूंजीपति वर्ग अधिक से अधिक लाभ कमाने की चेष्टा में लगे रहते थे। श्रमिक वर्ग समाज में व्याप्त सामाजिक-आर्थिक असमानता को दूर करने में लगे रहते थे तथा चाहते थे कि समाज में सभी प्रकार की असमानता दूर हो जाए तथा सभी का कल्याण हो सके। भारत में व्यवसाय संघों का उदय एवं विकास अन्य विकसित देशों जैसे जापान, इंग्लैण्ड, रूस, जापान, संयुक्त राज्य अमेरिका की तुलना में बहुत दीर्घ गति से प्रारंभ हुई थी। इन सभी के कारण भारत में औद्योगिक, धीमी औद्योगिक प्रगति, श्रमिकों में आपसी मनमुटाव इत्यादि ज्यादा हो गया था। व्यवसाय संघ अधिनियम 1926 एक ऐसा अधिनियम है जो व्यवसाय संघों के पंजीकरण के लिए अवसर प्रदान करता है। श्रम संघों का उद्भव एवं विकास औद्योगीकरण से उत्पन्न समस्याओं के निराकरण के लिए हुआ है इस अधिनियम को जब आप विस्तार से पढ़ेंगे तो आप इसकी विस्तृत रूप से व्याख्या कर सकेंगे।

14.1 भारत में श्रम संघों का उद्भव एवं विकास क्रम

प्रारम्भिक इतिहास

आधुनिक कारखाना पद्धति अथवा औद्योगिक क्रान्ति का प्रादुर्भाव सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में हुआ। इसके परिणामस्वरूप श्रम संघ भी सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में ही अस्तित्व में आये, तथा जैसे-जैसे औद्योगीकरण का प्रसार होता गया, श्रम संघों की भी स्थापना तीव्र गति से बढ़ती रही। आरम्भ में श्रम संघों का स्वरूप श्रमिक क्लब, रात्रि क्लब, शिकायत कमेटी अथवा हड़ताल समितियों के रूप में हुआ करता था, जोकि किसी विशेष आवश्यकता अथवा अवसर पर गठित की जाती थी और कार्य सम्पादन होने के पश्चात् उन्हें भंग कर दिया जाता था। कालान्तर में कुशल श्रमिकों ने अपने शिल्पीय एवं व्यावसायिक हितों की रक्षा एवम् अभिवृद्धि हेतु ट्रेड क्लबों तथा गिल्ड्स आदि का निर्माण किया। इसके निर्माता श्रम संघ इतिहास में 'नाइट ऑफ लेबर' की गरिमा से जाने गये। तदुपरान्त क्रमशः पेशेवर, व्यावसायिक तथा औद्योगिक श्रम संघों के आधुनिक स्वरूप का विकास हुआ।

औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप शनैः शनैः दो वर्गों का अभ्युदय हुआ जिन्हें पूँजीपति वर्ग एवं श्रमिक वर्ग कहा गया है। औद्योगिक क्रान्ति के इतिहास में इन्हें पूँजीपति एवं श्रमिक के नाम से सम्बोधित किया गया। इन दोनों वर्गों के पृथक-पृथक हित थे, अतः उनमें संघर्ष होना स्वाभाविक था। पूँजीपति अधिक से अधिक लाभ अर्जित करना चाहते थे। श्रमिक वर्ग समाज में व्याप्त सामाजिक-आर्थिक असमानता को दूर करना चाहते थे। वे कथित शोषण के खिलाफ संघर्ष के लिए लामबन्द होने लगे।

श्रम संघ आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य समाज के कतिपय लोगों के हाथों में अर्थतन्त्र के केन्द्रीयकरण के विरोध में संगठित आन्दोलन को अविचल शक्ति से आगे बढ़ाना था जिससे मेहनतकश वर्ग को आर्थिक शोषण से मुक्ति दिलाई जा सके। आर्थिक शोषण से मुक्ति मिलने पर हो लोकतंत्र को यथार्थवादी स्वरूप प्रदान किया जा सकता है। तभी आर्थिक एवं राजनीतिक लोकतंत्र एक दूसरे के परिपूरक कहे जा सकेंगे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि श्रम संघों का उद्भव एवं विकास स्वाभाविक रूप से आधुनिक औद्योगिक क्रान्ति एवं उससे उत्पन्न समस्याओं के परिणामस्वरूप हुआ है।

14.2 भारत में श्रम संघ के गठन के प्रारम्भिक प्रयास

ट्रेड यूनियन बनाने की जानकारी में भारत यूरोप के देशों से बहुत पीछे था। 1882 में भारत और बर्मा के रेल श्रमिकों ने एकीकृत संस्था के रूप में एक संगठन बनाया और इसे पंजीकृत भी कराया गया। इसमें यूरोपीय श्रमिकों की संख्या अधिक थी। इस संस्था का चरित्र पारस्परिक सहयोग की तरह का था। इसके कार्यक्रम ट्रेड यूनियनों की तरह के नहीं थे। 1908 के मारोशन श्रम आयोग ने कलकत्ता की दो यूनियनों का जिक्र किया है। इनमें से एक का नाम मुस्लिम संघ लिखा बताया था।

इसकी अलिखित संख्या हजारों में बताई गई थी। इसकी एक हजार सदस्यों की सामान्य सभा ने आयोग को देय मुद्दों का उल्लेख किया है। इसके पास 100 रुपये का कोष था। इसका दानपात्र से बीमार मजदूरों को सहायता या घर लौटने का किराया दिया जाता था। दूसरा संघ इण्डियन लेबर यूनियन का था। इसके अध्यक्ष एक वैरिस्टर थे। इसकी भूमिका श्रमिक विषयक न होकर कानूनी प्रतीत होती थी, क्योंकि उन्होंने बजबज जूट मिल के कई मजदूरों को आयोग के सामने बतौर साक्षी प्रस्तुत किया था। संगठन के उत्थान की यह दशा थी। अभी तक भारतीय मजदूर को यूनियन संगठन नसीब नहीं हुआ था।

14.3 भारत में श्रम संघ आन्दोलन का उद्भव

19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में भारत में भी कल-कारखाने अस्तित्व में आने लगे। आधुनिक कारखाना पद्धति के आधार पर यहाँ सर्वप्रथम वस्त्र उद्योग का सूत्रपात तथा विकास हुआ। कालान्तर में क्रमशः मशीनों वाष्प तथा विद्युत के प्रयोग से उत्पादन वृद्धि हेतु श्रमिकों के कार्यभार एवं कार्य अवधि में अत्यधिक वृद्धि होने लगी। पहली सूती कपड़ा मिल ने 1853 में बम्बई में उत्पादन कार्य प्रारम्भ कर दिया। 1958 में बंगाल में रिशड़ा में पहली जूट मिल में उत्पादन शुरू हुआ। पहली रेल लाइन 1852 में बिछाई गई। मालिकों ने महिला श्रमिकों तथा बाल श्रमिकों से रात-दिन काम लेना प्रारम्भ कर दिया, जो शोषण तथा उत्पीड़न की चरम स्थिति थी, इसके साथ ही साथ श्रमिकों को कार्य दशायें अत्यन्त अमानवीय थी, तथा वेतन नगण्य था, जिसके भुगतान की भी कोई उचित व्यवस्था नहीं थी।

कार्य की दशाओं को नियंत्रित करने के लिए कोई कारखाना अधिनियम पारित नहीं किया गया था। बिजली के बल्ब के आगमन के साथ कार्य दिवस पर लागू सूर्योदय और सूर्यास्त की प्राकृतिक सीमाओं ने भी काम करना बन्द कर दिया। खान श्रमिकों को कम वेतन दिया जाता था और खाने तो वस्तुतः मौत के कुर्ये थीं। हर कहीं मजदूर दरिद्रतम स्थितियों में टूटे-फूटे मकानों में रहते थे। बागान मजदूरों की हालत तो सबसे ज्यादा गयी गुजरी थी। वास्तव में, उद्योगों में एक तरह का जंगल राज कायम था। सर्वप्रथम कुछ समाज सुधारकों ने इस व्यवस्था के विरुद्ध जनमत जागृत करना आरम्भ किया। यहाँ से भारत में श्रम संघ आन्दोलन के अंकुर पैदा होने लगे।

14.4 अधिनियम का आरम्भिक स्वरूप

भारत में समाजसेवी एवं परोपकारी व्यक्ति श्रमसंघों के प्रथम निर्माता तथा व्यवस्थापक थे। इतिहास क्रम में सर्वश्री पी० सी० मजूमदार, ए० एस० बंगाली, शशिपद बनर्जी एवं राजा राममोहन राय जैसे प्रबुद्ध महानुभावों के नामों का उल्लेख किया जा सकता है, जिन्होंने श्रम संघों के शुद्ध आरम्भिक रूप श्रमिक क्लब, रात्रि पाठशालायें, वर्किंग मेन्स मिशन तथा पुस्तकालयों, प्रार्थना समाज, ब्रह्मसमाज आदि सामाजिक कार्यक्रमों और संस्थाओं के द्वारा श्रमिकों के कल्याण तथा उनमें शिक्षा और चेतना उत्पन्न करने का कार्य प्रारम्भ किया।

अकुशल एवं कुशल श्रमिकों की संख्या वृद्धि के साथ ही साथ औद्योगिक श्रमिक संघ तथा सामान्य श्रम संघों का भी निर्माण हुआ। भारत में इसका श्रेय सर्वश्री एन० एम० लोकखण्डे एवं बी० पी० वाडिया को दिया गया है, जिन्होंने क्रमशः बम्बई एवं मद्रास की कपड़ा मिलों के श्रमिकों को आधुनिक श्रम संघ के रूप में सर्वप्रथम संगठित किया।

1922 में अहमदाबाद में राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के मार्गदर्शन में वहाँ के समस्त शिल्पीय एवं पेशेवर श्रम संघों के सम्मेलन से मजूर महाजन संघ का निर्माण हुआ, जो आज भी देश के शक्तिशाली श्रम संघों में से एक है। 1922 में ही रेल उद्योग में औद्योगिक महासंघ का निर्माण हुआ, जिसने भारतीय श्रम संघ आन्दोलन में सदैव एक अहम् भूमिका का निर्वाह किया है। प्रथम महायुद्ध में रूस की जनक्रान्ति जैसी विश्व घटनाओं तथा स्वाधीनता संग्राम के राष्ट्रव्यापी आन्दोलन ने भारत के श्रमिक वर्ग को प्रभावित कर प्रतिष्ठा तथा श्रम संघ आन्दोलन को दिशा—निर्देश तथा गति प्रदान की।

1919 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन की स्थापना एवं उसके परिणाम 1920 में भारत के प्रथम केन्द्रीय श्रम संगठन आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस के अस्तित्व में आने के साथ ही भारत में श्रम संघों के प्रतिनिधित्व एवं परस्पर सम्बद्धता के युग का आरम्भ हुआ। 31 अक्टूबर, 1930 को बम्बई में ट्रेड यूनियनों के प्रथम राष्ट्रीय सम्मेलन का दीक्षान्त समारोह और भारतीय मजदूरों के पहले केन्द्रीय संगठन, अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (एटक) का जन्म हुआ। इस सम्मेलन में 800 प्रतिनिधि उपस्थित थे जो इससे सम्बद्ध 60 श्रम संघों और 40 सहानुभूति रखने वाले श्रम संघों के 5,00,000 से भी अधिक मजदूरों का प्रतिनिधित्व कर रहे थे। इसका अभिप्राय यह नहीं था कि एटक का गठन किसी एक व्यक्ति की आकांक्षा थी या फिर इस तरह की सामान्य बातों का परिणाम थी कि अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन में भारतीय श्रमिकों का प्रतिनिधित्व कौन करेगा। इसकी नींव पहले ही रखी जा चुकी थी। इस महान ऐतिहासिक घटना ने एक नये संगठन का परिचय कराया जो ट्रेड यूनियनों को, जिन्हें मजदूरों के संघर्ष और एकता में उनके काम के भिन्न—भिन्न स्थलों पर सामने ला दिया था, एक केन्द्रीय निर्देशन प्रदान कर सकती थी। भारत का मजदूर वर्ग और इसका ट्रेड यूनियन आन्दोलन इस प्रकार निर्णायक स्थिति में पहुँच गया। भारतीय व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 पारित किया गया जिसमें कुछ न्यूनतम शर्तों के अन्तर्गत ट्रेड यूनियनों को विधिक मान्यता प्रदान कर दी गयी। अधिनियम के अन्तर्गत ट्रेड यूनियनों के पंजीकरण की व्यवस्था की गयी तथा पंजीकृत ट्रेड यूनियन को कतिपय अधिकारों तथा उन्मुक्तियों के साथ सुसज्जित किया गया।

बार—बार यह दावा किया जाता रहा है कि अकेली भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया। यह सच है कि मुक्ति संघर्ष के राष्ट्रीय मोर्चे के रूप में इसकी भागीदारी काफी व्यापक है। मगर स्वाधीनता संघर्ष में मजदूर आन्दोलन की भूमिका को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। यह मजदूर संघर्षों के साथ ही बढ़ा और विकसित हुआ। हर कदम पर इसने स्वाधीनता संघर्ष को आगे बढ़ाने में मदद की, यद्यपि बहुत से वस्तुगत व व्यक्तिगत कारणों से

यह आन्दोलन मजदूर वर्ग की नेतृत्वकारी भूमिका स्थापित नहीं कर पाया। भारतीय मजदूर आन्दोलन उन बहुत सी धाराओं में से एक था जो हमारे स्वाधीनता संघर्ष के शक्तिशाली प्रवाह में आकर मिल गया।

14.5 स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् श्रम संघ आन्दोलन में बिखराव

शासक कांग्रेस राजनीतिक दल ट्रेड यूनियनों को अपने अधीन रखना चाहती थी क्योंकि इससे भारत को पूँजीवादी विकास के रास्ते पर अग्रसर करने में मदद पहुँचती थी। मई, 1947 में कांग्रेस मजदूर सेवा संघ द्वारा आयोजित भारतीय राष्ट्रीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (इन्टक) के उद्घाटन सत्र के अवसर पर अपने भाषण में तत्कालीन श्रम मन्त्री गुलजारी नन्दा, जिन्होंने बम्बई विधान सभा में बम्बई औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक को सदन के पटल पर रखा था, स्पष्ट रूप से कहा, इस समय की तात्कालिक आवश्यकता मजदूरों को उन बिखरी हुई ताकतों को एकजुट करने के लिए साधन जुटाने की है जो कम्युनिस्टों से मूलभूत विरोध रखते हैं। सरदार वल्लभ भाई पटेल कहीं ज्यादा स्पष्ट थे, उन्होंने कहा, एटक को सुधारना और इस पर कब्जा करना बिल्कुल निरर्थक है, क्योंकि कम्युनिस्ट यूनियनें बोगस सदस्य बनाती हैं और अनैतिक उपायों को अपनाने से भी नहीं हिचकतीं...जो कदम अब उठाया जा रहा है, दरअसल वह पहले ही उठा लिया जाना चाहिए था।

इस प्रकार मजदूर आन्दोलन के विभाजन का औचित्य सिद्ध कर दिया गया और इन्टक एटक के समकक्ष विचारधारात्मक, राजनीतिक और विरोधी ट्रेड यूनियनों के रूप में अस्तित्व में आ गई।

एन० एम० जोशी द्वारा दिये गये इन आरोपों के संयत उत्तर का हमें स्मरण करना चाहिए नवनिर्मित संगठन अखिल भारतीय राष्ट्रीय मजदूर कांग्रेस (इन्टक) वास्तव में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का एक सहायक अंग है और किसी भी तरह गैर-पार्टी या गैर-राजनीतिक श्रमिक संगठन नहीं है जैसा कि एटक है। यद्यपि आज एटक में कम्युनिस्टों का बहुमत है, मगर एटक द्वारा लिये गये सभी निर्णय समूचे एटक के निर्णय हैं.....दुर्भाग्यवश, घबराई हुई कांग्रेसी सरकारें सोचती हैं कि इस परेशानी से निकलने का सबसे सरल उपाय श्रमिकों की कतारों को बाँट देने में निहित है। इस विभाजन ने अन्य दूसरे विभाजनों और विघटन को प्रक्रिया को तेज कर दिया। 1948 में, समाजवादी एटक से निकल गये और उन्होंने एन० एम० राय के भारतीय श्रमिक संघ के साथ मिलकर मजदूर सभा बना ली।

रिपब्लिकन सोशलिस्ट पार्टी ने एक दूसरी यूनियन यूनाइटेड ट्रेड यूनियन कांग्रेस स्थापित करना उचित समझा। जब सोशलिस्ट यूनियन सेन्टर अस्तित्व में आया, तो इसने एक समानान्तर

अटक (यू० टी० यू० सी०) संगठित कर ली। सोशलिस्ट पार्टी में विभाजन ने हिन्द मजदूर को फिर से विभाजित कर दिया।

जनसंघ (जो अब भारतीय जनता पार्टी है) की उभरती हुई राजनीतिक आकांक्षाओं ने मजदूरों की निगाहें कीं। फौरन बाद ही इसने एक धार्मिक राष्ट्रवादी विचारधारा के साथ भारतीय मजदूर संघ की स्थापना की। इसके माने थे श्रम का राष्ट्रीयकरण उद्योगों का श्रमिकीकरण और देश का औद्योगीकरण। ईश्वर सम्पत्ति का मालिक है, और पूँजीपतियों व मजदूरों को एक औद्योगिक परिवार की तरह ईश्वरीय प्रबन्ध के अन्तर्गत रहना चाहिए। अतः कोई वर्ग संघर्ष नहीं, और कोई अन्तर्राष्ट्रीयतावाद नहीं। मई दिवस के बजाय विश्वकर्मा दिवस मनाओ। भारतीय मजदूर संघ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की विचारधारा को भी मजदूरों की कतारों में सम्मिलित कराता है।

अन्ततः भारतीय कम्युनिस्ट आन्दोलन में बिखराव से 1964 में एटक के भीतर अन्तः तनाव पैदा हो गये और 1970 तक भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी) द्वारा एक नया केन्द्रीय संगठन, सेन्टर ऑफ इण्डियन ट्रेड यूनियन्स (सीटू) स्थापित कर दिया गया। इस प्रकार वामपंथी ट्रेड यूनियन आन्दोलन भी विचारधाराओं के आधार पर विभाजित हो गया।

प्रत्येक राजनीतिक पार्टी का अलग ट्रेड यूनियन केन्द्र हो की प्रक्रिया और आगे बढ़ी है, यहाँ तक कि अब क्षेत्रीय पार्टियाँ भी अपने अलग ट्रेड यूनियन केन्द्र बनाने की कोशिश में लगी हुई हैं। इस स्थिति में, स्वतंत्र व असंबद्ध औद्योगिक श्रम संघों की प्रवृत्ति बढ़ी है। बेईमान और स्वार्थी लोगों द्वारा मजदूरों को और ज्यादा बाँटने और उन्हें भटकाने का षड्यन्त्र किया जा रहा है।

लेकिन निश्चय ही, जिन्दगी के अपने दबाव हैं। इस प्रकार, दोनों ही प्रक्रियायें साथ-साथ चल रही हैं।

जबकि बिखराव चल रहा है, एकता की जरूरत और इच्छा भी व्यापक रूप से बढ़ती जा रही है। ज्यादा से ज्यादा संयुक्त कार्यवाहियाँ और स्थायी संयुक्त फोरम पैदा हो रहे हैं।

14.6 श्रम संघों की वर्तमान स्थिति

जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है भारतीय श्रम संघ आन्दोलन अनेक टुकड़ों में बँटा हुआ है, जो विभिन्न राजनीतिक दलों की विचारधाराओं से जुड़ा हुआ है। इस समय भारत में निम्न प्रमुख केन्द्रीय श्रम संघ कार्यरत हैं—

1. आल इण्डिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस
2. इण्डियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस
3. सेन्टर ऑफ इण्डियन ट्रेड यूनियन

4. यूनाइटेड ट्रेड यूनियन काँग्रेस
5. हिन्द मजदूर सभा
6. भारतीय मजदूर संघ
7. हिन्द मजदूर पंचायत, इत्यादि।

उपर्युक्त में से पाँच संगठनों को भारत सरकार द्वारा केन्द्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त है। इन सभी से सम्बन्धित औद्योगिक महासंघ एवं स्थानीय संगठन देश के प्रायः सभी उद्योगों में कार्यरत हैं।

14.7 भारत में श्रम संघ विधायन का इतिहास

प्रथम विश्वयुद्ध (1914–18) के पश्चात् दो महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं ने विश्व स्तर पर श्रम आन्दोलन को गतिशीलता प्रदान की। प्रथम, सोवियत रूस में जारशाही शोषक राज्य को समाप्त कर बोलशेविक क्रान्ति के फलस्वरूप साम्यवादी राज्य की स्थापना हुई, जिसके अन्तर्गत श्रम संघों को समस्त संरक्षण प्रदान किया गया। दूसरी घटना 1920 में अन्तर्राष्ट्रीय मानचित्र पर अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन का उदय होना है। अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने विश्व के मजदूरों की अमानवीय दशा को सुधारने का संकल्प किया। भारत भी इन ऐतिहासिक घटनाओं से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका श्रम संघों ने श्रमिकों की दयनीय दशाओं में सुधार के लिये सामूहिक संघर्ष करना आरम्भ कर दिया। सन् 1923 में मद्रास उच्च न्यायालय ने मद्रास वस्त्रोद्योग श्रमिक संघ के पदाधिकारियों के विरुद्ध वित्ती कम्पनी के प्रबन्धकों की ओर से प्रस्तुत किये गये एक ऐतिहासिक विनिश्चय में आदेश प्रसारित करते हुए संघ के पदाधिकारियों को इस बात के लिए प्रतिबन्धित कर दिया कि वे कर्मचारियों को काम पर न लौटने के अपने निर्णय द्वारा नियोजन की संविदा को भंग करने के लिए प्रोत्साहित न करें। वस्तुतः उस मामले में व्यवसाय संघ के पदाधिकारियों को अपने आपको अभियोजन एवं कारावास के सुपुर्द करना पड़ा, यद्यपि उन्होंने श्रमिक संघ विषयक मान्य उद्देश्यों एवं क्रियाकलापों में भाग लिया था। इस घटना से उन्हें इस तथ्य का आभास हुआ कि श्रमिक संघों को विधायिनी संरक्षण प्राप्त होना नितान्त आवश्यक है। तत्कालीन श्रमिक नेता श्री एन० एम० जोशी ने केन्द्रीय विधान सभा के समक्ष एक प्रस्ताव रखा जिसमें यह माँग की गई कि श्रमिक संघों एवं उनके पदाधिकारियों को संरक्षण प्रदान करने के लिए प्रभावपूर्ण विधि का होना अत्यन्त आवश्यक है। यद्यपि यह प्रस्ताव नियोजकों को पसन्द नहीं आया फिर भी सन् 1926 में व्यवसाय संघ अधिनियम पारित कर दिया। यह अधिनियम 1 जून, 1927 को प्रभावी बनाया गया।

सन् 1926 के उपर्युक्त मूल अधिनियम में सन् 1929 एवं 1947 के संशोधन अधिनियमों द्वारा कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये। इसके पश्चात् स्थायी श्रम समिति द्वारा दिये गये सुझावों के आधार पर एक व्यवसाय संघ विधेयक फरवरी, 1950 में भारतीय संसद के समक्ष

प्रस्तुत किया गया जिसमें नियोजकों द्वारा श्रम संबंधों को मान्यता देने सम्बन्धी नवीन उपबन्ध प्रस्तुत किये गये। परन्तु किन्हीं कारणवस प्रस्तावित विधेयक विधि के रूप में आज तक पारित नहीं किया जा सका।

तदुपरान्त सन् 1952 में भारतीय श्रम सम्मेलन के अधिवेशन में व्यवसाय संघों के सम्बन्ध में एक उपयुक्त विधि पर विचार किया गया एवं आगे चलकर 1960 में अधिनियम की धारा 2 (च), 3, 4, 6, 14 और 28 में कुछ संशोधन किये गये। पुनः 1964 में कुछ कारणवश परिवर्तन किये गये। राष्ट्रीय श्रम आयोग ने श्रमिकों के अनुशासन के सम्बन्ध में अनुशासन संहिता का एक प्रलेख प्रकाशित किया है, जिसमें व्यवसाय संघों के गठन, पंजीकरण और मान्यताप्राप्त संघों के अधिकारों, अनुचित श्रम अभ्यासों, हड़तालों और तालाबन्दियों पर प्रतिबन्ध आदि विषयों पर अनेक प्रस्ताव प्रस्तुत किये हैं। सन् 1977 के निर्वाचन के बाद भारत के राजनीतिक नेतृत्व में कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। केन्द्रीय सरकार तथा विभिन्न राज्य सरकारों में जनता पार्टी का शासन प्रारम्भ हुआ। जनता सरकार ने प्रारम्भ में एक ही विधेयक— औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक का प्रारूप तैयार कर संसद के समक्ष प्रस्तुत किया था जिसमें व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 को एक जगह संकलित कर अनेक बुनियादी परिवर्तन करने का प्रस्ताव था। 30 अगस्त, 1978 को लोकसभा में प्रस्तुत किये गये औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक को संयुक्त प्रवर समिति को सुपुर्द कर दिया गया है, जिसमें श्रमिक संघों के गठन व पंजीकरण की शर्तें, पंजीकृत श्रम संघों के अधिकार तथा दायित्वों पर व्यापक उपबन्ध किये गये हैं।

इस विधेयक को प्रारम्भ से ही अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। सभी व्यवसाय संघों ने इस विधेयक का विरोध किया। जनता सरकार के केन्द्रीय शासन में न रहने के फलस्वरूप यह विधेयक अधर में पड़ा हुआ है। 1-2-1992 को दिल्ली में आयोजित श्रम मंत्रियों के सम्मेलन में नये औद्योगिक सम्बन्ध विधेयक पर विस्तार से विचार-विमर्श किया गया तथा यह निर्णय लिया गया कि प्रस्तावित विधेयक का प्रारूप अविलम्ब तैयार किया जाये तथा संसद् के आगामी अधिवेशन में प्रस्तुत किया जाये। लेकिन इस प्रक्रिया में स्थिति बनी हुई है।

14.8 श्रम संघ अधिनियम, 1926 के उद्देश्य

भारत में व्यवसाय संघ का उदय एवं विकास अन्य विकसित देशों से संगुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैण्ड, जापान, रूस इत्यादि की तुलना में बहुत धीमी गति से प्रारम्भ हुआ। इसके प्रमुख कारण भारत में व्याप्त अशिक्षा, धीमी औद्योगिक प्रगति, श्रमिकों में आपसी विद्वेष तथा वैमनस्य, राजनीतिक दलों का श्रम संघों पर अत्यधिक प्रभाव, श्रमिकों के बीच में से श्रमिक नेताओं का न उभर पाना एवं व्यवसाय संघ सम्बन्धी जटिल विधिक प्रक्रिया है। श्रमिकों में व्यक्तिगत सौदा क्षमता कितनी कम होती है यह सर्वविदित है। संयुक्त एवं सामूहिक रूप से वे

अपने कार्यों की दशाओं, नियोजन की शर्तें जैसे उचित मजदूरी, महंगाई भत्ते, बोनस, उपदान जैसे संवेदनशील विषयों में परिवर्तन एवं संशोधन करवा सकते हैं।

श्रम संघ, नियोक्ता के साथ किसी भी प्रकार के औद्योगिक विवाद का हल निकालने के लिए हड़ताल कर सकते हैं अथवा औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 में निर्धारित प्राधिकारियों से समझौता वार्ता एवं अन्य कार्यवाही प्रारम्भ कर सकते हैं। श्रम संघ श्रमिकों को और से औद्योगिक न्यायाधिकरणों में प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। इस संदर्भ में श्रम संघ के पदाधिकारियों को श्रमिकों की ओर से मजदूरी भुगतान, न्यूनतम मजदूरी भुगतान, विभिन्न पदाधिकारियों के समक्ष एवं न्यायालयों में उपस्थित होने के लिये एवं श्रमिकों को ओर से न्यायाधिकरणों में बाद लड़ने के लिये अधिकृत किया गया है।

वर्तमान औद्योगिक प्रगति के युग में श्रमिकों का संगठित होना अनिवार्य है। इनके संगठन किस प्रकार बनाये जायें, उनका पंजीयन किस प्रकार किया जाय और पंजीयित श्रम संघों एवं उनके पदाधिकारियों को क्या विशेष अधिकार होंगे, आदि का प्रावधान इस अधिनियम में समुचित रूप से किया गया है। श्रम संघ, श्रमिकों के सर्वांगीण विकास, सुरक्षा एवं हितवर्धन हेतु लोकतान्त्रिक ढंग से सामूहिक कार्यों के माध्यम से निरन्तर कार्य करने वाले स्थायी संगठन हैं। इनका तात्कालिक, प्रत्यक्ष एवं सर्वप्रमुख उद्देश्य अपने सदस्यों अर्थात् श्रमिक समुदाय के आर्थिक हितों को सुरक्षा एवं अभिवृद्धि करना होता है।

व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 एक ऐसा अधिनियम है जो व्यवसाय संघों के पंजीकरण के लिए अवसर प्रदान करता है। अधिनियम एक यूनियन के संविधान व कार्यप्रणाली, सामान्य एवं राजनीतिक कोष के उपयोग, वार्षिक विवरण के प्रस्तुतीकरण और ऐसा न करने की स्थिति में दण्ड के लिए न्यूनतम नियम प्रस्तुत करता है। अधिनियम के अंतर्गत विभिन्न राज्य सरकारों ने नियम बनाये हैं एवं पंजीकरण हेतु आवेदनपत्र प्रस्तुत करने व वार्षिक विवरणों आदि को प्रस्तुत करते समय व्यवसाय संघों द्वारा इन नियमों का सन्दर्भ प्रस्तुत करना आवश्यक होता है।

व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 की धारा 15, 16, 17 एवं 18 के अन्तर्गत पंजीकृत व्यवसाय संघ के अधिकार एवं दायित्व प्रावधित किये गये हैं जो इस अधिनियम के महत्वपूर्ण उद्देश्य है। धारा 15 सामान्य विधि के व्यय पर प्रतिबन्ध प्रस्तुत करती है। व्यवसाय संघ की सामान्य निधियों का उपयोग केवल व्यवसाय संघ के उद्देश्यों के लिए ही किया जा सकता है। अधिनियम के अन्तर्गत व्यवसाय संघों को ऐसे राजनीतिक उद्देश्यों के लिए कार्य करने हेतु अधिकृत किया गया है जो उसके प्राथमिक उद्देश्यों से असंगत न हों। अधिनियम की धारा 17 अपराधिक षडयंत्र के सम्बन्ध में भारतीय दण्ड संहिता की धारा 120(ख) के अन्तर्गत किये गये अपराध के लिए उन्मुक्ति प्रदान करती है। अधिनियम की धारा व्यवसाय संघ के पदाधिकारियों तथा सदस्यों को दीवानी वादों से उन्मुक्ति प्रदान करती है।

श्रम संघों का उद्भव एवं विकास औद्योगीकरण से उत्पन्न समस्याओं के निराकरण के लिये हुआ है। ये वर्तमान औद्योगिक जीवन की अभिन्न एवं अनिवार्य इकाईयों हैं इनके बिना आज उद्योग-धन्धों की कल्पना भी नहीं की जा सकती। औद्योगिक जीवन के इस आधारभूत स्तम्भ की अनिवार्यता का बोध श्रम संघ आन्दोलन के इतिहास पर सूक्ष्म एवं विहंगम दृष्टि डालने से हो होता है।

14.9 श्रम संघों का सांविधानिक स्वरूप

संघ निर्माण की स्वतंत्रता को किसी सभ्य समाज की आधारशिला माना गया है। सुव्यवस्थित लोकतांत्रिक व्यवस्था स्थापित करने के लिए संस्थाएँ व संघ निर्माण का अधिकार अत्यन्त आवश्यक समझा गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1) (ग) के अधीन भारत के नागरिकों को संस्थाएँ व संघ बनाने का मूल अधिकार प्रदान किया गया है। संसदीय शासन प्रणाली में विभिन्न संस्थाओं या श्रमिक संघों को आवश्यकता होती है जिससे वे राज्य को निरंकुशता तथा अलोकतंत्रीय कार्यपद्धति पर रोक लगा सकें। 1 अनुच्छेद 19(1) (ग) के अधीन निर्मित की जाने वाली संस्थाएँ व्यापारिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा मनोरंजन कार्यों के लिए हो सकती हैं। उदाहरणस्वरूप, कम्पनी, साझेदारी फर्म, व्यवसाय संघ, क्लब, विद्यार्थियों के संगठन आदि का गठन इसी अधिकार में सम्मिलित किये जा सकेंगे। इस अधिकार में केवल संघ अथवा संस्थाएँ बनाने का अधिकार मात्र हो सम्मिलित नहीं किया गया है बल्कि उन्हें सुचारु रूप से संचालित करना तथा उन्हें अनवरत रूप से जारी रखने का अधिकार भी सम्मिलित है। इसी भाँति नागरिकों को व्यवसाय संघों की सदस्यता प्राप्त करने का भी पूर्ण अधिकार है अन्य स्वतंत्रताओं की भाँति संस्था अथवा व्यवसाय संघ बनाने को स्वतंत्रता भी निरपेक्ष नहीं है। नागरिकों की इस स्वतन्त्रता पर राज्य द्वारा निम्न आधारों पर युक्तियुक्त निर्बन्धन स्थापित किया जा सकता है—

- (1) भारत को सम्प्रभुता व अखण्डता
- (2) लोक व्यवस्था, एवं
- (3) नैतिकता।

कुलकर्णी बनाम बम्बई राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अपनी अवधारणा अभिव्यक्त करते हुए कहा है कि यदि कोई विधि यह उपबन्धित करती है कि किसी उद्योग का केवल वह श्रमिक संघ, जिसे प्रतिनिधि श्रमिक संघ माना गया है तथा जिसमें उस औद्योगिक प्रतिमान के कम से कम 15 प्रतिशत सदस्य ऐसे श्रमिक संघ को ही औद्योगिक विवादों के निपटाने की दृष्टि से प्रतिनिधि व्यवसाय संघ माना जायेगा। यह व्यवस्था उच्चतम न्यायालय के अनुसार असंवैधानिक नहीं है क्योंकि इसके द्वारा नागरिकों के संघ बनाने के अधिकार पर किसी भाँति हस्तक्षेप नहीं किया गया है।

अखिल भारतीय बैंक कर्मचारी संघ बनाम राष्ट्रीय औद्योगिक अधिकरण, मुम्बई में उच्चतम न्यायालय ने अपना अभिमत स्पष्ट करते हुए यह अवधारणा व्यक्त की है कि व्यवसाय संघ बनाने के अधिकार का उदारण से निर्वचन करना एक बात है और उसके सहायक अन्य अधिकारों का सृजन करना दूसरी बात है। हड़ताल, तालाबन्दी आदि सभी व्यवसाय संघों द्वारा सामूहिक सौदेबाजी करने के साधन मात्र हैं। इन सबका अनुच्छेद 19(1) (ग) से कोई सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता है। अतएव विधि द्वारा उन पर पृथक से निर्वन्धन प्रस्तुत किया जा सकता है। इसी भाँति व्यवसाय संघ बनाने के सांविधानिक अधिकार का यह तात्पर्य नहीं है कि संघ के उद्देश्यों को भी सांविधानिक मान्यता प्रदान की जाये।

बालकोटिया बनाम भारत संघ के मामले में प्रार्थी को एक सेवा नियम के अनुसार कम्प्युनिष्ट पार्टी अथवा श्रमिक संघ का सदस्य होने के नाते नौकरी से निकाल दिया गया था। प्रार्थी ने न्यायालय में यह तर्क प्रस्तुत किया है कि उसे सेवामुक्त कर वस्तुतः उसके संघ बनाने के अधिकार से वंचित किया गया है। प्रस्तुत मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि पदच्युति आदेश संविधान के अनु० 19 (1) (ग) के विरुद्ध नहीं है, क्योंकि आदेश प्रार्थी को कम्प्युनिष्ट बनाने अथवा श्रम संघ का सदस्य बनने से मना नहीं करता है। प्रार्थी को संघ बनाने के अधिकार से वंचित नहीं करता है। प्रार्थी को संघ बनाने का मूल अधिकार प्राप्त है, किन्तु उसे राजकीय सेवा में बने रहने का मूल अधिकार प्राप्त नहीं है। संघ बनाने के अधिकार में हड़ताल करने या तालाबन्दी करने का अधिकार सम्मिलित नहीं है।

पंजीकृत व्यवसाय संघ का विधिक चरित्र—क्या पंजीकृत व्यवसाय संघ एक विधिक व्यक्ति है? व्यवसाय संघ अधिनियम की धारा 13 के अन्तर्गत इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक रूप में दिया जा सकता है। एक अपंजीकृत व्यवसाय संघ को वे अधिकार एवं दायित्व सुपुर्द नहीं किये जा सकते जो एक पंजीकृत व्यवसाय संघ को उपलब्ध होंगे। विधिक व्यक्ति होने के नाते एक पंजीकृत व्यवसाय संघ को सम्पत्ति अर्जित करने, धारण करने एवं विसर्जित करने के अधिकार प्राप्त होंगे। ऐसे व्यवसाय संघ को यह अधिकार प्राप्त होगा कि वह न्यायालय में वाद प्रस्तुत कर सके तथा स्वयं उनके विरुद्ध वाद प्रस्तुत किये जा सकेंगे। व्यवसाय संघ को अनवरत उत्तराधिकार का अधिकार प्राप्त होगा तथा यह एक सामान्य मोहर के अधीन अपने कार्यों को सम्पादित कर सकेगी। पंजीकृत व्यवसाय संघ को संविदा का अधिकार भी प्राप्त होगा।

चेमोसिन प्राइवेट लि० एवं अन्य बनाम केरल मेडिकल एवं सेल्स प्रतिनिधि संघ के मामले में केरल उच्च न्यायालय के समक्ष विचारार्थ प्रश्न यह था कि क्या एक पंजीकृत व्यवसाय संघ भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत जबाबदेह है अर्थात् क्या उसके विरुद्ध उच्च न्यायालय द्वारा रिट जारी की जा सकती है। केरल उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में यह स्पष्ट किया है कि ट्रेड यूनियन न तो राज्य की कोई एजेंसी है और न हो उसका उपकरण ट्रेड यूनियन कोई विधायिनी इकाई नहीं है न ही इसका गठन विधायिनी प्रावधानों के अधीन

किया जाता है। अतएव, ट्रेड यूनियन की गतिविधियों को संविधान के अनुच्छेद 226 के क्षेत्राधिकार के अधीन नियंत्रित नहीं किया जा सकता है।

14.10 परिभाषाएँ

व्यवसाय संघ अधिनियम की धारा 2 के अन्तर्गत दी गई उपधाराओं में अनेक शब्दों को भलीभाँति परिभाषित किया गया है, जिनका विश्लेषण निम्न प्रकार है— समुचित सरकार — इस अधिनियम में केन्द्रीय सरकार से अभिप्राय तथा केन्द्रीय सरकार का सम्बन्ध उन श्रम संघों से होगा जिनका उद्देश्य एवं कार्य किसी एक राज्य की सीमाओं तक ही सीमित नहीं है। इसके विपरीत अन्य ऐसे श्रमिक संघों के सम्बन्ध में जिनका सम्बन्ध एक ही राज्य के भीतर है, समुचित सरकार का अभिप्राय राज्य सरकार से होगा। जब तक कि विषय एवं प्रसंग से कुछ विपरीत सिद्ध नहीं हो जाता, श्रम संघों के सम्बन्ध में राज्य सरकार ही समुचित सरकार मानी जायेगी।

व्यवसाय संघों की गतिविधियों भिन्न-भिन्न स्थानों से सम्बन्ध रखती हैं। इसलिए केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों को अलग-अलग करना आवश्यक होता है। कुछ उद्योग केवल केन्द्रीय सरकार के अधीन समझे जाते हैं जबकि कतिपय उद्योगों का सम्बन्ध राज्य सरकार से होता है। अतः या तो उद्योग के स्वभाव या अपने राष्ट्रीय महत्व के कारण श्रम संघों की कार्यवाहियों की व्यापकता को ध्यान में रखकर इस प्रकार क्षेत्राधिकार का विभाजन किया गया है। इस सम्बन्ध में यह कहना समीचीन होगा कि क्षेत्राधिकार का विभाजन कोई जलरोधक के समान नहीं है, बल्कि इसमें लचीलापन है।

(क) कार्यकारिणी — अधिनियम की धारा 2 (क) के अनुसार कार्यकारिणी से अभिप्राय किसी व्यवसाय संघ के मामलों की प्रबन्ध व्यवस्था का कार्य सुपुर्द किये जाने वाले निकाय से है। यहाँ यह कहना आवश्यक है कि कार्यकारिणी को निकाय कहे जाने के लिए उस व्यवसाय संघ की प्रबन्ध व्यवस्था का भार सुपुर्द किया जाना आवश्यक है। एम० एल० गर्ग बनाम श्रम न्यायालय मेरठ के विनिश्चय में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अवधारित किया है कि यदि किसी व्यवसाय संघ में नीति-निष्पादन हेतु किसी उपसमिति का गठन किया गया है जिसने श्रमिक के हितलाभ के लिए कोई प्रस्ताव पारित किया है तो ऐसे प्रस्ताव को आवृत्त करना आवश्यक है।

(ख) पदाधिकारीगण— पदाधिकारीगण से अभिप्राय उन समस्त सदस्यों से होता है जो कार्यकारिणी के सदस्य होते हैं, किन्तु इस परिभाषा में लेखक परीक्षक को समाविष्ट नहीं किया गया है। अतएव लेखक-परीक्षक किसी व्यवसाय संघ का पदाधिकारी होने का अधिकार ग्रहण नहीं कर सकता।

(ग) विहित विहित से यहाँ अभिप्राय इस अधिनियम के अन्तर्गत निर्मित नियमों आदि से है।

(घ) पंजीकृत कार्यालय— पंजीकृत कार्यालय से अभिप्राय व्यवसाय संघ के उस कार्यालय से हैं जो कि इस अधिनियम के अधीन उस व्यवसाय संघ के प्रधान कार्यालय के रूप में पंजीकृत है।

(ङ) पंजीकृत व्यवसाय संघ— पंजीकृत व्यवसाय संघ से अभिप्राय इस अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत व्यवसाय संघ से है।

(च) पंजीयक—पंजीयक से निम्नलिखित आशय है—

- (1) अधिनियम की धारा 3 के अधीन समुचित सरकार द्वारा नियुक्त, व्यवसाय संघों का पंजीयक—पंजीयक शब्द के अन्तर्गत व्यवसाय संघ के अतिरिक्त पंजीयक या उपपंजीयक भी सम्मिलित होंगे।
- (2) किसी व्यवसाय संघ के सम्बन्ध में उस राज्य के लिये नियुक्त किया गया पंजीयक जिसमें व्यवसाय संघका प्रधान या पंजीकृत कार्यालय स्थित है। (छ) व्यवसाय विवाद — व्यवसाय विवाद से तात्पर्य ऐसे विवाद से है जो निम्न पक्षकारों के बीच अभिप्रेत है—

(क) नियोजकों और कर्मकारों के बीच, अथवा

(ख) कर्मकारों और कर्मकारों के बीच, अथवा

(ग) नियोजकों और नियोजकों के बीच।

ऐसे व्यवसाय विवाद का सम्बन्ध निम्नलिखित विषयों से सम्बन्धित होना चाहिये— (1) किसी व्यक्ति का नियोजन अथवा अनियोजन, अथवा

(2) नियोजन की शर्तें, अथवा

(3) श्रमिकों की कार्य दशायें।

इस अधिनियम में उपबन्धित की गई व्यवसाय विवाद की परिभाषा, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2 (ट) में दी गई औद्योगिक विवाद शब्द की परिभाषा के समरूप है। व्यवसाय विवाद के लिये यह आवश्यक है कि एक पक्षकार की ओर से कोई माँग प्रस्तुत की जाये और दूसरे पक्षकार की ओर से उस माँग को अस्वीकृत किया जाये। एक पक्ष द्वारा माँग प्रस्तुत करना अपने आप में व्यवसाय विवाद नहीं हो सकता। तात्पर्य यह है कि माँग को किसी भी माध्यम द्वारा दूसरे पक्षकार तक पहुँचाना अत्यन्त आवश्यक है। एम० एल० गर्ग बनाम श्रम न्यायालय, मेरठ के विनिश्चय में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि किसी व्यवसाय विवाद को उस समय तक उत्पन्न नहीं हुआ कहा जा सकता जब तक कि दूसरे पक्षकार को उस सम्बन्ध में विचार व्यक्त करने का अवसर न दे दिया जाये। प्रस्तुत मामले में न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि विवाद के सम्बन्ध में स्वीकारात्मक या

नकारात्मक कोई उत्तर दिया जाना आवश्यक है। ऐसा व्यवसाय विवाद सम्बन्धित पक्षकारों के बीच वास्तविक और सारवान प्रकृति का होना चाहिये।

दीमाकुची टी एस्टेट के कर्मचारीगण बनाम दीमाकुची टी एस्टेट के प्रबन्धकगण के मामले में उच्चतम न्यायालय ने इस सम्बन्ध में यह अभिनिर्धारित किया है कि जब तक विवाद से सम्बन्धित पक्षकारों का किसी नियोजन, अनियोजन या उन श्रमिकों को श्रम दशाओं से जिनके सम्बन्ध में वह विवाद प्रस्तुत किया गया है प्रत्यक्षतः सम्बन्ध नहीं है तब तक उस विवाद को सम्बन्धित पक्षकारों के बीच यथार्थ व सारवान नहीं कहा जा सकता। संक्षेप में इस मामले के तथ्य इस प्रकार थे कि एक चाय संस्थान के कर्मचारियों ने एक ऐसे व्यक्ति की सेवा की दशाओं के सम्बन्ध में विवाद उठाया था जो कि उनकी कार्य श्रेणियों में सम्मिलित नहीं था। उच्चतम न्यायालय ने इस सन्दर्भ में यह निर्णय दिया कि विधि की दृष्टि में कोई व्यवसाय विवाद उत्पन्न नहीं हुआ है क्योंकि अपीलार्थी का उसके नियोजन या अनियोजन के सम्बन्ध में यहाँ कोई प्रत्यक्ष या सारवान हित अन्तर्निहित नहीं है, भले ही वह कर्मचारी व्यवसाय संघ का एक सदस्य रहा हो। स्टैंडर्ड वैकुअम रिफाइनिंग कम्पनी बनाम उनके कर्मकारगण के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अभिकथित किया है कि सम्बद्ध विषय यथार्थतः कर्मकारों से सम्बन्ध रखता है। तथ्यों के परीक्षण से यह परिलक्षित नहीं होता है कि कथित विवाद समवाय और उसके कर्मकारों के बीच सारवान विवाद नहीं है।

विवाद से सम्बन्धित तथ्य इस प्रकार थे कि तेल-समवाय के कर्मकारों ने यह माँग की थी कि ठेकेदारों के माध्यम से नियोजित किये गये श्रमिकों को उस समवाय का नियमित कर्मकार माना जाये। इस परिभाषा के सन्दर्भ में नियोजन की शर्तों में वे सभी विषय सम्मिलित किये जाते हैं जो नियोजन के ठहराव के समय स्पष्ट रूप से तय कर लिये गये हैं, जैसे अवकाश के दिनों का भुगतान, काम के घण्टे अधिसमय भत्ता, वेतन, बोनस, इत्यादि इसी भाँति उपदान, सेवानिवृत्ति, भविष्य निधि, आदि को नियोजन की शर्तों में सम्मिलित किया जा सकता है। कार्यों की दशाओं में भी वे सभी भौतिक अवस्थाएँ सम्मिलित की जायेंगी जिनके अन्तर्गत कर्मकार को कार्य करना होता है, जैसे स्वास्थ्य, बिजली की व्यवस्था, कैंटीन तथा अन्य कल्याणकारी सुविधायें। इस उपधारा में प्रयुक्त किसी व्यक्ति का पदावली से यह अर्थ आवश्यक नहीं है कि ऐसा व्यक्ति कर्मकार ही हो। यहाँ यह स्पष्ट कर देना उपयुक्त होगा कि वह ऐसा कोई भी व्यक्ति हो सकता है

जिसके नियोजन अथवा अनियोजन या नियोजन की शर्तों या सम की दशाओं में कर्मकारों का सारवान एवं यथार्थ हित निहित हो।

उपर्युक्त परिभाषा से यह स्पष्ट परिलक्षित है कि व्यवसाय विवाद आर्थिक विषयों के सम्बन्ध में पक्षकारों के बीच आपसी तनाव तथा मतभेद है जहाँ सामूहिक सौदेबाजी के फलस्वरूप पक्षकार किसी निर्णय तक पहुँचने में असफल रहते हैं।

कर्मकारगण — कर्मकारगण की अधिनियम में पृथक से कोई परिभाषा नहीं दी गई है,

अपितु व्यवसाय विवाद को परिभाषा के अन्तर्गत ही इस शब्द को स्पष्ट किया गया है। कर्मकारगण से तात्पर्य ऐसे सभी व्यक्तियों से है जो व्यापार या उद्योग में नियुक्त हैं चाहे वे उस नियोजन के नियोजन में हो अथवा नहीं, जिसके साथ औद्योगिक विवाद उत्पन्न हुआ है। कर्मकारगण में दो आवश्यक तत्व सम्मिलित किये गये हैं—

1. ऐसे सभी व्यक्ति जो कारबार या उद्योग में नियोजित किये गये हैं, कर्मकारगण होंगे।
2. कर्मकारगण की परिभाषा से यह स्पष्ट है कि यह आवश्यक नहीं है कि वह नियोजक के नियोजन में हो जिसके साथ वह विवाद उत्पन्न हुआ है।

यहाँ यह स्पष्ट कर देना उचित प्रतीत होता है कि व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 में कारबार या उद्योग की परिभाषा नहीं दी गई है। अतएव हमें उद्योग शब्द की परिभाषा औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2(ज) से ग्रहण करनी होगी। धारा 2 (ज) के अनुसार उद्योग से कोई कारवार, व्यापार, उपक्रम, अभिनिर्माण या नियोजकों की आजीविका अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत कर्मकार की कोई अजीविका, सेवा, नियोजन, हस्तशिल्प या औद्योगिक उपजीविका या उपव्यवसाय भी सम्मिलित है। बम्बई राज्य बनाम अस्पताल मजदूर संघ के मामले में न्यायाधिपति गजेन्द्रगडकर ने उद्योग शब्द पर अपनी टिप्पणी करते हुए कहा है—उद्योग क्रमबद्ध रूप से की गई ऐसी क्रिया है जो कि माल के उत्पादन या वितरण से सम्बन्धित है या व्यापक समुदाय को तात्त्विक सेवा या ऐसे समुदाय के किसी भाग की सेवा की कर्मचारियों की सहायता करने के लिये व्यवस्थित है। अतएव औद्योगिक क्रियाकलाप में नियोजक और कर्मचारी का सहयोग आवश्यक है और इसका मुख्य प्रयोजन मानवीय भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करना है।

विश्वविद्यालय, महाविद्यालय या कोई धार्मिक संस्था के कर्मचारी यदि श्रम संघ बनाये तो इस अधिनियम में उनका पंजीयन नहीं हो सकता। इसी भाँति यदि कोई दण्डाधिकारी, तहसीलदार, कोषालय अधिकारी, दीवानी न्यायालय, प्रशासन के अधिकारी कोई संघ बनाना चाहें तो अधिनियम को धारा 8 में को उनका पंजीयन नहीं हो सकता क्योंकि वे प्रभुसत्ता के कार्यों में कार्यरत हैं। औद्योगिक विवाद (संशोधन अधिनियम, 1982 के अधीन उद्योग शब्द को एक नई परिभाषा प्रदान की गई है, जो पूर्व में निर्णित एवं में विनिश्चयों के प्रभाव को समाप्त कर नई अवधारणा प्रस्तुत करती है। कथित संशोधन द्वारा विभिन्न अन्तर्विरोधों को समाप्त कर उद्योग की परिभाषा को अधिक बोधगम्य बनाया गया है।

(ज) व्यवसाय संघ— व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 की धारा 2(ज) में व्यवसाय संघ को निम्न भाँति परिभाषित किया गया है.

व्यवसाय संघ से अस्थायी या स्थायी कोई भी ऐसा समुच्चय अभिप्रेत है जो कर्मकारों और नियोजकों के बीच के या कर्मकारों और कर्मकारों के बीच के या नियोजकों और नियोजकों के बीच के सम्बन्धों को विनियमित करने के प्रयोजन के लिये या किसी व्यवसाय या कारबार के संचालन पर निर्बन्धनात्मक शर्तें अधिरोपित करने के लिये प्रथमतः बनाया गया है, और इसमें दो या दो से अधिक व्यवसाय संघों का कोई परिसंघ भी सम्मिलित किया गया है। परन्तु अधिनियम में प्राविधित व्यवसाय संघ की परिभाषा निम्नलिखित क्रियाओं पर प्रभाव नहीं डालेगी—

- (i) भागीदारों के बीच उनके कारबार के सम्बन्ध में की गई संविदा,
- (ii) नियोजक और उस नियोजन में नियोजक द्वारा नियोजित व्यक्तियों के बीच की गई कोई संविदा,
- (iii) किसी कारोबार को सद्भावना के विक्रय के सम्बन्ध में, अथवा
- (iv) किसी व्यवसाय, कारबार या हस्तोद्योग में शिक्षण के प्रतिफल के रूप में किये गये किसी ठहराव के सम्बन्ध में।

इनके अतिरिक्त अधिनियम की धारा 14 के अन्तर्गत यह निम्न अधिनियमों से सम्बन्धित निकायों में भी कोई प्रभाव नहीं डालेगी—

- (i) समितियाँ पंजीकरण अधिनियम, 1860,
- (ii) सहकारी समितियाँ अधिनियम, 1912 एवं
- (iii) कम्पनी अधिनियम, 1956

व्यवसाय संघों का जन्म विधि द्वारा नहीं होता, लेकिन यदि इनका मुख्य उद्देश्य किसी व्यक्ति के व्यापार करने के अधिकार पर बाधा पहुंचाना है और वे यदि शून्य बन जाती हैं तो विधिक प्रावधानों द्वारा इन संघों को विधिवत् बना दिया जाता है।

एक समुच्चय व्यवसाय संघ है अथवा नहीं, का परीक्षण इसके उद्देश्य की जाँच से किया जा सकता है। एक समिति, जिसका पंजीयन किसी अधिनियम के अन्तर्गत हुआ है एवं जिसका उद्देश्य सहकारिता के सिद्धान्तों का अग्रसरण करना है, को व्यवसाय संघ की परिभाषा में निम्न आधार पर सम्मिलित नहीं किया जा सकता—

1. यह एक ऐसा समुच्चय नहीं है जो नियोजकों और नियोजकों के सम्बन्धों को विनियमित करता हो, वस्तुतः यह व्यापारी वर्ग का संगठन है।
2. यद्यपि नियमों में उन शर्तों का प्रावधान है जिनके अन्तर्गत व्यावसायिक गतिविधियों पर नियंत्रण रखा गया है लेकिन ये नियंत्रण सोसायटी द्वारा अधिरोपित नहीं किये गये हैं।
3. शर्तों को अधिरोपित करना सोसायटी का मुख्य उद्देश्य नहीं है। व्यवसाय संघ मजदूरी प्राप्त करने वाले ऐसे व्यक्तियों का एक अनवरत संगठन है, जो अपने

जीवन यापन के लिये गठित करते हैं। किन्तु भारतीय व्यवसाय संघ अधिनियम, 1926 में इस शब्द की परिभाषा में संगठन शब्द के स्थान पर समुच्चय शब्द का प्रयोग किया गया है। समुच्चय शब्द एक व्यापक संदर्भ प्रदान करता है।

परफार्मिंग राइट सोसायटी बनाम लन्दन थिगेटर ऑफ वैरायटीज के उपर्युक्त विषय से सम्बन्धित तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं। कापीराइट को संरक्षण प्रदान करने की दृष्टि से लेखकों, प्रकाशकों और नियोजकों द्वारा संगीत के क्षेत्र में एक सोसायटी का गठन किया गया। सोसायटी के नियमों के अन्तर्गत प्रकाशकों पर कतिपय निर्बन्धन अधिरोपित किये गये। हाउस ऑफ लार्डस ने कथित सोसायटी को व्यवसाय संघ स्वीकार करने से इन्कार कर दिया। न्यायालय ने अपनी अवधारणा प्रस्तुत करते हुए कहा है कि निर्बन्धन सदैव कारबार से सम्बन्धित होना चाहिए न कि केवल सम्बद्ध सदस्यों के प्रति।

तमिलनाडु एन० जी० ओ० यूनियन बनाम व्यवसाय संघ पंजीयक के विनिश्चय के बाद में तथ्य इस प्रकार थे श्रमिक संघ के सदस्यों में न्यायालय के उपदण्डाधिकारी, तहसीलदार, कोष अधिकारी आदि भी सम्मिलित थे। न्यायालय ने इस संघ को व्यवसाय संघ मानने से अस्वीकृति प्रदान कर दी क्योंकि इसके सदस्यगण शासन तन्त्र के सम्प्रभु के शासकीय कर्मचारी थे। मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णयानुसार राजभवन के कर्मचारों को व्यवसाय संघ बनाने के अधिकार से वंचित किया गया है।

चेमोसिम प्राईवेट लि० एवं अन्य बनाम केरल मेडीकल एवं सेल्स रिप्रेजेन्टेटिव्स एसोसियेशन के मामले में केरल उच्च न्यायालय के समक्ष विचारणीय प्रश्न यह था कि क्या व्यवसाय संघ के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा रिट जारी की जा सकती है। केरल उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया है कि एक पंजीकृत व्यवसाय संघ न तो राज्य का प्रतिनिधि है। और न ही राज्य का कोई औजार है जो लोक कार्यों अथवा लोक द्वारा व्यवसाय संघों को कोई आर्थिक सहायता प्रदान नहीं की जाती है न ही व्यवसाय संघ कोई विधिक निकाय माना जाता है। व्यवसाय संघों की गतिविधियों एवं कार्यकलापों का शासकीय कार्यों से कोई सम्बन्ध नहीं होता है। अतएव, व्यवसाय संघों के विरुद्ध संविधान के अनुच्छेद 226 के अन्तर्गत उच्च न्यायालय द्वारा रिट जारी नहीं की जा सकती है। परिणामस्वरूप, ट्रेड यूनियनों न्यायालयों को रिट अधिकारिता के अन्तर्गत नहीं आती हैं।

नेशनल आर्गेनाइजेशन ऑफ बैंक वर्कर्स फेडरेशन ऑफ ट्रेड यूनियन्स बनाम भारत संघ एवं अन्य के मामले में बम्बई उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि विभिन्न व्यवसाय संघों के परिसंघ को पंजीकृत नहीं किया गया है तो ऐसा परिसंघ व्यवसाय संघ की परिभाषा में नहीं आता है। ऐसे परिसंघ को विधिक व्यक्ति भी नहीं माना जा सकता। ऐसे

परिसंघ को रिट दाखिल करने के लिए अधिकृत नहीं किया जा सकता है। उनके द्वारा उठाया गया विवाद औद्योगिक विवाद नहीं माना जायेगा।

14.11 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कुमावत बालकृष्ण, औद्योगिक सन्नियम, साहित्य भवन पब्लिके'गन्स, आगरा
2. सिंह इन्द्रजीत, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ पब्लिके'गन्स, इलाहाबाद
3. मिश्र, सूर्य नारायण, श्रम एवं औद्योगिक विधि, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
4. शर्मा गंगा सहाय, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद

इकाई— 15 व्यक्तिगत क्षति प्रतिकर बीमा अधिनियम 1963

इकाई की रूप रेखा

- 15.0 प्रस्तावना
- 15.1 बीमा का अर्थ
- 15.2 बीमा का प्रकार
- 15.3 बीमा का इतिहास
- 15.4 अधिनियम का परिचय
- 15.5 अधिनियम की परिभाषाएं
- 15.6 अधिनियम के अधीन दिया जाने वाला प्रतिकर
- 15.7 वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्कीम
- 15.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

15.0 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों इस इकाई में आप व्यक्तिगत क्षति (प्रतिकर बीमा) अधिनियम 1963 के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे। जब किसी कारखाना या मिल में काम करने वाले लोगों के साथ कोई हादसा हो जाता है तो वह दुर्घटना या व्यक्तिगत चोर की श्रेणी में आता है। कारखाने में होने वाली अधिकतर दुर्घटनाएं असावधानी के कारण होती हैं। दुर्घटना होने पर शारीरिक और आर्थिक दोनों पर क्षति होती है इस अधिनियम के अंतर्गत किसी श्रमिक या कर्मचारी के साथ कोई भी व्यक्तिगत क्षति या नुकसान होता है तो उसे बीमा के रूप में लाभ दिया जाता है जिसके कि उसके परिवार का भविष्य में भरण-पोषण हो सके तथा उनको किसी भी आर्थिक समस्या का सामना न करना पड़ सके। बीमा एक प्रकार का जोखिम प्रबंधन है जो भविष्य में किसी श्रमिक या उसके परिवार को किसी वस्तु या शारीरिक क्षति की भरपाई के लिए धनराशि या अन्य किसी प्रकार से मुआवजा प्रदान करती है अगर हम क्षति की बात करें तो इसका तात्पर्य किसी के स्वास्थ्य, किसी की मृत्यु या उसके साथ घटने वाली किसी प्रकार की दुर्घटना या आर्थिक नुकसान से है। दूसरे शब्दों में अगर कहा जाए तो बीमा एक प्रकार का कॉन्ट्रैक्ट है जिसके अंतर्गत बीमित व्यक्ति और बीमा कंपनी के बीच एक अनुबंध होता है। इसके अंतर्गत कोई भी बीमा धारक किसी बीमा कंपनी को एक छोटी सी धनराशि प्रीमियम के तौर पर किसी तय सुदा समय के लिए जमा करता है। जिससे व्यक्तिगत क्षति होने पर उसको इसका उचित लाभ या प्रतिकर मिल सके।

15.1 बीमा का अर्थ :

आसान शब्दों में बताएं तो इन्शुरन्स यानी बीमा एक प्रकार का जोखिम प्रबंधन है जो भविष्य में हमें या हमारे किसी वस्तु को पहुंचने वाले क्षति की भरपाई धनराशि या अन्य प्रकार के मुआवजा प्रदान करके करती है।

जोखिम प्रबंधन के रूप में आपको धनराशि मिलेगी या आपके जिस वस्तु को क्षति पहुंची है उसके बदले में आपको नया सामान दिया जायेगा या उसे ठीक करा कर दिया जायेगा, ये आपके बीमा किस प्रकार का लिया है इस पर निर्भर करता है। जब हम आपके क्षति की बात कर रहे हैं तो इसका तात्पर्य आपके स्वास्थ्य, आपकी मृत्यु, आपके साथ घटने वाली अन्य प्रकार की दुर्घटना, आर्थिक (वित्तीय) इत्यादि से है।

इसके अलावा किसी वस्तु से तात्पर्य आपके घर, चौपहिया वाहन, दोपहिया वाहन, स्मार्टफोन इत्यादि वस्तुओं खराब होने, टूटने-फूटने और चोरी होने से है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार के इन्शुरन्स भी होते हैं जिनकी जानकारी नीचे दी गई है। तो इस प्रकार से बीमा एक प्रकार का कॉन्ट्रैक्ट है जिसके अंतर्गत बीमित व्यक्ति और बीमा कंपनी के बीच एक अनुबंध होता है। इसके तहत बीमाधारक व्यक्ति बीमा कंपनी को एक छोटी सी धनराशि प्रीमियम के तौर पर एक निश्चित समय के लिए जमा करना होता है।

इस दौरान यदि आपके साथ किसी प्रकार की दुर्घटना या आपका कोई नुकसान होता है तो चक्सपबल के तय शर्त के अनुसार बीमा कंपनी मुआवजा देती है। अगर किसी प्रकार का नुकसान नहीं होता तो बीमा का समय पूरा होने पर आपको ब्याज सहित जमा धनराशि मिल जाती है या जो बीमा कंपनी और बीमाधारक व्यक्ति के बीच अनुबंध होगा उसे बीमा कंपनी पूरा करती है।

15.2 बीमा के प्रकार :

अगर बीमा की बात करें तो यह कई प्रकार के होते हैं। लेकिन मुख्य तौर पर बीमा दो तरह के होते हैं और उन्हीं दोनों बीमा के अंतर्गत कई प्रकार के बीमा आते हैं। जो दो प्रकार के बीमा हैं उन्हें जनरल इन्शुरन्स (सामान्य बीमा) और लाइफ इन्शुरन्स (जीवन बीमा) कहते हैं।

साधारण बीमा के अंदर 5 प्रकार के इन्शुरन्स आते हैं जो निम्नलिखित हैं।

- स्वास्थ्य बीमा
- मोटर बीमा
- गृह बीमा

- अग्नि बीमा
- यात्रा बीमा

अन्य प्रकार के जनरल इन्श्युरन्स

समुंद्री बीमा

व्यावसायिक बीमा

ग्रामीण बीमा

फसल बीमा

जीवन बीमा

Life insurance का हिंदी Meaning जीवन बीमा होता है और भारत में लाइफ इन्श्युरन्स लगभग 9 प्रकार के होते हैं। कहीं-कहीं ये ज्यादा भी होते हैं, लेकिन जो मुख्य 9 टाइप के हैं उनके नाम इस प्रकार हैं।

Group Life – समूह जीवन बीमा

Child Plans – बाल योजना

Term Insurance – टर्म बीमा

Retirement Plans – सेवानिवृत्ति योजना

Endowment Plans – एंडोमेंट योजना

Money Back Policy – मनी बैक पॉलिसी

Whole Life Insurance – संपूर्ण जीवन बीमा

Unit Linked Insurance Plans (ULIP) – यूनिट लिंकड बीमा योजना (यूलिप)

Term With Return Of Premium – रिटर्न ऑफ प्रीमियम

15.3 बीमा का इतिहास

बीमा का इतिहास समुद्र व्यापार के प्रारंभ से ही संबंधित है। अपने आदि रूप में क्षतिपूर्ति का बीमा सिद्धांत सहकारिता के सिद्धांत पर आधारित था जिसे 'जेनरल एवेरेज' कहा जाता था। समुद्र में तूफान के समय अथवा अन्य खतरों के समय कभी कभी यह आवश्यक हो जाता था कि जहाज तथा अन्य सामान की रक्षा के लिए कुछ सामान समुद्र में फेंक कर जहाज को हल्का कर लिया जाए। इस प्रकार

होनेवाली हानि उस व्यापार योजना में भाग लेनेवाले सभी हित आनुपातिक रूप से वहन कर लेते थे। यही सहकारिता का सिद्धांत क्रमशः बीमा के रूप में पनपा।

समुद्र बीमा अनुबंध में केवल एक खतरे के विरुद्ध बीमा नहीं किया जाता वरन् उसमें उन सभी खतरों का उल्लेख होता है जो समुद्रयात्रा में संभाव्य हैं। ध्यान रहे कि बीमा करने के उपयुक्त वही खतरे माने जाते हैं जो संभाव्य हैं। ऐसी यात्रा में जो हानियाँ निश्चित हैं, जैसे पशु आदि का बीमार हो जाना अथवा फल आदि का सड़ जाना इत्यादि उनका बीमा नहीं किया जाता।

समुद्र बीमा की एक शर्त यह भी है कि उक्त अनुबंध लिखित हो अर्थात् बीमापत्र उक्त बीमा अनुबंध का पूर्ण प्रमाण माना जाता है। समुद्र बीमा चूँकि क्षतिपूर्ति का अनुबंध है अतः बीमा करानेवाले के वक्तव्य वस्तुतः सत्य होने चाहिए। साथ ही यदि बीमा करानेवाले ने यह तथ्य प्रगट नहीं किया है कि पहले उक्त बीमा करने से किसी ने इनकार कर दिया था तो भी उसका उस अनुबंध की वैधता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अन्य प्रकार के बीमा संबंधों में पहले की अस्वीकृतियाँ छिपाना उस अनुबंध को अवैध करार देने के लिए पर्याप्त है।

क्षतिपूर्ति के बीमा तथा अन्य प्रकार के बीमा अनुबंध का एक और अंतर ध्यान देने योग्य है। जीवन बीमा में बीमा हित का अस्तित्व बीमा कराने के समय होना आवश्यक है, भले ही बीमों में वर्णित घटना घटित होने के समय वह हित रहे या न रहे। उदाहरणार्थ क अपनी पुत्री के विवाह के लिए यदि पंद्रह वर्ष की अवधि का बीमा करा रहा है तो फ्फ की पुत्री का अस्तित्व बीमा कराने के समय आवश्यक है। उस 15 वर्ष की अवधि के पूर्व ही क की पुत्री की मृत्यु भले ही हो चुकी हो, किंतु वह धनराशि क को प्राप्त हो जाएगी। लेकिन अगर क की पुत्री का जन्म नहीं हुआ है तो उक्त प्रकार के बीमा अनुबंध के लिए आवश्यक बीमा हित वर्तमान न होने से क उक्त प्रकार का बीमा नहीं करा सकता। इसके विपरीत क्षतिपूर्ति के बीमा अनुबंध पर बीमा हित बीमा कराने के समय वर्तमान हो या न हो लेकिन उक्त क्षति घटित होने के समय धनराशि चाहनेवाले में उक्त बीमा हित व्यस्त होना आवश्यक है। उदाहरण के लिए क ने अपने मकान का अग्नि बीमा कराया और उस बीमे के चालू रहते हुए वह मकान ब को बेच दिया। बिक्री होने के दूसरे दिन उस मकान में आग लग गई। ऐसी स्थिति में क द्वारा कराया गया बीमा यद्यपि चालू है, फिर भी उस मकान में क का बीमा हित न रहने के कारण उक्त बीमा अनुबंध के आधार पर क्षतिपूर्ति का दावा ब नहीं कर सकता है क्योंकि क्षति होने के समय मकान के साथ साथ मकान का बीमा हित भी ब में व्यक्त हो चुका है। इसी सिद्धांत का एक निष्कर्ष यह भी है कि जो वस्तु क्षतिग्रस्त हुई है उसका मूल्यांकन बीमा कराए जाने

के समय के मूल्य पर नहीं वरन् क्षति घटित होने के समय के मूल्य के आधार पर ही किया जाता है।

15.4 अधिनियम का परिचय

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ (1) यह अधिनियम वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा।
- (2) इसका विस्तार सम्पूर्ण भारत पर है।
- (3) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जिसे केन्द्रीय सरकार अधिसूचना द्वारा नियत करे।

15.5 परिभाषाएं :

इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो.—

- (क) 'नियोजक' के अन्तर्गत कोई व्यक्ति निकाय, चाहे वह निगमित हो या नहीं, और नियोजक का कोई प्रबन्ध—अभिकर्ता तथा मृत नियोजक का विधिक प्रतिनिधि आते हैं और जो कि डिग्री कर्मकार की सेवाएं उस व्यक्ति द्वारा, जिसके साथ कर्मकार ने सेवा या शिक्षता की संविदा की है, अन्य व्यक्ति को अस्थाई तौर पर उधार दे दी गई है या भाड़े पर दी गई है, तब नियोजक से उस समय तक जब तक वह कर्मकार उस अन्य व्यक्ति के लिए काम करता रहता है, वह पश्चात्कथित व्यक्ति अभिप्रेत है—
- (ख) "निधि" से धारा 13 के अधीन गठित वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) निधि अभिप्रेत है:
- (ग) अभिलाभपूर्वक लगे हुए व्यक्ति और पविचक्षति के ये ही अर्थ होंगे जो वैयक्तिक क्षति (आपात उपबन्ध अधिनियम, 1962 (1962 का 59) में उन पदों को क्रमशः समनुदिष्ट (घ) अधिसूचना से शासकीय राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है
- (ङ) 'आंशिक निःशक्तता' से जहां कि निःशक्तता अस्थायी प्रकृति की है वहां ऐसी निःशक्तता अभिप्रेत है जिससे कर्मकार की उस नियोजन में उपार्जन करने की सामर्थ्य कम हो जाती है जिसमें वह उस समय जब क्षति हुई. लगा हुआ था और जहां कि निःशक्तता स्थायी प्रकृति की है यहां ऐसी निःशक्तता अभिप्रेत है जिससे किसी भी ऐसे नियोजन में उसकी उपार्जन करने की सामर्थ्य कम हो जाती है जिसे ग्रहण करने के लिए वह उस समय समर्थ था :

परन्तु अनुसूची में विनिर्दिष्ट हर क्षति के या क्षतियों के किसी समुच्चय के बारे में वहाँ, जहाँ कि निःशक्तता का प्रतिशत या संकलित प्रतिशत, जैसा वह अनुसूची में ऐसी क्षति या क्षतियों के समुच्चय के सामने विनिर्दिष्ट है, सौ प्रतिशत से कम होता है, यह समझा जायेगा कि उसके परिणामस्वरूप स्थायी आंशिक निःशक्तता हुई है :

(च) आपात की कालावधि से, संविधान के अनुच्छेद 352 के खण्ड (1) के अधीन—

- (i) 26 अक्तूबर, 1962 को निकाली गई आपात की उदघोषणा के सम्बन्ध में 26 अक्तूबर, 1962 को आरम्भ होने वाली और 10 जनवरी, 1968 को, अर्थात् उस तारीख को जिसको कि भारत सरकार के गृह मंत्रालय की अधिसूचना सं०, सा० का ० नि० 93 तारीख 10 जनवरी, 1968 द्वारा उक्त आपात समाप्त हुआ घोषित किया गया था, समाप्त होने वाली कालावधि अभिप्रेत है।
- (ii) 3 दिसम्बर 1971 को निकाली गई आपात की उदघोषणा के सम्बन्ध में 3 दिसम्बर, 1971 को आरम्भ होने वाली और ऐसी तारीख को जिसे केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा उस तारीख के रूप में घोषित करे जिसको कि उक्त आपात समाप्त हो जायेगा समाप्त होने वाली समय अभिप्रेत है।

(छ) विदित से धारा 22 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है।

(ज) पूर्ण निःशक्तता से ऐसी निःशक्तता अभिप्रेत है, चाहे वह पर अस्थायी प्रकृति की हो या स्थायी प्रकृति की, जो किसी कर्मकार को ऐसे सब काम के लिए असमर्थ कर देती है जिसे करने के लिए वह उस समय समर्थ था क्षति हुई थी। परन्तु अनुसूची में विनिर्दिष्ट हर क्षति के या क्षतियों के समुच्चय के बारे में वहाँ, जहाँ कि निःशक्तता का प्रतिशत या संकलित प्रतिशत जैसा वह अनुसूची में ऐसी क्षति या क्षतियों के समुच्चय के सामने विनिर्दिष्ट है सो प्रतिशत या उससे अधिक होता है। यह समझा जायेगा कि उसके परिणामस्वरूप स्थायी पूर्ण निःशक्तता हुई।

(झ) स्कीम से धारा 8 वर्ष की उपधारा (1) में निविष्ट वैयक्तिक समनुदिष्ट क्षति (प्रतिकर बीमा)

(ञ) मजदूरी से कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 में यस्थापरिभाषित मजदूरी है, और मासिका मजदूरी का वही अर्थ है जो इस पद को कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 5 द्वारा समष्टि है और इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए इसका हिसाब उस रीति से किया जाएगा जो उपर धारा में

- (ट) कर्मकार से (उस व्यक्ति से, जिसका नियोजन नैमित्तिक प्रकृति का है और नियोजक के व्यापार या कारोबार के प्रयोजनों के लिए नियोजित होने से अन्यथा नियोजित है, भिन्न) कोई व्यक्ति अभिप्रेत है जो धारा 3 में विनिर्दिष्ट नियोजनों में से किसी में नियोजित है।

15.6 अधिनियम के अधीन दिया जाने वाला प्रतिकर

कर्मकार जिन्हें यह अधिनियम लागू होता है वे कर्मकार जिन्हें यह अधिनियम लागू होता है. ये हैं—

- (क) किसी ऐसे नियोजन या नियोजन वर्ग में नियोजित कर्मकार जो भारत रक्षा नियम, 1962 के नियम 126कक या भारत रक्षा नियम, 1971 के नियम 119, के अधीन आव"यक सेवा है या घोषित किया गया है।
- (खं) कारखाना अधिनियम 1948 (1948 का 63) की धारा 2 के खंड (3) में यथापरिभाषित कारखाने में नियोजित कर्मकार
- (ग) खान अधिनियम, 1952 (1952 का 35) के अर्थ के अन्दर की खान पान में नियोजित कर्मकार।
- (घ) किसी महापत्तन में नियोजित कर्मकार
- (ङ) बागान श्रम अधिनियम 1951 (1951 का 69) की धारा 2 के खंड (च) में यथा कर्मकार परिभाषित में नियोजित
- (च) केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचना द्वारा इस निर्मित विनिर्दिष्ट नियोजन में नियोजित कर्मकार

4. अधिनियम के अधीन संदेश प्रतिकर किसके द्वारा और कैसे संदेय होगा— (1) ऐसी शर्तों के अध्यधीन जैसी कि स्कीम में विनिर्दिष्ट की जाएं, अभिलाभपूर्वक लगे हुए व्यक्ति को, जो ऐसा कर्मकार हो, जिसे यह अधिनियम लागू होता है हुई वैयक्तिक क्षति की बावत वैयक्तिक क्षति (आपात उपबन्ध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन उपबन्धित किसी अनुतोष के अतिरिक्त, नियोजक द्वारा पद प्रतिकर संदेय होगा जिसकी रकम और किस्म धारा 7 द्वारा उपबन्धित है:

परन्तु जहाँ कि किसी नियोजक ने धारा 9 की उपधारा (1) द्वारा अपेक्षित रूप में बीमा पालिसी ली हुई हो और उस पर प्रीमियम के रूप में सब संदाय, जो तत्पश्चात उसके द्वारा शोध्य स्कीम हों. स्कीम के उपबन्धों के अनुसार कर दिए हो, अपयश यहाँ कि धारा 9 को उपधारा (1) में यह धारा 10 की

उपधारा (2) के उपबन्धों के द्वारा नियोजक से बीमा कराने की अपेक्षा नहीं की गयी है। वहाँ केन्द्रीय सरकार नियोजक की ओर से, इस उपधारा के अधीन प्रतिकर संदत करने के नियोजक के दायित्व को ग्रहण करेगी और उसका निर्वहन करेगी।

(2) इस अधिनियम के अधीन दिये गये प्रतिकर स्कीम में इस निमित्त किए गए उपबन्धों के अनुसार संदेय होगा।

(3) यह धारा सरकार पर आबदकर होगी।

5. इस अधिनियम के और 1962 के अधिनियम 59 के अधीन में अन्यथा प्रतिकर प्राप्त करने के अधिकार पर परिसीमा जहां कि किसी व्यक्ति को किसी ऐसी व्यक्ति क्षति की बावत जिसकी बाबत प्रतिकर इस अधिनियम के अधीन संदेय है नियोजक से उस के और वैयक्तिक क्षति अधिनियम (आपात उपबन्ध) अधिनियम 1962 के उपबन्धों के अलावा साथ प्रतिकर (चाहे वह उपदान, पेंशन या अनुकपा के रूप में हो या अन्यथा या नुकसानी प्राप्त करने का अधिकार हो वहाँ उस अधिकार का विस्तार ऐसे प्रतिकर नुकसानी उतने भाग तक होगा जितना इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर की रकम से अधिक हो।

6. सरकार के कर्मचारियों के सम्बन्ध में विशेष उपबन्ध जहां की सरकार के नियोजन में की किसी व्यक्ति को, सरकार से अपनी सेवा की शर्तों को विनियमित करने वाले नियमों के अधीन इस अधिनियम के व्यक्तिक क्षति (आपात उपबन्ध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के उपबन्धों के अलावा किसी ऐसी व्यक्तिक क्षति की बावत जिसकी प्रतिकर इस अधिनियम के अधीन संदेय हो कोई धनराशि चाहे वह असाधारण पेंशन उपदान अनुकम्पा संदाय या अनुकम्पा के रूप में संदेय हो या नुकसानी के रूप में प्राप्त करने का अधिकार हो, वहाँ इस अधिनियम या वैयक्तिक क्षति उपबन्ध) अधिनियम, 1962 में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी उस व्यक्ति को उस नियमों के अधीन अनुज्ञेय धनराशि प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त होगा और यदि ऐसे अनुराश्रित धनराशि इस अधिनियम और वैयक्तिक क्षति (उप) आपातउपबन्ध अधिनियम, 1962 (1962 का 59 के अधीन संदेय रकम में हो, तो उसको यह अतिरिक्त अधिकार भी होगा कि वह उन नियमों के अधीन अनुज्ञेय धनराशि और इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर की रकम के अन्तर के बराबर रकम प्राप्त करे।

7. प्रतिकर की रकम (1) इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर जहां कि क्षति के परिणामस्वरूप मृत्यु हो जाती है वहां ऐसे ही मामले में कर्मकर प्रतिकर अधिनियम, 1923 (1923 का 8) के अधीन संदेय रकम में से वैयक्तिक क्षति (आपात उपबन्ध) अधिनियम 1962 (1962 का 59) के अधीन संदेय रकम का एकमुस्त मूल्य घटाकर शेष रकम (ख) जहां कि परिणामस्वरूप पूर्ण निशक्तता हो जाती है. वहाँ वैसे ही मामले में कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 (1923 का 8) के अधीन संदेय रकम में से व्यक्तिगत क्षति (आपात उपबन्ध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन संदेय रकम का एकमुस्त मूल्य घटाकर शेष रकम।

(ग) जहां कि क्षति के परिणामस्वरूप अस्थायी निःशक्ता, चाहे पूर्ण आंशिक हो जाती है, यहां कर्मकार प्रतिकर अधिनियम 1923 (1923 का 8) के अधीन वैसे ही मामले में संदेय अर्धमासिक संदाय, किन्तु हर एक मामले में जब तक वह वैयक्तिक क्षति (आपात उपबन्ध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन बनाई गई स्कीम के अधीन संदाय प्राप्त करता रहे तब तक उस संदाय में से वह रकम घटाकर जो उक्त स्कीम के अधीन संदेय हो।

15.7 वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्कीम

वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्कीम (1) केन्द्रीय सरकार अधिसूचना द्वारा एक स्कीम प्रवर्तन में लाएगी जो वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्कीम कही जाएगी जिसके द्वारा इस अधिनियम के प्रयोजनों को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक सब बातों के लिए उपबन्ध किया जाये और जिसके द्वारा केन्द्रीय सरकार उन कर्मकारों के नियोजकों के सम्बन्ध में जिन्हें यह अधिनियम लागू होता है, इस अधिनियम के और स्कीम के अधीन उनके द्वारा कर्मकारों के प्रति उपगत दायित्वों के विरुद्ध ऐसे नियोजकों का बीमा करने का जिम्मा ले।

- (1) परन्तु आपात विभिन्न कालावधियों के सम्बन्ध में विभिन्न स्कीमों में प्रवर्तित की जायेगी।,
- (2) स्कीम यह सुनिश्चित करेगी कि केन्द्रीय सरकार का स्कीम के अधीन बीमाकर्ता के रूप में कोई भी दायित्व केन्द्रीय सरकार की ओर से कार्य करने वाले किसी व्यक्ति द्वारा दी गई विहित प्रारूप की बीमा पालिसी द्वारा अवधारित कर दिया जाए।
- (3) स्कीम यह उपबन्ध कर सकेंगी कि यह उस तारीख की जो उसमें विनिर्दिष्ट की जाए प्रवर्तन में आएगी या प्रवर्तन में आ गई समझी जाएगी।

- (4) स्कीम केन्द्रीय सरकार द्वारा किसी भी समय संशोधित की जा सकेगी।
- (5) उपधारा (1) के उपबन्धों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना स्कीम—
- (क) इस अधिनियम और स्कीम के अधीन संदेय प्रतिकर के संदाय को विनियमित करने वाले उपलब्ध बना सकेगी। जिनके अंतर्गत स्कीम की किसी अपेक्षा के उल्लंघन के लिए दो हजार स्वयं से अनधिक जुर्माने द्वारा दण्ड का उपलब्ध आता है।
 - (ख) ये व्यक्ति जिनको और वे अनुपात और रीति जिनमें इस अधिनियम के अधिन संदाय किए जायेंगे विनिर्दिष्ट करने वाले उपबन्ध बना सकेगी।
 - (ग) व्यक्तिगत क्षति (आपात उपबन्ध) अधिनियम (1962 का 59) के अधीन संदेय रकम का एकमुश्त मूल्य अवधारित करने के लिए उपबन्ध बना सकेगी।
 - (घ) वे द"ाएँ परिस्थितियाँ विनिर्दिष्ट कर सकेगी जिनमें कर्मकार इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर के लिए निर्चित हो जाएगा और स्कीम के अधीन दी गयी बीमा पालिसी की इसे एक अभिव्यक्ति या विवक्षित शर्त बना सकेंगी कि ऐसी विनिर्दिष्ट की अवज्ञा में किया गया प्रतिकर का संदाय पालिसी के अंतर्गत नहीं आएगा।
 - (ङ) वे द"ाएँ या परिस्थितियाँ विनिर्दिष्ट कर सकेगी जिनमें किसी कर्मकार को संदेय प्रतिकर उस दशा में विधारित किया, रद्द किया, घटाया या पुनर्वालोकि किया जा सकेगा जिसमें वैयक्तिक क्षति (आपात उपबन्ध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन बनाई गई स्कीम के अधीन किया गया अधिनिर्णय विधारित, रद्द किया, घटाया या पुनर्विलोकित किया जाए।
 - (च) उन दशाओं के लिए उपबन्ध कर सकेगी जिनमें किसी नियोजक ने इस अधिनियम द्वारा अधिरोपित पूरे दायित्व का या उसके किसी भाग का जिम्मा स्वेच्छा से लिया हों।
 - (छ) स्कीम के अधीन की किसी बीमा पॉलिसी पर शोध कुल प्रीमियम का अन्तिम निर्धारण या तो नियोजक द्वारा पहले ही किए जा चुके सब प्रीमियम के अग्रिम संदायों के समतुल्य के रूप में, या नियोजक द्वारा दिए गए अग्रिम समुदाय की रकम जिन कालावधियों के संबंध में नियत की गयी थी। उनके लिए नियोजक के कुछ मजदूरी बिलों के प्रतिशत के रूप में, या आपात की कालावधि के अवसान के अव्यवहित पूर्वगामी

बारह से अन्युत और पन्द्रह से अधिक मास की कालावधि के लिए नियोजक के कुल मजदूरी विल के प्रतिशत के रूप में किए जाने का उपबन्ध कर सकेगी और किसी ऐसी पालिसी पर शोध कुल प्रीमियम के निर्धारण के लिए उपबन्ध कर सकेगी जिसका प्रवृत्त रहना आपात की कालावधि के अवसान के पूर्व ही इस कारण समाप्त हो गया हो कि नियोजक इस कारोबार से निकल गया है।

- (अ) किसी बीमा पालिसी पर शोध कुल प्रीमियम की किसी नियोजक से बसूली के लिए उपलब्ध कर सकेगी, जिसके अंतर्गत किसी विहित कालावधि के लिए उसके कुछ मजदूरी बिलों के प्रतिशत पर आधारित रकम के कालिक अग्रिम संदायो द्वारा वसूली के लिए हर एक नियोजक द्वारा ऐसे किए गए संदायों के अलग-अलग निधियों में रखे जाने के लिए और अन्तिम रूप से निर्धारित कुल प्रीमियम का ऐसे कालिक संदायों के योग से विरुद्ध अंतिम समायोजन किए जाने के लिए उपबन्ध आता है:

परन्तु जहां कि विहित कालावधि के कुल मजदूरी बिलों पर आधारित कालिक संदाय की रकम बाठ रुपए से कम हो, यहाँ उसे बढ़ाकर आठ रुपए कर दिया जाएगा :

परन्तु यह और कि ऐसे कालिक संदायों में से प्रथम संदाय पूर्वोक्त आठ रुपए के न्यूनतम के अध्यधीन रहते हुए उस दर से होगा, जो केन्द्रीय सरकार इसे निमित विनिर्दिष्ट करे।

परन्तु यह और कि प्रथम कालिक संक्षरण के पश्चात् के किसी भी कालिक संदाय की दर पूर्वोक्त आठ रुपए के न्यूनतम के अध्यधीन रहते हुए वह होगी जो कि केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के अधीन के अपने दायित्वों पर विचार के पश्चात् समय-समय पर नियत करे, और केन्द्रीय सरकार, जहां कि निधि में की कुछ रकम को ध्यान में रखते हुए यह अपेक्षा हो वहाँ किसी कालिक संदाय को या हो तो अधिव्यक्त या मुलतवी कर सकेगी।

9. **अनिवार्य बीमा**(1) ऐसे कर्मकारों का हर नियोजक, जिन्हें यह अधिनियम लागू होता है या बाद में लागू कर दिया जाए, किसी ऐसे नियोजक के सिवाय, जिसका इस अधिनियम के प्रारम्भ होने के पश्चात किसी तिमाही के लिए कुल मजदूरी बिल पन्द्रह रुपए से कभी अधिक न हुआ हो, उस तारीख के पूर्व जो

विहित की जाए या उसके प्रथम बार ऐसा नियोजक बनने के पश्चात उस कालावधि के अवसान के पूर्व, जो विहित की जाए, उस स्कीम के अनुसार निकाली गई एक बीमा पालिसी लेगा, जिसके द्वारा वह अपने पर इस अधिनियम द्वारा अधिरोपित दायित्वों के विरुद्ध बीमा, आपात की कालावधि के अवसान के पूर्व की उस तारीख तक के लिए, यदि कोई हो, जिसको वह ऐसा नियोजक न रह जा गए, जिससे यह धारा लागू होती है किया जाए।

(2) जो कोई उपधारा (1) के उपबन्धों का उल्लंघन करेगा या उस उपधारा द्वारा यथा अपेक्षित बीमा पालिसी लेकर उस पर प्रीमियम के रूप में ऐसा संदाय करने में, जो स्कीम के उपबन्धों के अनुसार उसके द्वारा तत्पश्चात् शोध्द हो असफल रहेगा, वह जुर्माने से जो दो हजार रुपए तक का हो सकेगा दण्डनीय होगा और ऐसे दोषसिद्ध किए जाने के पश्चात् के हर ऐसे दिन के लिए, जिसको वह उपल्लंघन या असफलता चालू रहे, अतिरिक्त जुर्माने से भी दण्डनीय होगा, जो एक हजार रुपए तक का हो सकेगा।

10. मालिक और ठेकेदार (1) जहां कि कोई व्यक्ति (जिसे इस धारा में मालिक कहा गया है), अपने व्यापार या कारबार के अनुक्रम में प्रयोजनों के लिए या उन कर्मकारों की सेवाओं का उपयोग करें, जिनकी सेवाएं अस्थायी रूप से उसे उधार या भाड़े पर किसी अन्य ऐसे व्यक्ति के साथ ठहराव द्वारा, जिससे कि उन कर्मकारों ने सेवा या शिक्षता की संविदाएं की हो, दी गयी हो, अथवा अपने व्यापार या कारबार के अनुक्रम में या के प्रयोजनों के लिए, किसी अन्य व्यक्ति के साथ उस अन्य व्यक्ति द्वारा या के अधीन किसी ऐसे सम्पूर्ण कार्य या उसके किसी भाग के निष्पादन के लिए संविदा करे, जो मामूली दौर पर मालिक के व्यापार या कारबार का भाग हो (जिन ऐसे दोनों अन्य व्यक्तियों में से हर एक को इस धारा में ठेकेदार कहा गया है) वहां मालिक ठेकेदार है से अभिप्राप्त धारा 11 के अधीन कार्य करने वाले केन्द्रीय सरकार के उस अभिकर्ता का नाम अभिप्राप्त करेगा, जिससे बीमा कराने का वह आ"य रखता हो और ठेकेदार के साथ अपने ठहराव या संविदा के अस्तित्व की रिपोर्ट उस अभिकर्ता को देगा।

(2) इस अधिनियम में अन्यत्र अन्तर्दिष्ट किसी बात के होते हुए भी, किसी ऐसी दशा में जैसी उपधारा (1) में निर्दिष्ट हैं, जहां ठहराव व संविदा एक मास से कम की लिए ठेकेदार के लिए यह आव"यक नहीं होगा कि वह अपने द्वारा नियोजित उन कर्मकारों की बावत इस अधिनियम द्वारा उस पर अधिरोपित दायित्वों के लिए बीमा कराए, जिनकी सेवाएं किसी ऐसे ठहराव पर

उधार या भाई पर दी गई हो, या किसी ऐसी संविदा के अधीन के कार्य के निष्पादन में उपयोग में लाई गई हो, जो उपधारा (1) में निर्दिष्ट है।

(3) स्कीम, ठेकेदार द्वारा मालिक को किसी ऐसी जानकारी का प्रदान किए जाने के लिए उपबन्ध कर सकेगी, जो इस धारा के

प्रयोजनों को कार्यान्वित करने को समर्थ बनाने के लिए आवश्यक जिसके अन्तर्गत स्कीम की किसी अपेक्षा के उल्लंघन के लिए दो हजार रुपए से अधिक के जुमाने द्वारा दण्ड का उपबन्ध आता है।

11. केन्द्रीय सरकार द्वारा अभिकर्ताओं का नियोजन—केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, किसी व्यक्ति का, इस अधिनियम के किन्हीं प्रयोजनों के लिए उसके अभिकर्ता के रूप में कार्य करने के लिए नियोजन कर सकेगी या ऐसा नियोजन प्राधिकृत कर सकेगी और ऐसे नियोजित व्यक्ति को उतना पारिश्रमिक दे सकेगी, जिन वह सरकार ठीक समझे।
12. कुछ बीमा कारबार का प्रतिषेध (1) उस तारीख के पश्चात्, जिसको स्कीम प्रवर्तन में लाई जाए, कोई भी व्यक्ति उस व्यक्ति के रूप में के सिवाय, जिसे स्कीम के अनुसरण में पालिसियां देने के लिए केन्द्रीय सरकार ने अपने अभिकर्ता के रूप में प्राधिकृत किया है, भारत में नियोजकों का उन दायित्वों के लिए बीमा करने का कारबार नहीं चलाएगा, जिनके विरुद्ध बीमा का उपबन्ध स्कीम करती हो।

(अध्याय 3 वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्वीक 1 अध्याय 4 प्रकीर्ण—1)

(2) उपधारा (1) में की कोई भी बात किसी ऐसी बीमा पालिस को जो दस तारीख के पहले की गई हो जिसको स्कीम प्रवर्तन में लाई जाए और उस तारीख के पश्चात् चालू रहे अथवा किसी ऐसी बीमा पालिसी को जो ऐसे दायित्वों के बारे में हो जो वित्तों में द्वारा अथवा इस अधिनियम द्वारा अधिरोपित दायित्वों से अधिकार में हो लागू नहीं होती है।

(3) जो कोई उपधारा (1) के उपबन्धों का उल्लंघन करेगा वह जुर्माने से जो पांच रुपए तक का हो सकेगा और अतिरिक्त जुर्माने से, प्रथम दिन के पश्चात् हर ऐसे दिन के लिए जिसको उल्लंघन चालू रहे, एक रुपए तक का हो सकेगा दण्डनीय होगा।

13. वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) निधि (1) केन्द्रीय सरकार वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) निधि कही जाने की एक निधि को (जिरो एरिना निधि कहा गया है) हर एक वित्तीय वर्ष में इतनी राशियां, जितनी आवश्यक समाज संसद द्वारा इस

विधि विधि द्वारा सम्यक विनियोग कर दिए जाने के अन्तरित कर सकेंगी राशियों केन्द्रीय सरकार द्वारा स्कीम के अधीनमामियों के रूप में या धारा 15 के अधीन अपराध के शमन पर किए गए संदायों के रूप में या इस अधिनियम के अधीन के किसी अभिवन में अधियोजन जुर्माने में न्यायालय द्वारा दर प्रक्रिया महिला, 1595 ख1995 का 3, की धारा 545 के अधीन दिलवाए गए व्ययों या प्रतिकार के रूप में या स्कीम के अधीन अधिरोपित शास्तियों के रूप में केन्द्रीय सरकार द्वारा प्राप्त राशियों से अधिक नहीं होगी।

(2) इस निधि में से वे सब राशियां संदत्त की जाएगी जो केन्द्रीय सरकार द्वारा इस अधिनियम या स्कीम के अधीन के अपने दायित्वों के निर्वहन के लिए, या स्कीम के प्रयोजनों के लिए नियोजित अभिकलीओ के पारिश्रमिक और व्ययों के केन्द्रीय सरकार द्वारा संजय के लिए या स्कीम के प्रशासन चार्य के केन्द्रीय सरकार द्वारा सहाय के लिए अपेक्षित हो परन्तु निधि में से कोई भी संदाय सरकार द्वारा नियोजित कर्मकारों को प्रतिकर का क्षय करने के सरकार के किसी मित्य के निवेदन में नहीं किया जाएगा।

(3) यदि किसी ऐसे समय जब निधि में से कोई संदाय किया जाना हो, निधि में जमा राशि उस संदाय के लिए अपेक्षित राशि से कम हो तो कमी के बराबर रूप संसद विधि द्वारा किए गए सम्यक विनियोग के पश्चात भारत की संचित निधि में से अग्रिम के रूप में निधि में जमा कर दी जाएगी।

(4) यदि किसी समय निधि में जमा रकम उस राशि से अधिक हो जो निधि में से संदत्त किए जाने के लिए केन्द्रीय सरकार की राय में संभावातः अपेक्षित हो तो अरधिक्य का व्ययन ऐसी रीति से किया जाएगा जैसी केन्द्रीय सरकार ठीक समझे।

(5) केन्द्रीय सरकार निधि में प्राप्त और उसमें से संदत्त सभी राशियों का लेढाा ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति में जैसी विहित की जाए, तैयार करेगी और या तो प्रति वर्ष या ऐसे लघुतर अन्तरालों पर जैसे उसमें निनिर्दिष्ट किए जाएं प्रकाशित करेगी।

प्रकीर्ण

जानकारी अभिप्राप्त करने की केन्द्रीय सरकार की शक्ति

(1) केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित प्राधिकृत कोई व्यक्ति, या अभिनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए कि क्या इस अधिनियम की तथा स्कीमों की अपेक्षाओं का अनुपालन किया गया है, किसी नियोजक से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह उसे ऐसे लेख, पुस्तकें या अन्य दस्तावेजो प्रस्तुत करें या

उसी ऐसी जानकारी दे या ऐसे प्रमाणपत्र दे जैसे वह व्यक्ति युक्तियुक्त रूप से आवश्यक समझे।

(2) जो कोई किसी व्यक्ति के इस धारा के अधीन की उसकी शक्तियों के प्रयोग में जानबूझकर बाधा डालेगा या तदधीन की गई किसी अपेक्षा का अनुपालन करने में युक्तियुक्त प्रतिहेतु के बिना असफल रहेगा, वह उस हर एक अवसर के बारे में, जिसको ऐसी कोई बाधा या असफलता होती है, जुर्माने से, जो एक हजार रुपए तक का हो सकेगा, दण्डनीय होगा।

(3) जो कोई इस धारा के अधीन की अपनी बाध्यताओं के तात्पर्यित अनुपालन में जानते हुए या लापरवाही से ऐसा कथन करेगा जो तात्विक विनिष्ठ में मिथ्या हो, वह जुर्माने से जो एक हजार रु० का हो सकेगा, दण्डनीय होगा।

15. असंदत्त प्रीमियम की वसूली (1) धारा 9 को उपधारा (2) के उपबन्धों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जहां कि कोई व्यक्ति इस अभिनियम और स्कीम द्वारा अपेक्षित रूप में या अपेक्षित पूरी रकम तक बीमा कराने में असफल रहा है और तद्वारा वह प्रीमियम के रूप में किसी ऐसे धन के संदाय से, जो उसे ऐसी असफलता न होने की दृष्टि में स्कीम के उपबन्धों के अनुसार संदत्त करना होता बच निकल है, वहाँ केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई आफिसर उस रकम का जिसके संदाय से वह ऐसे बच निकला है— अवधारण कर सकेगा और ऐसी अवधारित रकम ऐसे व्यक्ति द्वारा देय होगी और उपधारा (2) में उपबंधित रूप में उससे वसूलीय हो गयी। (2) स्कीम के अधीन की गई बीमा पालिसी पर प्रीमियम के रूप में स्कीम के उपबन्धों के अनुसार देय धनराशि और उपधारा (1) के अधीन देय के रूप में अवधारित की गई रकम भू-राजस्व की बकाया के रूप में वसूलीय होगी।

(3) कोई भी व्यक्ति जिसके विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन अवधारण किया जाए, विहित कालावधि के भीतर ऐसे अवधारण के विरुद्ध अपील केन्द्रीय सरकार को कर सकेगा, जिसका विनिश्चय अन्तिम होगा।

16. प्रतिकर का वहां संदाय जहां कि नियोजक बीमा करने में असफल रहा हो—जहां कि कोई नियोजक धारा 9 की उपधारा (1) द्वारा अपेक्षित रूप में बीमा पालिसी लेने में असफल रहा हो या उस उपधारा द्वारा अपेक्षित रूप में बीमा पालिसी लेकर उस पर के उन प्रीमियमों का संदाय करने में असफल रहा हो, जो स्कीम के उपबंधों के अनुसार तत्पश्चात् उसके द्वारा शोध्य हो, वहाँ किसी ऐसे प्रतिकर का संदाय, जिसके संदाय के लिए वह इस

अधिनियम के अधीन दायी हो, निधि में से किया जाएगा, और ऐसी संदत राशि ऐसी संदत राशि से अनधिक ऐसी रकम की शास्ति सहित, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत आफिसर द्वारा अवधारित की जाए निधि में संदाय के लिए जमा किये जाने के लिए नियोजक से भू-राजस्व की बकाया के रूप में वसूली होगी।

15.8 संदर्भ ग्रंथ सूची

5. कुमावत बालकृष्ण, औद्योगिक सन्नियम, साहित्य भवन पब्लिके"न्स, आगरा
6. सिंह इन्द्रजीत, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ पब्लिके"न्स, इलाहाबाद
7. मिश्र, सूर्य नारायण, श्रम एवं औद्योगिक विधि, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
8. शर्मा गंगा सहाय, श्रमिक विधियां, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद

इकाई— 16 मातृत्व लाभ अधिनियम—1961

इकाई की रूपरेखा

- 16.0 प्रस्तावना
- 16.1 अधिनियम का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य
- 16.2 अधिनियम के उद्देश्य
- 16.3 अधिनियम का प्रवर्तन
- 16.4 परिभाषाएँ
- 16.5 मातृत्व लाभ अधिकार, दायित्व, शास्त्रियाँ एवं विभिन्न उपलब्ध
- 16.6 मातृत्व लाभ के भुगतान के लिए अधिकार
- 16.7 कतिपय परिस्थितियों में मातृत्व लाभ का बना रहना
- 16.8 कतिपय परिस्थितियों में मातृत्व लाभ का भुगतान
- 16.9 मातृत्व लाभ के दावे की सूचना और उसकी अदायगी
- 16.10 गर्भावस्था के कारण अनुपस्थिति के दौरान पदच्युति
- 16.11 कतिपय मामलों में मजदूरी में से कटौती का न किया जाना
- 16.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

16.0 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थीजन आप इस इकाई में मातृत्व लाभ अधिनियम 1961 के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त करेंगे। यह अधिनियम 1947 प्रसव के पहले और उसके बाद की कुछ अवधि में महिलाओं के नियोजन को विनियमित करने के उद्देश्य से बनाया गया है। इस अधिनियम को जम्मू और कश्मीर राज्य को छोड़कर संपूर्ण भारत वर्ष में लागू किया गया है। इस अधिनियम को 1970, 1972, 1973, 1976 एवं 1998 में इसके महत्व को देखते हुए महत्वपूर्ण संशोधन किए गए जिससे इस अधिनियम को और भी प्रभावशाली बनाया जा सके। ऐसा हम सभी जानते हैं कि कुछ मामलों में महिला और पुरुष एक दूसरे से भिन्न हैं खासकर शारीरिक मामलों में। महिला जन्म देने जैसा महत्वपूर्ण कार्य करती है जबकि पुरुष नहीं। मातृत्व लाभ अधिनियम का मुख्य उद्देश्य है एक महिला कर्मकार को उसके प्रसव के 6 सप्ताह पूर्व व 6 सप्ताह बाद में अपने कार्य से अलग रहते हुए समर्थ बनाना है ताकि उसकी आय को सुरक्षा प्रदान किया जा सके। इस अधिनियम के तहत गर्भवती महिला को उचित चिकित्सा व देखभाल भी सुनिश्चित किया जाता है। जिससे उनका स्वास्थ्य सही रह सके। साथ ही साथ वह अपने बालक को सही से स्तनपान करा सके। यह अधिनियम मुख्य रूप से महिला कर्मकारों को सामाजिक न्याय प्रदान करने के उद्देश्य से बनाया गया है इसके द्वारा उनको समुचित स्वास्थ्य लाभ भी प्रदान

किया जाता है। इस अधिनियम को जब आप विस्तार से पढ़ेंगे तो इसकी विस्तृत रूप से आप व्याख्या कर सकेंगे।

16.1 अधिनियम का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व भी भारत की कई प्रान्तीय सरकारों द्वारा विभिन्न मातृत्व हित लाभ अधिनियम पारित किये गये थे। बम्बई प्रान्त में सर्वप्रथम मातृत्व हित लाभ अधिनियम पारित किया गया था। तत्पश्चात् 1930 में मध्य प्रान्त में, 1934 में मद्रास प्रांत में, 1939 में उत्तर प्रदेश में, 1939 में बंगाल में, 1943 में पंजाब में, 1945 में बिहार प्रान्त में, 1952 में केरल में और 1953 में उड़ीसा तथा राजस्थान में मातृत्व लाभ अधिनियम पारित किये गये थे। उक्त सभी अधिनियमों में नियोजक के दायित्व को सिद्धान्ततः स्वीकार किया गया था। कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 पारित होने पर मातृत्व हित लाभ प्रदान करने का दायित्व निगम पर अधिरोपित किया गया। केन्द्रीय सरकार ने 1941 में खान में काम करने वाली महिला श्रमिकों के लिए एक अधिनियम पारित किया गया था।

उपर्युक्त समस्त प्रान्तीय अधिनियमों में अलग-अलग व्यवस्थाएँ थी। इन विषमताओं को दूर करके समरूपीय व्यवस्था प्रतिस्थापित करने के उद्देश्य से केन्द्रीय सरकार ने 1961 में वर्तमान मातृत्व हित लाभ अधिनियम पारित किया। मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 में क्रमशः 1970, 1972, 1973, 1976 एवं 1998 में संशोधन किए गए। अधिनियम में अंतिम संशोधन, 1995 में पारित किया गया जिसे दिनांक 31.1.1996 से प्रवर्तन में लाया गया है। वर्तमान में प्रायः समस्त राज्य सरकारों तथा संघ राज्यों ने इस अधिनियम को स्वीकार कर लिया है।

16.2 अधिनियम के उद्देश्य

मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 शिशु प्रसव के पहले और उसके बाद की कुछ अवधि में महिलाओं के नियोजन को विनियमित करने के उद्देश्य से बनाया गया है। इस अधिनियम का क्षेत्र विस्तार जम्मू और कश्मीर को छोड़कर शेष सम्पूर्ण भारत में है। मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 खानों और ऐसे अन्य प्रतिष्ठानों में जहाँ लोग अश्वारोहण प्रदर्शन अथवा नटीय कलाबाजी और ऐसे अन्य प्रदर्शनों के सम्बन्ध में नियोजित किये गये हैं, केन्द्र सरकार द्वारा जारी शासकीय गजट में अधिसूचित तिथि से प्रभावी होगा। इसी प्रकार राज्य के अधिष्ठानों में उस तिथि से प्रभावी माना जायेगा जो राज्य सरकार शासकीय गजट द्वारा अधिसूचित करे।

उच्चतम न्यायालय ने अपने एक विनिश्चय बी० शाह बनाम श्रम न्यायालय कोयम्बटूर में इस अधिनियम को सामाजिक न्याय पर आधारित एक महत्वपूर्ण अधिनियम बताया है। विनिश्चय के अनुसार कतिपय परिस्थितियों में महिलाओं को पुरुषों से भिन्न समझा जाना तथा उन्हें सुविधाएँ प्रदान करना अपने आप में विभेदकारी तो लगता है, लेकिन महिलाओं में प्राकृतिक

कारणवश यह क्षम्य और वांछनीय भी लगता है। प्रसव के समय उसके पूर्व तथा पश्चात् महिलाओं से काम लेना इस कारण अनुचित प्रतीत होता है क्योंकि उनको उस समय स्वास्थ्य लाभ करने की आवश्यकता पड़ती है। मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 महिला कर्मकारों को सामाजिक न्याय प्रदान करने के उद्देश्य से बनाया गया है। अतः इस कारण अधिनियम की व्याख्या करने में न्यायालय अधिक उदारवादी नियम अपनायेंगे जिससे न केवल महिला कर्मकारों का भरण-पोषण हो सके, वरन् वे अपनी क्षीण शक्ति को पुनः प्राप्त कर सकें, शिशुओं का ठीक तरह से पालन-पोषण हो सके तथा अपनी पूर्व कार्यक्षमता को बनाये रखने में समर्थ हो सकें।

मातृत्व हित लाभ योजनाओं का मुख्य उद्देश्य एक महिला कर्मकार को उसे प्रसव के 6 सप्ताह पूर्व व 6 सप्ताह बाद में अपने कार्य से अलग रहते हुए समर्थ बनाना है ताकि उसकी आय को सुरक्षा प्रदान की जा सके। अधिनियम के अन्य उद्देश्यों में गर्भवती महिला की उचित चिकित्सा व देखभाल को सुनिश्चित किया जाना है, प्रसव के पूर्व तथा पश्चात् की अवधियों के दौरान उसकी बर्खास्तगी को प्रतिषेधित करना है और उसके बालक को स्तनपान के समर्थ बनाना है। मातृत्व हित लाभ की समस्यायें रुग्णता लाभ की समस्याओं के समान ही हैं।

16.3 अधिनियम का प्रवर्तन

अधिनियम की धारा 2 (1) के अंतर्गत अधिनियम के प्रवर्तन के सम्बन्ध में निम्न उपबन्ध किये गये हैं।—

(क) यह अधिनियम प्रथमतः प्रत्येक ऐसे स्थापन को, जो कारखाना, खान या बागान है और जिसके अंतर्गत सरकार का ऐसा कोई स्थापन भी है तथा प्रत्येक ऐसे स्थापन को लागू होता है जिसमें लोगों को घुड़सवारी, नटीय कलाबाजी (बतवइंजपब) और अन्य करतबों के प्रदर्शन के लिए नियोजित किया जाता है,

(ख) एक राज्य में तत्समय प्रवृत्त दुकान या स्थापन जिसमें 10 या 10 से अधिक व्यक्ति नियोजित हैं अथवा गत 12 महीने में किसी भी दिन नियोजित थे।

परन्तु राज्य सरकार, केन्द्रीय सरकार का अनुमोदन प्राप्त करने के पश्चात् शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, घोषित कर सकेगी कि इस अधिनियम के सभी या कोई उपबन्ध औद्योगिक, वाणिज्यिक, कृषिक या अन्य प्रकार के किसी अन्य स्थापन या स्थापनों के वर्ग को भी लागू होंगे। राज्य सरकार को अपने उक्त आशय की दो मास की अन्यून सूचना देनी होगी।

(2) धारा 3—क और धारा 5—ख में अन्यथा उपबन्धित के सिवाय इस अभिनियम में अन्तर्विष्ट कोई भी बात किसी ऐसे कारखानों या अन्य स्थापन को लागू नहीं होगी जिन पर कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 के उपबन्ध तत्समय लागू होते हों।

दिल्ली नगर निगम बनाम महिला कर्मकार के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अवधारित किया है कि मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 के प्रावधान नियमित नियोजन में कार्यरत

महिलाओं के लिये ही नहीं बल्कि आकस्मिक आधार पर नियुक्त की गई महिलाओं, मस्टर रोल में उल्लिखित महिलाओं एवं दैनिक वेतनभोगी महिलाओं को मातृत्व अवकाश के लिये अधिकृत करती है। यह प्रावधान भारतीय संविधान के अनुच्छेद 39, 42 एवं 43 में उपबन्धित राज्य नीति के निदेशक सिद्धान्तों के अनुसरण में सुसंगत है।

16.4 परिभाषायें

इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो—

3 (क) 'समुचित सरकार' से अभिप्राय ऐसे स्थापन के सम्बन्ध में, जो खान या ऐसा स्थापन है जिसमें लोगों को घुड़सवारी, कलाबाजी और अन्य करतबों के प्रदर्शन के लिए नियोजित किया जाता है, केन्द्रीय सरकार और किसी अन्य स्थापन में राज्य सरकार से है।

3 (ख) 'शिशु शब्द' के अंतर्गत नवजात शिशु भी सम्मिलित होगा।

3 (ग) 'प्रसव' से अभिप्राय शिशु के जन्म से है,

3 (घ) 'नियोजक' से तात्पर्य निम्नलिखित से है—

(i) किसी ऐसे स्थापन के सम्बन्ध में जो सरकार के नियंत्रण के अधीन है, कर्मचारियों के पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए सरकार द्वारा नियुक्त व्यक्ति या प्राधिकारी, या जहाँ कोई भी व्यक्ति या प्राधिकारी इस प्रकार नियुक्त नहीं किया गया है, वहाँ का विभागाध्यक्ष है,

(ii) किसी स्थानीय प्राधिकारी के अधीन या स्थापन के सम्बन्ध में, कर्मचारियों के पर्यवेक्षण और नियंत्रण के लिए ऐसे प्राधिकारी द्वारा नियुक्त व्यक्ति या जहाँ कोई भी व्यक्ति ऐसे नियुक्त नहीं है, वहाँ उस स्थानीय प्राधिकारी का मुख्य कार्यकारी अधिकारी,

(iii) किसी अन्य स्थिति में, वह व्यक्ति या वह प्राधिकारी जो स्थापन के कार्यकलाप पर अंतिम नियंत्रण रखता है और जहाँ उक्त कार्यकलाप किसी अन्य व्यक्ति को सुपुर्द किया गया है, चाहे वह प्रबन्धक, प्रबन्ध निदेशक, प्रबन्ध-अभिकर्ता कहलाता है, या किसी अन्य नाम से पुकारा जाता है।

3 (ङ) स्थापन से अभिप्राय निम्नलिखित से है—

(i) कोई कारखाना,

(ii) कोई खान,

(iii) कोई बागान,

(iv) कोई ऐसा स्थापन जिसमें लोगों को घुड़सवारी, कलाबाजी और अन्य करतबों के प्रदर्शन के लिये नियोजित किया जाता है, या

(v) कोई ऐसा स्थापन जिसे इस अधिनियम के उपबन्ध धारा 2 (1) के अधीन लागू किये गये हैं।

3 (च) 'कारखाना' से तात्पर्य कारखाना अधिनियम, 1948 की धारा 2 के खण्ड (ड) में परिभाषित कारखाना से है।

3 (छ) 'निरीक्षक' से तात्पर्य धारा 14 के अधीन नियुक्त निरीक्षक से है।

3 (ज) 'मातृत्व लाभ' से अभिप्राय धारा 5 (1) में निर्दिष्ट संदाय अथवा भुगतान से है।

3 (ज क) गर्भधारण की चिकित्सीय समाप्ति से तात्पर्य ऐसी समाप्ति से है जो चिकित्सीय समाप्ति अधिनियम, 1971 के उपबन्धों के अधीन स्वीकृत है।

3 (झ) 'खान' से अभिप्राय खान अधिनियम, 1952 की धारा 2 (ज) में परिभाषित खान से हैं।

3 (ञ) 'गर्भपात' से तात्पर्य गर्भावस्था के छब्बीसवें सप्ताह के पूर्व या दौरान की किसी अवधि में सगर्भ गर्भाशय की अन्तर्वस्तुओं के निष्कासन से है, किन्तु इसके अंतर्गत ऐसा गर्भपात या भ्रूणपात नहीं आता है जिसका कारित किया जाना भारतीय दण्ड संहिता के अधीन दण्डनीय अपराध घोषित किया गया है।

3 (ट) 'बागान' से तात्पर्य बागान श्रम अधिनियम, 1951 की धारा 2 (घ) में परिभाषित बागान से है।

3 (ठ) 'विहित' से अभिप्राय इस अधिनियम के अधीन बनाये गये नियमों द्वारा विहित से है।

3 (ड) 'राज्य सरकार' से तात्पर्य किसी संघ राज्यक्षेत्र के सम्बन्ध में उसके प्रशासन से है।

3 (ख) 'मजदूरी' से अभिप्राय उन सब पारिश्रमिकों से है जो किसी महिला को नगदी में किया गया था यदि नियोजक की संविदा के अभिव्यक्त या विवक्षित निर्बन्धनों की पूर्ति हो गई तो देय होता और इसके अंतर्गत निम्नलिखित भी आते हैं—

(1) ऐसे नकद भत्ते जिनके अंतर्गत महँगाई पत्ता और मकान भाड़ा भत्ता भी सम्मिलित है, जिनकी कोई महिला तत्समय हकदार हो।

(2) प्रोत्साहन बोनस तथा

(3) खाद्याओं या अन्य वस्तुओं के रियायती आपूर्ति का धनमूल्य किन्तु मजदूरी की परिभाषा में निम्नलिखित सम्मिलित नहीं किये गये हैं—

(i) प्रोत्साहन बोनस से भिन्न कोई अन्य प्रकार का बोनस,

(ii) अतिकाल उपार्जन और जुर्मानों के लिए की गई कोई कटौती या उसका भुगतान,

(iii) किसी पेंशन निधि या भविष्य निधि में या उस महिला को प्रसुविधा के लिए तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन नियोजक द्वारा देय कोई अंशदान, तथा

(iv) सेवा से समाप्ति पर देय उपदान

मजदूरी केवल मात्र संविदात्मक मजदूरी तक ही सीमित नहीं है, बल्कि उसमें सभी प्रकार के पारिश्रमिक सम्मिलित होंगे, यथा नकद भत्ता, प्रेरणा बोनस, अनाज सम्बन्धी भत्ता।

3 (ण) महिला से अभिप्राय किसी स्थापन में मजदूरी पर नियोजित महिला से है चाहे वह सीधे नियोजित हो या किसी अभिकरण के माध्यम से।

16.5 मातृत्व लाभ अधिकार, दायित्व, शास्तियाँ एवं विभिन्न उपबन्ध

कतिपय अवधियों के दौरान महिलाओं का नियोजन था उनके द्वारा काम का किया जाना प्रतिषेधित—अधिनियम की धारा 4 में इस सम्बन्ध में निम्न उपबन्ध किये गये हैं—

- (1) कोई भी नियोजक किसी महिला को उसके प्रसव या उसके गर्भपात अथवा गर्भधारण की चिकित्सकीय समाप्ति के दिन से लेकर पश्चात्पूर्ति छह सप्ताह के दौरान किसी स्थापन में जानते हुए नियोजित न करेगा।
- (2) कोई भी महिला अपने प्रसव या अपने गर्भपात अथवा गर्भधारण की चिकित्सकीय समाप्ति के दिन से लेकर पश्चात्पूर्ति छह सप्ताह के दौरान किसी स्थापन में काम नहीं करेगी।
- (3) धारा 6 के उपबन्धों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना किसी भी गर्भवती महिला से इस निमित्त उसके द्वारा आवेदन किये जाने पर, धारा 4 (4) में निर्दिष्ट अवधि के दौरान उसके नियोजक द्वारा कोई ऐसा काम करने की अपेक्षा नहीं की जायेगी जो कठिन प्रकृति का हो या जिसमें दीर्घकाल तक खड़ा रहना आवश्यक हो या जिससे उसके गर्भवतित्व से या भ्रूण के सामान्य विकास में किसी भी प्रकार का विघ्न होने की सम्भावना हो या जिससे उसका गर्भपात कारित होना या अन्यथा उसके स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की सम्भावना हो।
- (4) धारा 4 (3) में निर्दिष्ट अवधि निम्नलिखित होगी—
 - (क) उसके प्रत्याशित प्रसव की तिथि के पूर्व के छह सप्ताह की अवधि से पूर्ववर्ती एक मास की अवधि।
 - (ख) उक्त छह सप्ताह की अवधि के दौरान की कोई अवधि जिसके लिए वह गर्भवती महिला अनुपस्थिति के अवकाश का उपभोग धारा 6 के अधीन नहीं करती।

अधिनियम की धारा 4 के उपर्युक्त प्रावधानों का सारतत्त्व निम्न प्रकार है—

उद्योग में नियोजित प्रत्येक महिला कर्मकार को प्रसव तथा गर्भपात के लिए सब मिलाकर 12 सप्ताह का विश्राम पाने का विधिक अधिकार प्राप्त है। इसमें नियोजक का दायित्व भी जुड़ा हुआ है। इस अधिकार को प्रदान करना नियोजक के लिए बाध्यकारी है क्योंकि यह प्रावधान आदेशात्मक है। नियोजक द्वारा अधिकारों को प्रदान न करने पर उसे दोष सिद्ध किया जा सकता है। कोई भी नियोजक जानबूझ कर ऐसी महिला को नियोजित नहीं करेगा जिसके 6 सप्ताह के अन्दर ही बालक को जन्म देने की सम्भावना है। लेकिन अधिनियम में महिला को नियोजित करने के दायित्व का उल्लेख नहीं मिलता और ऐसी महिला रोजी-रोटी की चिन्ता में इस तथ्य को छुपाकर काम पा लेती है।

दूसरा अधिकार यह है कि प्रसव के लिए 6 सप्ताह की छुट्टी पा जाने के एक माह पूर्व यदि वह स्वामी से लिखित आवेदन प्रस्तुत करती है कि उससे अधिक कार्य न लिया जाय जिससे उसे या उसके बच्चे पर कुप्रभाव का डर या स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़े, तो नियोजक उस आवेदन पर कठिन कार्य न देने के लिये बाधित है।

मातृत्व लाभ के आकलन विधि पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि सप्ताह में बिना मजदूरी वाली छुट्टियों को भी सम्मिलित किया जायेगा। 6 सप्ताह की अवधि में, आने वाले रविवार तथा अन्य अवैतनिक अवकाश सम्मिलित माने जायेंगे। टाटा टी लि० बनाम बागानों के निरीक्षक के मामले में केरल उच्च न्यायालय ने वह अभिनिर्णय प्रदान किया है कि मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 की धारा 4 की उपधारा (1) एवं (2) में वर्णित अवधि के दौरान, नियोजक राष्ट्रीय और त्योहार अवकाश अधिनियम की धारा 4-क के अधीन अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुये महिला कर्मचारी को अधिनियम की धारा 3 के अन्तर्गत राष्ट्रीय और त्योहार अवकाशों के दिन आने और काम करने को बाध्य नहीं कर सकता है। इस सन्दर्भ में राष्ट्रीय और त्योहार अवकाश अधिनियम के अन्तर्गत कर्मचारियों द्वारा प्रस्तुत मजदूरी प्राप्त करने का दावा मान्य नहीं होगा।

16.6 मातृत्व लाभ के भुगतान के लिए अधिकार

धारा 5 (1) के अनुसार इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक महिला अपने प्रसव के दिन सहित उस दिन से लेकर पूर्व अपनी वास्तविक अनुपस्थिति की कालावधि के लिए और उस दिन से लेकर पश्चात्पूर्ति छह सप्ताह के लिए औसत दैनिक मजदूरी की दर पर मातृत्व लाभ के भुगतान की हकदार होगी और उसका नियोजक उनके भुगतान के लिए दायी होगा।

स्पष्टीकरण धारा 5 (1) में उपबन्धित मातृत्व लाभ के प्रयोजन के लिए औसत दैनिक मजदूरी का अभिप्राय उस तिथि के, जिससे वह महिला प्रसूति के कारण अनुपस्थित होती है, तुरन्त प्रारम्भ होने के पूर्ववर्ती तीन कलेण्डर मास की अवधि के दौरान के उन दिनों के लिए जिन दिनों उसने काम किया है उसको देय मजदूरी का औसत या प्रतिदिन दस रुपये, जो भी अधिक हो, से है और वह उसे देय मानी जायेगी।

धारा 5 (2) के अनुसार कोई भी महिला मातृत्व लाभ को तब तक हकदार न होगी जब तक उसने अपने प्रत्याशित प्रसव की तिथि से पूर्ववर्ती बारह मासों में 80 दिन से अन्यून दिन की कालावधिपर्यन्त उस नियोजक के जिससे लाभ को वह दावा करती है किसी स्थापन में वस्तुतः काम न किया हो—परन्तु पूर्वोक्त 80 दिन की अहंता अवधि उस महिला को लागू न होगी जिसने असम राज्य में आप्रवास किया हो और आप्रवास के समय गर्भवती रही हो।

स्पष्टीकरण धारा 5 (2) के अधीन उन दिनों को जिन दिनों महिला ने स्थापन में वस्तुतः काम किया,—संगणना करने के प्रयोजनार्थ उन दिनों को गणना में लिया जायेगा जिन दिनों उसके प्रसव की तिथि से लेकर पूर्ववर्ती बारह मास की अवधि के दौरान उसकी कामबन्दी की गई हो अथवा वह सवैतनिक अवकाश पर रही हो।

(3) वह अधिकतम अवधि, जिसके लिए कोई महिला मातृत्व लाभ की हकदार होगी, बारह सप्ताह होगी, अर्थात् उसके प्रसव के दिन सहित उस दिन तक के छह सप्ताह की और उस दिन से लेकर पश्चात्पूर्वी छह सप्ताह तक की, परन्तु जहाँ किसी महिला की इस अवधि के दौरान मृत्यु हो जाये, वहाँ प्रसूति प्रसुविधा उसको मृत्यु के दिन तक के लिए ही, देय होगी।

परन्तु जहाँ कोई महिला शिशु को जन्म देकर अपने प्रसव के दौरान या अपने प्रसव की तिथि से लेकर पश्चात् छह सप्ताह की कालावधि के दौरान उन दोनों स्थितियों में से किसी भी स्थिति में उस शिशु को छोड़कर मर जाये, वहाँ नियोजक उसके प्रसव के दिन से लेकर पश्चात्पूर्वी छह सप्ताह की सम्पूर्ण कालावधि के लिए किन्तु यदि शिशु भी उक्त कालावधि के दौरान मर जाय तो शिशु को मृत्यु के दिन तक के दिनों के लिए, जिसमें वह दिन भी सम्मिलित होगा, मातृत्व लाभ प्रदान करने के दायित्वाधीन होगा।

यदि नियोजक प्रसव करने वाली महिला को मृत्यु के बाद देय अदत्त मातृत्व लाभ उसके द्वारा नाम निर्देशित व्यक्ति या उसके विधिक उत्तराधिकारी को नहीं प्रदान करता है तो महिला को मृत्यु का मातृत्व लाभ स्वयमेव अपने पास रखने का कोई बहाना नहीं बनाया जा सकता। यदि उस महिला की प्रसव—कार्य के पूर्व ही मृत्यु हो जाती है तो नियोजक द्वारा उसकी मृत्यु के दिन तक का मातृत्व लाभ देने का उसका दायित्व है। यदि महिला की मृत्यु बालक के जन्म देने के बाद हो जाती है और बालक जीवित रहता है तो प्रसव के 6 सप्ताह तक का मातृत्व लाभ देय होगा। लेकिन यदि जच्चा बच्चा दोनों की ही मृत्यु हो जाती है तो उनके जीवित रहने के अंतिम दिन तक का लाभ दिया जायेगा। यदि माता को मृत्यु के समय नवजात शिशु जीवित है और माँ के मरने के बाद मरता है तो जितने दिन वह जीवित रहा उस समय तक का मातृत्व लाभ उसे देय होगा।

160 दिन की अर्हता अवधि में किसी महिला कर्मकार द्वारा किया गया आधा दिन का कार्य सम्मिलित किया जा सकेगा अथवा नहीं यह प्रश्न राम बहादुर ठाकुर प्राइवेट लिमिटेड बनाम मुख्य बागान निरीक्षक के विनिश्चय में केरल उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया। न्यायालय ने अपने विनिश्चय में अभिनिर्णीत किया है कि इस अधिनियम की धारा 5 (2) के स्पष्टीकरण के अनुसार 160 दिवस को अर्हता अवधि के विचारण में किसी महिला कर्मकार को जबरी छुट्टी को अवधि सम्मिलित की जा सकेगी। जबरी छुट्टी की अवधि के दौरान किसी महिला कर्मचारी से यह अपेक्षा नहीं की जा सकती है कि उसने स्थापन में वास्तविक रूप से

कार्य किया है। एतदर्थ 160 दिन को अर्हता अवधि को पूर्ववर्ती शर्त मातृत्व के दाने के लिए आवश्यक शर्त नहीं है। ज्ञातव्य है कि मातृत्व लाभ (संशोधन) अधिनियम, 1988 के संशोधन द्वारा 160 दिवस की अवधि को कम करके केवल मात्र 80 दिन कर दिया गया है। केरल उच्च न्यायालय का यह निर्णय संशोधन से पूर्व की स्थिति पर आधारित है।

16.7 कतिपय परिस्थितियों में मातृत्व लाभ का बना रहना

धारा 5—क के अनुसार, इस अधिनियम के अधीन मातृत्व लाभ पाने की हकदार प्रत्येक महिला, उस कारखाने या अन्य स्थापन में जिसमें वह नियोजित है, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 के लागू होते हुए भी, तब तक पूर्ववत् हकदार बनी रहेगी, जब तक वह उस अधिनियम की धारा 50 के अधीन मातृत्व लाभ का दावा प्रस्तुत करने के लिए योग्य न हो जाये।

16.8 कतिपय स्थितियों में मातृत्व लाभ का भुगतान

अधिनियम की धारा 5—ख के अनुसार

- (क) प्रत्येक महिला जो किसी ऐसे कारखाने अथवा अन्य स्थापन में नियोजित है जिसे कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948 के उपबन्ध लागू होते हैं,
- (ख) जिसकी मजदूरी अधिसमय काम के लिए पारिश्रमिक के सिवाय एक माह के लिए उस अधिनियम की धारा 2 (9) (ख) में निर्दिष्ट राशि से अधिक है, और
- (ग) जो धारा 5 (2) में निर्दिष्ट शर्तों की पूर्ति करती है, इस अधिनियम के अधीन मातृत्व लाभ का भुगतान प्राप्त करने की हकदार होगी।

16.9 मातृत्व लाभ के दावे की सूचना और उसकी अदायगी

अधिनियम की धारा 6 में मातृत्व लाभ के दावे की सूचना और उसकी अदायगी सम्बन्धी उपबन्ध किये गये हैं जो निम्न प्रकार हैं—

- (1) किसी स्थापन में नियोजित और इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन मातृत्व लाभ की हकदार महिला अपने नियोजक की ऐसे प्ररूप में, जो विहित किया जाये, यह कथन करते हुए लिखित सूचना दे सकेगी कि उसकी मातृत्व लाभ और अन्य कोई राशि, जिसकी वह इस अधिनियम के अधीन हकदार हो, उसे या उस व्यक्ति को, जिसे वह सूचना में नामनिर्देशित करे, प्रदान की जाये और यह कि वह उस अवधि के दौरान जिसके लिए वह मातृत्व लाभ प्राप्त करती है किसी अन्य स्थापना में कार्य नहीं करेगी।
- (2) ऐसी महिला की स्थिति में जो गर्भवती है ऐसी सूचना में वह तिथि कथित होगी जिससे वह काम से अनुपस्थित रहेगी और वह तिथि उसके प्रत्याशित प्रसव की तिथि से छह सप्ताह के पूर्वतर को नहीं होगी।

(3) कोई महिला जिसने तब सूचना न दी हो जब वह गर्भवती थी, प्रसव के पश्चात् यथासम्भव शीघ्र ऐसी सूचना प्रेषित कर सकेगी।

(4) उस सूचना की प्राप्ति पर नियोजक उस महिला को यह अनुमति देगा कि वह अपने प्रसव के

दिन के पश्चात् छह सप्ताह की समाप्ति तक स्थापन से अनुपस्थित रहे अर्थात् वह छह सप्ताह तक काम नहीं करेगी। (5) किसी महिला के प्रत्याशित प्रसव की तिथि की पूर्ववर्ती अवधि के लिए मातृत्व लाभ की राशि, यह साक्ष्य पेश करने पर कि वह महिला गर्भवती है, उस महिला को नियोजक द्वारा अग्रिम भुगतान कर दिया जायेगा और पश्चात्पूर्वी कालावधि के लिये देय धनराशि इस बात के साक्ष्य पेश करने पर कि उस महिला ने शिशु को जन्म दिया है, 48 घण्टों के अन्दर उस महिला को नियोजक द्वारा दे दी जायेगी।

(6) धारा 6 के अधीन सूचना न दे पाना किसी महिला को इस अधिनियम के अधीन मातृत्व लाभ या किसी अन्य राशि के हक से वंचित नहीं करेगा, यदि वह ऐसी प्रसुविधा या राशि के लिए अन्यथा प्रकार से हकदार हो। ऐसे किसी मामले में निरीक्षक या तो स्वप्रेरणा से या उसको उस महिला द्वारा आवेदन प्रस्तुत किये जाने पर ऐसी प्रसुविधा या राशि का भुगतान ऐसी अवधि के अन्दर करने का आदेश दे सकता है जो उस आदेश में निर्दिष्ट किया गया हो।

किसी महिला कर्मकार की मृत्यु की स्थिति में मातृत्व लाभ का भुगतान
अधिनियम की धारा 7 के अनुसार यदि इस अधिनियम के अधीन मातृत्व लाभ या अन्य किसी राशि की हकदार कोई महिला मातृत्व लाभ या राशि को प्राप्त करने से पूर्व मर जाए या जहाँ नियोजक धारा 5 (3) के द्वितीय परन्तुक के अधीन मातृत्व लाभ देने का दायी हो वहाँ नियोजक ऐसा लाभ या राशि धारा 6 के अधीन दी गई सूचना में महिला द्वारा नाम निर्देशित व्यक्ति को, और उस स्थिति में जब कि कोई ऐसा नाम निर्देशिनी न हो उसके विधिक प्रतिनिधि को प्रदान करेगा।

चिकित्सकीय बोनस का भुगतान—अधिनियम की धारा 8 के अनुसार यदि नियोजक द्वारा प्रसव हेतु उचित व्यवस्था और प्रसवोत्तर देखरेख का कोई भी प्रबन्ध निःशुल्क न किया गया हो तो इस अधिनियम के अधीन मातृत्व लाभ की हकदार प्रत्येक महिला अपने नियोजक से 250 रुपये का चिकित्सकीय बोनस प्राप्त करने की हकदार होगी।

गर्भपात इत्यादि की स्थिति में अवकाश— धारा 9 के अनुसार गर्भपात व गर्भधारण की चिकित्सकीय समाप्ति की स्थिति में कोई महिला, ऐसा साक्ष्य पेश करने पर जैसा विहित

किया जाये, अपने गर्भपात के दिन से लेकर पश्चात्पूर्वी छह सप्ताह की अवधि के लिए मातृत्व लाभ की दर पर मजदूरी सहित अवकाश प्राप्त करने की हकदार होगी।

मैनेजमेंट ऑफ कल्लायर एस्टेट, जयश्री टी एण्ड इण्डस्ट्रीज लि० कोयम्बटूर बनाम चीफ इन्स्पेक्टर ऑफ प्लान्टेशन, मद्रास एवं अन्य के मामले के तत्सम्बन्धी तथ्य निम्न प्रकार हैं— एक महिला कर्मचारी को गर्भपात के फलस्वरूप हुई बीमारी के लिए अवकाश स्वीकृत करने के लिए चाय बागान के व्यवस्थापकों ने इस कारण इन्कार कर दिया कि गर्भपात से पूर्व की अवधि में उसने केवल 156 दिन काम किया था जबकि विधिक प्रावधानों के अनुसार उसे 160 दिन काम करना चाहिए था। बागान निरीक्षक के निर्णय के अनुसार मातृत्व लाभ अधिनियम की धारा 9 के अधीन गर्भपात की स्थिति में मजदूरी स्थिति अवकाश प्रदान करने के लिए वस्तुतः 160 दिन कार्य करना पूर्ववर्ती शर्त नहीं है।

मद्रास उच्च न्यायालय के समक्ष अपील करने पर न्यायालय ने अपना अभिमत प्रकट करते हुए यह अवधारणा अभिव्यक्त की है कि धारा 5 के अधीन मातृत्व लाभ का दावा करने पर 160 दिन की शर्त लागू होती है परन्तु धारा 9 के अधीन गर्भपात की स्थिति में 6 सप्ताह के अवकाश के आवेदन पर यह आवश्यक नहीं है कि गर्भपात की तिथि पर 12 माह पहले 160 दिन तक वास्तविक रूप से कार्य किया हो। न्यायालय ने अधिनियम की धारा 5 व 9 दोनों का पृथक दृष्टि से अवलोकन करने की बात कही है। 160 दिन कार्य करने की पूर्व शर्त धारा 5 के दावे पर लागू होगी, लेकिन धारा 9 के अधीन अवकाश के दावे में 160 दिन कार्य करने की पूर्ववर्ती शर्त लागू नहीं होगी।

ट्यूबेक्टोमी आपरेशन के लिये मजदूरी सहित अवकाश — ट्यूबेक्टोमी आपरेशन के लिये एक महिला कर्मकार द्वारा विहित प्रक्रिया के अधीन साक्ष्य प्रस्तुत करने पर उसे 2 माह का अवकाश स्वीकृत किया जा सकेगा तथा उसे मातृत्व लाभ की दर से मजदूरी सहित अवकाश प्राप्त हो सकेगा। यह प्रसुविधा महिला कर्मकार को कथित आपरेशन की तिथि से प्राप्त होगी।

गर्भावस्था, प्रसव, समय पूर्व शिशुजन्म या गर्भपात से उत्पन्न होने वाली रुग्णता के लिए अवकाश अधिनियम की धारा 10 के अनुसार गर्भावस्था, प्रसव, समयपूर्व शिशु जन्म या गर्भपात से पैदा होने वाली रुग्णता से पीड़ित महिला, ऐसा साक्ष्य प्रस्तुत करने पर जैसा विहित किया जाए, यथास्थिति, धारा 6 या 9 के अधीन उसे अनुज्ञात अनुपस्थिति अवधि के अतिरिक्त, प्रसूति प्रसुविधा की दर पर मजदूरी सहित अधिकतम एक मास की अवधि के अवकाश की हकदार होगी।

पोषणार्थ विराम — प्रत्येक प्रसूता महिला को जो प्रसव के पश्चात् काम पर वापस आती है, उस विश्रामार्थ अन्तराल के अतिरिक्त जो उसे प्रदत्त है अपने दैनिक काम की चर्चा में

विहित अवधि के दो विराम शिशु के पोषण के लिए तब तक प्राप्त होंगे, जब तक वह शिशु 15 माह की आयु पूरी न कर ले।

16.10 गर्भावस्था के कारण अनुपस्थिति के दौरान पदच्युति

अधिनियम की धारा 12 (1) के अनुसार जब कोई महिला काम पर से इस अधिनियम के उपबन्धों के अनुसार अनुपस्थित रहती है तब उसके नियोजक के लिए यह विधि-विरुद्ध होगा कि वह उसे ऐसी अनुपस्थिति के दौरान या कारण उम्मीदित या पदच्युत करे या उसे उन्मोचन या पदच्युति की सूचना ऐसे दिन दे कि वह सूचना ऐसी अनुपस्थिति के दौरान ही बीत जाये या उसको सेवा की शर्तों में से किसी में उसके लिए अहितकर परिवर्तन करे जिससे उसकी सेवा दशाओं पर कोई विपरीत प्रभाव डाले।

धारा (2) (क) के अनुसार किसी महिला का उसकी गर्भावस्था के दौरान किसी समय उन्मोचन या पदच्युति का प्रभाव उसे मातृत्व लाभ या चिकित्सीय बोनस से वंचित करना न होगा, यदि वह महिला ऐसे उन्मोचन या पदच्युति के अभाव में, धारा 8 में निर्दिष्ट प्रसूति प्रसूति या चिकित्सकीय बोनस की हकदार होगी रु परन्तु जहाँ कि पदच्युति किसी महिला के विहित घोर अतिचार के कारण हो, यहाँ नियोजक उस महिला को लिखित आदेश द्वारा मातृत्व लाभ या चिकित्सीय बोनस या दोनों से वंचित कर सकेगा।

धारा 12 (ख) के अनुसार मातृत्व लाभ या चिकित्सीय बोनस या दोनों से वंचित महिला उस तिथि से साठ दिन के भीतर जिसको ऐसे वंचित किये जाने का आदेश उसे संसूचित किया गया हो, ऐसे प्राधिकारी को, जो विहित किया जाए, अपील कर सकेगी और ऐसी अपील पर उस प्राधिकारी का यह विनिश्चय अंतिम होगा कि महिला को मातृत्व लाभ या चिकित्सीय बोनस या दोनों से वंचित किया जाना चाहिए था या नहीं।

(ग) धारा 12 (2) में अन्तर्विष्ट कोई भी बात धारा 12 (1) में अन्तर्विष्ट उपबन्धों पर प्रभाव न डालेगी।

अधिनियम की धारा 12 के विभिन्न उपबन्धों का सारांश यह है कि यदि कोई महिला अनुपस्थित रहती है तो उसके नियोजक द्वारा प्रसव के प्रयोजन हेतु अवकाश या अनुपस्थिति के दौरान उसे बर्खास्त करना अवैध होगा। ऐसी अनुपस्थिति को निष्कासन का आधार नहीं बनाया जा सकता है। सेवा मुक्ति या निष्कासन का नोटिस भी इस तरह से नहीं दिया जायेगा जो अवकाश के दिनों में ही लागू हो जाय। यह अवश्य विधिमान्य है कि गम्भीर दुराचरण के लिए सम्बन्धित महिला कर्मकार को नोटिस देकर निष्कासित किया जा सकता है लेकिन मौखिक नोटिस की कोई विधिक मान्यता नहीं है।

16.11 कतिपय मामलों में मजदूरी में से कटौती का न किया जाना

अधिनियम की धारा 13 के अनुसार अधिनियम के उपबन्धों के अधीन मातृत्व लाभ की हकदार महिला की सामान्य और असामान्य दैनिक मजदूरी में से केवल निम्नलिखित कारणों से कटौती नहीं की जा सकेगी—

(क) धारा 4 (3) में अन्तर्विष्ट उपबन्धों के आधार पर उसे समनुदिष्ट काम की प्रकृति, अथवा

(ख) धारा 11 के उपबन्धों के अधीन उसे शिशु के पोषण के लिए प्रदान किये गये विरामों।

निरीक्षकों की नियुक्ति अधिनियम की धारा 14 के अन्तर्गत निरीक्षकों की नियुक्ति सम्बन्धी उपबन्ध इस प्रकार किये गये हैं— समुचित सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा ऐसे प्राधिकारियों को, जिन्हें वह उचित समझे, अधिनियम के प्रयोजनों के लिए निरीक्षक नियुक्त कर सकेगी और अधिकारिता की वे स्थानीय सीमायें।

निश्चित कर सकेगी जिसके अन्तर्गत वे इस अधिनियम के अधीन अपने कृत्यों का प्रयोग कर सकेंगे।

निरीक्षकों की शक्तियाँ और कर्तव्य अधिनियम की धारा 15 के अन्तर्गत निरीक्षक, विहित निर्बन्धनों या शर्तों के अधीन रहते हुए निम्नलिखित समस्त शक्तियों का या उनमें से किसी का प्रयोग कर सकता है—

(क) ऐसे सहायकों के साथ, जो सरकार या किसी स्थानीय या अन्य लोक प्राधिकारी की सेवा के व्यक्ति हों, और जिन्हें वह उचित समझे, किसी भी ऐसे परिसर या स्थानों में जहाँ स्थापन में महिलाओं को नियोजित किया जाता है, या काम दिया जाता है, किन्हीं ऐसे रजिस्ट्रों, अभिलेखों और सूचनाओं को जो इस अधिनियम के द्वारा या अधीन रखे या प्रदर्शित किये जाने के लिए अपेक्षित हैं, परीक्षा करने के निमित्त सभी युक्तियुक्त समयों पर प्रवेश करना और उन्हें निरीक्षण के लिए पेश करने की अपेक्षा करना,

(ख) किसी ऐसे व्यक्ति की परीक्षा करना जिसे वह किसी ऐसे परिसर या स्थान में पाए और जिसके सम्बन्ध में उसके पास यह विश्वास करने सम्बन्धी युक्तियुक्त कारण हो कि वह उस स्थान में नियोजित है, परन्तु किसी भी व्यक्ति को धारा 15 के अधीन ऐसे प्रश्न का उत्तर देने के लिए या ऐसा साक्ष्य देने के लिए बाधित नहीं किया जायेगा जिसकी प्रवृत्ति स्वयं उसे अपराध में फँसाने की हो,

(ग) नियोजक से यह अपेक्षा करना कि वह नियोजित महिलाओं के नामों और पतों, उन्हें किये गये भुगतानों और इस अधिनियम के अधीन उनसे प्राप्त आवेदनों या सूचनाओं के सम्बन्ध में जानकारी दें, तथा

(घ) किन्हीं रजिस्ट्रारों और अभिलेखों या सूचनाओं या उनसे किन्हीं प्रभागों की प्रतिलिपियाँ लेना। निरीक्षकों का लोक सेवक होना— अधिनियम की धारा 16 के अनुसार इस अधिनियम के अधीन नियुक्त किया गया प्रत्येक निरीक्षक भारतीय दण्ड संहिता की धारा 21 के अर्थान्तर्गत लोक सेवक समझा जायेगा।

भुगतान सम्बन्धी निदेश देने की निरीक्षक की शक्ति—इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु निरीक्षक को धारा 17 के अन्तर्गत निम्नलिखित शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं—

- (1) इस बात का दावा करने वाली कोई भी महिला की प्रसुविधा या कोई अन्य राशि, जिसकी वह इस अधिनियम के अधीन हकदार है, अनुचित रूप से निर्धारित की गई है और इस बात का दावा करने वाला कोई भी व्यक्ति कि वह संदाय जो धारा 7 के अधीन देय है अनुचित रूप से निर्धारित किया गया है, निरीक्षक से शिकायत कर सकेगा।
- (2) निरीक्षक स्वप्रेरणा से या धारा 17 (1) में निर्दिष्ट शिकायत की प्राप्ति पर, जाँच कर सकता है। या करा सकता है और यदि उसका समाधान हो जाये कि भुगतान राशि सदीषतः निर्धारित की गई है, तो वह अपने आदेशों के अनुसार भुगतान किये जाने का निर्देश दे सकेगा।
- (3) निरीक्षक के धारा 17 (2) के अधीन के विनिश्चय से सम्बन्धित कोई भी व्यक्ति, उस तिथि से, जिसको ऐसा विनिश्चय ऐसे व्यक्ति को संसूचित किया जाये, तीस दिन के भीतर अपील निर्दिष्ट प्राधिकारी को कर सकता है।
- (4) जहाँ धारा 17 (3) के अधीन कोई अपील निर्दिष्ट प्राधिकारी को की गई हो वहाँ उसका, और जहाँ ऐसी अपील न की गई हो, वहाँ निरीक्षक का विनिश्चय अन्तिम रूप से मान्य होगा।
- (5) धारा 17 के अधीन देय रकम भू-राजस्व की बकाया की भाँति वसूल की जा सकती है।

बी० शाह बनाम श्रम न्यायालय के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह अवधारणा प्रस्तुत की है कि मातृत्व लाभ अधिनियम एक समाज कल्याण अधिनियम है एतदर्थ, अधिनियम के उपबन्धों को लाभकारी निर्वचन प्रदान किया जाना चाहिए ताकि महिला कर्मकार को न केवल अस्तित्व बनाये रखने की बात पर ही जोर दिया जाए बल्कि उसे अपनी खोई हुई शक्ति पुनः प्राप्त हो सके, वह अपने शिशु का पोषण कर सके एवं एक अच्छे कर्मकार के रूप में अपनी निपुणता को बनाये रख सके जो उसे शिशु जन्म के पूर्व में प्राप्त थी।

मातृत्व लाभ का अपवर्तन धारा 18 के अनुसार यदि कोई महिला, अपने नियोजक द्वारा धारा 6 के उपबन्धों के अधीन अनुपस्थित रहने के लिए स्वीकृति प्राप्त कर लेने के पश्चात् ऐसी प्राधिकृत अनुपस्थिति के दौरान किसी अवधि में किसी स्थापन में काम करेगी तो ऐसी अवधि के लिए मातृत्व लाभ का उसका दावा समाप्त हो जायेगा।

गम्भीर दुराचरण का दोषी पाई जाने वाली महिलाएँ मातृत्व लाभों को प्राप्त नहीं कर सकेंगी। गम्भीर दुराचरण का स्पष्टीकरण किया जाना आवश्यक है। प्रसव के बाद 6 सप्ताह के अवकाश के बीच यदि वह अन्यत्र काम करने जाती है तो यह मातृत्व लाभ से वंचित होगी, अन्यथा इस अधिनियम के मूल उद्देश्य पर ही कुठाराघात हो जायेगा। 6 सप्ताह के सदुपयोग का जो अवसर उसे प्रदान किया गया है, उसका दुरुपयोग वह अन्य काम करके करेगी। दूसरी बात यह है कि, गलत प्रमाण-पत्र पेश करके मातृत्व लाभ लेना भी अनैतिक तथा अवैधानिक कृत्य है। तीसरे जब कोई महिला कृत्रिम गर्भपात करती या कराती है, तो मातृत्व लाभ प्राप्त करने का उसका कोई अधिकार नहीं होगा।

अधिनियम और उसके अधीन बनाये गये नियमों की संक्षिप्ति का प्रदर्शित किया जाना इस अधिनियम और उसके अधीन बनाये गये नियमों के उपबन्धों की उस क्षेत्र को भाषा या भाषाओं में संक्षिप्ति स्थापन के प्रत्येक ऐसे भाग में जहाँ महिलाएँ नियोजित हों, किसी सहजदृश्य स्थान पर नियोजक द्वारा प्रदर्शित किया जायेगा।

16.12 संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कुमावत बालकृष्ण, औद्योगिक सन्नियम, साहित्य भवन पब्लिके"न्स, आगरा
2. सिंह इन्द्रजीत, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ पब्लिके"न्स, इलाहाबाद
3. मिश्र, सूर्य नारायण, श्रम एवं औद्योगिक विधि, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद
4. शर्मा गंगा सहाय, श्रमिक विधियाँ, सेन्द्रल लॉ एजेन्सी, इलाहाबाद

